गाँधी-भूषण

अलङ्कारों में

महात्मा गाँधी के चरित्र का चित्रण

संस्कृत साहित्य का इतिहास, स्वदेश-सतसई, मनुष्य-सतसई, कांग्रेस-
शतक, बाहुबलि-शतक, देश-दुर्दशा नाटक, हिंदी प्रबोध-
चंद्रोदय, ज्ञान-गंगा (हिंदी जातकमाला) दुर्गा-सप्तशती
(हिंदी पद्यानुवाद) डाहका फल (हिंदी 'ओथेलो'),
हिंदू-सभ्यता, हिमालय (महाकाव्य), दंडी-
यात्रा (खंडकाव्य) प्रभृति के लेखक
और बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद् द्वारा
वयोवृद्ध साहित्यिक सम्मान-
पुरस्कार (१९५७) से
सम्मानित

महेशचंद्र प्रसाद, एम० ए०

(संस्कृत तथा हिंदी), विद्याभूषण

द्वारा

प्रणीत और प्रकाशित

प्रथम संस्करण]   शक १८८२   [मूल्य ३)

पुस्तक मिलने का पता—

(१) महेशचंद्र प्रसाद, एम० ए०
कृष्ण-भवन, फ्रेजर रोड, पटना—१

(२) श्री मोतीलाल बनारसी दास
प्रकाशक और पुस्तक-विक्रेता
डा० बाँकीपुर, पटना-४

मुद्रक
श्री अजन्ता प्रेस, प्राइवेट (लिमिटेड)
पटना—४

समर्पण

प्रातः स्मरणीय, राष्ट्ररत्न डा० श्री राजेन्द्र प्रसाद जी
राष्ट्रपति, भारतीय संघ

महात्मन् !

आप विश्ववंद्य महात्मा गाँधी के एक अनन्य अनुयायी और उपासक हैं। उनके प्रति आपकी श्रद्धा एवं भक्ति अविरल और अवर्णनीय है। अतः मैं अपना यह "गाँधी-भूषण" आपको समर्पित कर अपने को अतिशय धन्य और गौरव से भूषित मानता हूँ।

पटना
स्वतंत्रता-दिवस, १९६०
भाद्र कृष्ण० ६, शाके १८८२

भवदीय
महेशचंद्र प्रसाद

सत्यमेव जयते

राष्ट्रपति का निजी सचिव,
राष्ट्रपति भवन
नई दिल्ली-४,

मार्च १४, १९६०

नं० ५३६३/६० फाल्गुन २४, १८८१ (शक)

प्रिय महेश बाबू,

राष्ट्रपतिजी फरवरी के दूसरे पखवाड़े में रोगग्रस्त हो गये थे, इसलिये जगजीवन राम जी ने आपका जो पत्र राष्ट्रपति जी के समक्ष रखने के लिये १४ फरवरी को भेजा था वह राष्ट्रपति जी के समक्ष बहुत दिनों तक नहीं रखा जा सका। राष्ट्रपति जी ने अब आपका पत्र देख लिया है। आपको वे अच्छी तरह जानते हैं। उन्होंने इस बात की स्वीकृति दी है कि आप अपना ग्रंथ, "गाँधी-भूषण", उन्हें समर्पित करें। उन्हें खेद है कि आपको इस सम्बन्ध में पत्र-व्यवहार काफी दिनों के लिये करना पड़ा।

आपका
विश्वनाथ वर्मा

श्री महेशचंद्र प्रसाद
कृष्ण भवन, फ्रेज़र रोड, पटना-१

निवेदन

उस अनंत को अनंत धन्यवाद जिसकी अनुकम्पा से आज मुझे इस पुस्तक के संबंध में कुछ निवेदन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। ता० १६ मई, १९५९ को अचानक मेरे मन में यह बात आई कि "शिवराज-भूषण" की तरह एक "गाँधी-भूषण" भी होता तो बड़ा अच्छा होता। पर अपने को इस काम के सर्वथा और पूर्णतया अयोग्य पाकर मैं हताश हो गया। फिर भी, एकहत्तर वर्ष की अवस्था में और घोर विपदों से हृदय विद्ध रहने पर भी, साहस बाँधकर, दूसरे ही दिन अर्थात् ता० १७ मई, १९५९ को मैंने इस कार्य का श्रीगणेश कर दिया।[१]

इस पुस्तक का उद्देश्य, जैसा कि ऊपर कहा गया है, महात्मा गाँधी के चरित्र को अलङ्कारों में चित्रित करना है। परंतु इस परम सीमित क्षेत्र के लिये, जहाँ श्रृंगार रसका पूर्णतः परिहार है, उदाहरण कहाँ पाऊँ ? महात्मा गाँधी के चरित्र का पद्यात्मक चित्रण मुझे कहीं देखने में नहीं

---

१. Men often hesitate to make a beginning, because they feel that the objective cannot be achieved in its entirety. This attitude of mind is precisely our greatest obstacle to progress, an obstacle that each man, if only he wills it, can clear away.

—Gandhi

Whatever talents a person may possess to amuse and instruct others, be they ever so inconsiderable, he is yet bound to exert them. —Shelley

आया जिससे इस संबंध में मैं कुछ भी सहायता ले सकूँ। इस प्रकार सर्वथा असमर्थ हो मुझे अपने ऊपर ही एकमात्र भरोसा करना पड़ा और समस्त अलङ्कारों के लिये, एक-एक कर, मुझे आप ही उदाहरण गढ़ने पड़े। इस विषय में स्व-रचित पुस्तकों से मुझे कुछ सहायता मिली। इसके अतिरिक्त कहीं संस्कृत और कहीं अंग्रेजी से अनुवाद के द्वारा भी काम लेना पड़ा। उदाहरण प्रचुर संख्या में हैं (जिनमें कुछ स्वांतः सुखाय भी हैं) और सभी खड़ी बोली में। इनमें वामन से विराट तक, 'बरवै' से 'विजया' तक के रूप आपको देखने को मिलेंगे। संस्कृत के भी छंद काफी हैं।

उदाहरण की प्रचुरता के कारण हैं, महात्मा गाँधी के भाँति-भाँति के भावों का शक्ति-भर चित्रण, उनके अनेकानेक अमूल्य उपदेशों का वर्णन, जिसमें लोक-हित हो और सामाजिक उत्थान हो सके। इससे विषय को हृदयङ्गम करने में भी बहुत सहायता मिलेगी। राजनीति के अतिरिक्त देश-भक्ति, नीति, धर्म, शिक्षा, सदाचार, अध्यात्म और समाज के विषय में भी जहाँ-तहाँ बहुतेरे उदाहरण दिये गये हैं। कारण यह है कि इनमें भी महात्मा जी के प्राण बराबर अँटके रहे। महात्मा जी श्रीमद्भगवद्गीता को अपनी माता से भी बढ़कर समझते थे। अतः इस सद्ग्रंथ से भी कुछ उदाहरण देना सर्वथा संगत समझा गया। 'काव्य प्रकाश' में आचार्य मम्मट काव्य का प्रयोजन लोक-व्यवहार का ज्ञान भी बतलाते हैं, जिसमें रावण के समान नहीं,

राम के सदृश आचरण हो—रामादिवद्वर्तितव्यं न रावणादिवत्। महात्मा गाँधी रामराज्य की स्थापना करना चाहते थे। अतः अलंकारों की ओट में उनके विचारों और सिद्धान्तों का यथासंभव और यथाशक्ति सन्निवेश किया गया है। अंग्रेजी के उद्धरण बहुतायत से इस विचार से दिये गये हैं कि जिसमें हिंदी से अनभिज्ञ पर अंग्रेजी के ज्ञाता भी कुछ लाभ उठा सकें।

*"बापू के क़दमों में" नामक अपने ग्रंथरत्न की प्रस्तावना में भारत के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद जी लिखते हैं—

"गंगा की पवित्र धारा अपने प्रवाह से बहती चली जाती है। बीच-बीच में श्रद्धालु लोग अपने हित के लिये कुछ न कुछ जल निकाल लेते हैं। जिसकी जितनी शक्ति होती है वह उतना जल ले सकता है।………यह गंगा बहती ही जाती है और जहाँ-जहाँ उसका प्रवाह पहुँच जाता है वहाँ की धरती उर्वरा और उपजाऊ हो जाती है। महात्मा गाँधी रूपी पावन गंगा से जिसकी जितनी शक्ति और जिसका जितना पुण्य रहा उसने उतना लिया। यदि मुझे कुछ पाने का बड़ा सौभाग्य नहीं हुआ तो यह मेरा ही दुर्भाग्य है।"

ग्रंथ के अंत में वे कहते हैं—

"हम धार्मिक ग्रंथों में और प्राचीन पुस्तकों में ऋषि, मुनि, फरिश्ता, देवता और अवतारों के गुणगान करते हैं।

---

*इस पर जनवरी, १९६० में बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् द्वारा लेखक को १,०००) का पुरस्कार दिया गया है।

अपने-अपने जीवन के लिये बहुत कुछ बातें पाते और सीखते हैं। जो कोई उनके बताये संयमों और क्रियाओं को जितना अधिक अपने जीवन में उतार सकता है, उसका जीवन उतना ही उन्नत और उज्ज्वल होता है। उस तरह की विभूतियाँ संसार में विरल देखी जाती हैं। इसलिये उनकी उन लिखी हुई और सुनी हुई बातों पर ही भरोसा करके अपने जीवन को ढालने का प्रयत्न करना पड़ता है। पर यदि किसी ऐसी विभूति से हमारा सम्पर्क हो जाय तो इससे बढ़कर दूसरा सौभाग्य मनुष्य के लिये नहीं हो सकता है। महात्मा गाँधी ऐसी ही विभूतियों में से थे जिनके दर्शन और सदेह सम्पर्क का सौभाग्य भारतवर्ष के करोड़ों आदमियों को प्राप्त हुआ था।.........आज हम अपने जीवन को तभी सार्थक बना सकते हैं जब हम अपने हृदय के हर कोने को टटोलकर देख लें कि उसमें कहीं गाँधीजी की शिक्षा के विरुद्ध कोई छिपी हुई कुवृत्ति तो नहीं काम कर रही है।"

ता० १४ अप्रैल, १९६० को प्रधान मंत्री, पंडित जवाहर लाल नेहरू ने, पटने में, अपने व्याख्यान में कहा था "यदि महात्मा गाँधी की बातों को भारतीय नहीं मानें तो भारत भारत नहीं रह जाता।"

श्रीयुत देशपाण्डे जी अपने ग्रंथ, "लाइट आव इण्डिया" में लिखते हैं—

[१]"गाँधीजी का जीवन "प्रकाश का एक जीता-जागता झरना था," "आध्यात्मिक शक्ति का बहता हुआ एक निर्झर" था। हम लोग जब-तब इसमें गोता लगा सकते हैं और अपनी शक्ति भर इसमें से प्रकाश और शक्ति ग्रहण कर सकते हैं और अपनी चारों ओर इसे प्रवाहित और प्रसारित कर सकते हैं।"

महात्मा गाँधी के निजी सचिव श्री प्यारेलाल जी, अपने ग्रंथ, "टुवर्ड्स न्यू होराइजन्स" में लिखते हैं—

[२]"हर बात में और हर अवसर पर गाँधीजी अपने सिद्धांत पर अटल रहे और उन्होंने लोगों को उपदेश दिया और उनसे इस बात की माँग की कि वे उनके आदर्शों पर ध्यान देंगे और उनका पालन करेंगे।"

वे पुनः लिखते हैं—

[३]"अपने देहांत के कुछ महीने पहले उन्होंने घोषित किया था कि मैं अपनी क़ब्र से भी अपने धर्म की घोषणा और

---

१ Gandhiji's life, also, was such 'a living fountain of light', 'a flowing spring of spiritual power'. We may have an occasional plunge in it, and carry away as much light and power as we could, and shed and spread it round about us.

—Light of India, p. 2

२ On every issue, and, on every occasion, he stood firm in his faith, admonishing and demanding (not least forcefully through the retiring pressure of his fasts) that his ideals should be heeded, and followed.

३ A few months before his death, he declared that he would continue to proclaim his faith, and speak to us, even from the grave.

—Towards New Horizons, pp. VII, XIV

आपलोगों से वार्त्तालाप करता रहूँगा।" अतः संभव है कि महात्माजी के सिद्धांतों का जो गुलदस्ता यहाँ उपस्थित किया गया है उससे उनकी आत्मा को कुछ तृप्ति हो।

एक बात और है। अन्त में मैंने लाटानुप्रास अलङ्कार की तरह "गाँधी अलङ्कार" नामक एक नवीन अलङ्कार को स्थान देने का दुस्साहस किया है। लाट वर्तमान् गुजरात का प्राचीन नाम है। आचार्य मम्मट अपने "काव्य प्रकाश" में कहते हैं, 'लाटजन वल्लभत्वाच्च लाटानुप्रासः' अर्थात् लाट देश के कवि-जनों का प्रिय अनुप्रास होने के कारण यह लाटानुप्रास कहा जाता है। तो साहित्यिकों द्वारा गुजराती गाँधी जी के 'गाँधी' शब्द का, निरुक्ति के बल पर, यह अर्थ लेकर कि जिस वर्णन में देश की स्वाधीनता की गंध हो वह गाँधी अलङ्कार है, गाँधी अलङ्कार की परिभाषा की जाय तो कदाचित् असंगत न होगा। पुनः चतुर जनों को प्रिय होने के कारण एक अनुप्रास-विशेष का नाम छेकानुप्रास रखा गया। फिर लोकोक्ति अलङ्कार में चतुरता को कुछ आगे बढ़ा-चढ़ाकर इसका नाम छेकोक्ति रखा गया। तो भारतीय साहित्यिकों को, भारत के परम प्रवीण प्रेमियों को प्रिय होने के कारण भारतीय-स्वाधीनता - गर्भित इस भाव-विशेष का नाम गाँधी-अलङ्कार रखने में श्रद्धा और भक्ति ही होगी।

जिस गाँधी ने भयानक, बीभत्स और करुण रसों का निराकरण कर देश में वीर, रौद्र, हास्य, अद्भुत और

शांत रसों का संचार किया, प्रेम-रूप प्रसाद गुण का प्रचार किया, भारत को सब अलङ्कारों का अलङ्कार स्वराज्य अलङ्कार से अलंकृत और झंकृत किया, लगभग आठ सौ वर्षों की पराधीनता से मुक्ति दी और, प्रधान मंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू के शब्दों में,* अपने अनंत सत्य के साथ, हमें सत्पथ का स्मरण कराता हुआ, हमें दोष से अलग करता हुआ और इस प्राचीन देश को स्वाधीनता तक पहुँचाता हुआ जो अनंत पुरुष हम लोगों के साथ था, ऐसे उस महापुरुष के नाम पर, उसके स्मारक रूप से, राष्ट्रभाषा साहित्य में यदि अलङ्कार रूप एक स्तंभ की स्थापना की जाय तो किसी देश-प्रिय, न्याय-प्रिय और कृतज्ञ साहित्यिक को कोई आपत्ति न होगी।

पुनः जहाँ अलङ्कारों की संख्या भेदोपभेदोंको लेकर कई सौ हैं वहाँ यदि इनमें एक और को स्थान दिया जाय तो कौन अनौचित्य होगा? ईसाकी सातवीं शताब्दी में दंडी ने 'आवृत्ति-दीपक', आठवीं शताब्दी में उद्भट ने 'दृष्टान्त', 'काव्यलिंग' और 'पुनरुक्तवदाभास' और वामन ने 'व्याजोक्ति' और 'वक्रोक्ति', नवमी शताब्दी में रुद्रट ने उनतीस नवीन

---

* The Eternal Man was with us, with his Eternal Truth, reminding us of the Right Path, drawing us from error, taking this ancient country to Freedom.

—Jawaharlal Nehru
(Light of India, p. 220)

अलङ्कार, ग्यारहवीं शताब्दी में महाराज भोज ने नौ नवीन अलङ्कार और मम्मट ने पाँच नवीन अलङ्कार, बारहवीं शताब्दी में रूय्यक ने पाँच नवीन अलङ्कार, तेरहवीं शताब्दी में जयदेव ने सोलह नवीन अलङ्कार और सतरहवीं शताब्दी में पंडितराज जगन्नाथ ने 'तिरस्कार' नामक एक नवीन अलङ्कार पहले के अलङ्कारों में और अधिक जोड़े। इसी शताब्दी में महाकवि केशव ने भी 'सुसिद्ध', 'प्रसिद्ध' और 'विपरीत' इन तीन नवीन अलङ्कारों को स्थान दिया जो महत्त्वपूर्ण नहीं[1]।

अब विचारने की बात है कि जब इस प्रकार ७४ अलङ्कार जोड़े जा सके और विशेषकर जब 'तिरस्कार' जैसा भाव भी आदर-पूर्वक अलङ्कार के आसनपर सु-शोभित हो सका तब आदर का भी आदर-पात्र देश की स्वाधीनता जैसे सुखद, विशद और महत्त्वपूर्ण भाव को अलङ्कार का आसन न देना, मेरी मंद बुद्धि में, न्याय का, औचित्य का तिरस्कार करना है।

श्री जान बरोज द्वारा महात्मा गाँधी के चित्रमय इतिहास के प्रकाशित करने के विषय में शांति-निकेतन के श्रीमान् रथीन्द्रनाथ टैगोर कहते हैं—

उस दिवंगत महापुरुष की स्मृति को कायम रखने के लिये कोई भी प्रस्ताव ऐसे प्रत्येक मनुष्य द्वारा पूर्णरूप से

१ सेठ श्री कन्हैयालाल पोद्दार कृत "काव्य कल्पद्रुम" के द्वितीय भाग "अलङ्कार मञ्जरी" की भूमिका, पृष्ठ १७—२३, ४१

समर्थन किये जाने के योग्य है जो उसकी स्मृति को प्रिय और पावन मानता है।[१]

मेरी अल्प मतिमें, गाँधीजी की स्मृति को चित्र में रक्षित रखने से अलङ्कार में रक्षित रखने में कहीं अधिक दृढ़ता, व्यापकता, स्थायित्व और महत्त्व हैं।

अस्तु, मेरी इस चेष्टा को आदर देना या इसका तिरस्कार करना अलंकार के आदरणीय आचार्यों का कार्य है। स्वीकृत होने पर उनके द्वारा इसमें किसी प्रकार का परिवर्तन अथवा संशोधन मेरे लिये सर्वथा शिरोधार्य होगा। अस्वीकृत होने पर मैं समझूँगा कि मैंने महात्मा गाँधी का गुण-गान किया, उनके प्राणों से भी बढ़कर प्रिय सिद्धान्तों का संकीर्तन किया।

अब रही चमत्कार की बात जो अलंकार का प्राण है। भारत के राष्ट्रकवि श्री मैथिली शरण गुप्तजी अपने महाकाव्य, 'साकेत' में लिखते हैं—

राम तुम्हारा चरित ही काव्य है।
कोई कवि बन जाय सहज संभाव्य है॥

---

१ I am glad to learn that you propose to bring out a pictorial history of Mahatma Gandhi. Any proposal for commemorating the Great Departed deserves the fullest support of any one, who holds his memory sacred and dear.

—Rathindranath Tagore
Shanti Niketan

यह बात बहुत कुछ महात्मा गाँधी के साथ लागू होती है। इस लिये उदाहरणों का महात्मा गाँधी के साथ संबद्ध हो जाना ही उनका चमत्कार है। गाँधी जी उपयोगी को ही सुन्दर समझते थे। एक स्थान पर उन्होंने कहा है—"सत्य और सुन्दर का पुजारी मैं सत्य और सुन्दर की आराधना में नियुक्त हूँ। सत्य और सुन्दर के प्रयोजन से मैं अपने जीवन की आत्माहुति देने को तैयार हूँ। क्षुधासे कातर लाखों-लाख नर-नारियों के लिये जो अत्यंत आवश्यक है उसीको मैं सुन्दर कहता हूँ। जीवन-धारण के लिये जो आवश्यक है वह यदि सबके ही आयत्व में आ जाय तो प्रत्येक मनुष्य के जीवन में छंद और सुषमा लौट आवेगी, इस बात पर मैं विश्वास रखता हूँ।"[१]

पुनः महात्मा सुक्रात के मतानुसार भी सुंदरता उपयोगिता में है। अंग्रेजी के महाकवि कीट्स का भी यही मत था।[२] इस प्रकार उपयोगिता को भी चमत्कार की चमक प्राप्त है।

---

१ रवीन्द्रनाथ टैगोर कृत "गाँधी-मीमांसा" ("कमल" अनूदित) पृ० ७६

२ Like Keats Gandhiji found Beauty in Truth, or through Truth. To him the useful was the beautiful. "We have been taught to believe", he said, "that what is beautiful need not be useful, and what is useful cannot be beautiful. I want to show that what is useful can, also, be beautiful.

To a true artist only that face is beautiful, which, apart from its exterior, shines with the Truth within the soul......Truth may manifest itself in forms, which may not be outwardly beautiful, at all. Socrates we,

इस सम्बन्ध में "कारक दीपक" नामक एक अत्यंत साधारण अलङ्कार का एक उदाहरण यहाँ उपस्थित करता हूँ जो इस पुस्तक में शायद सबसे रूखा-सूखा है और जो इस अलङ्कार के अन्य ग्रंथों में दिये गये—

"कहत नटत रीझत खिझत हिलत मिलत लजियात।
भरे भौन में करतु है नैनन ही सों बात॥"

प्रभृति शृंगारात्मक उदाहरणों के समीप तुच्छातितुच्छ है-

मीराबेन, रेजिनल्ड रेनल्ड्स अभिलाषी पहले हम जायँ।
रोका गाँधी ने उनको औ बोले उनसे यों समझाय॥

यह प्रकरण है डांडी यात्रा का। दो प्रतिष्ठित अंग्रेज, जिनमें एक महिला भी है, अपना देश इंगलैंड छोड़कर साबरमती आश्रम में आकर गाँधी जी के साथ रहने लगे और अपनी ही जाति के राज्य के घोर विरोधी होकर, महात्मा गाँधी के प्रभाव से प्रभावित होकर, उनके नितांत न्याय-संगत स्वतंत्रता-संग्राम में, यंत्रणाओं से जकड़ी डांडी-यात्रा के प्रथम जत्थे में ही प्रस्थान करने के लिये अभिलाषा प्रकट करते हैं। गाँधी जी उन्हें ऐसा करने से रोकते हैं। कारण, अंग्रेजों के, खासकर एक अंग्रेज महिला के भाग लेने से, अंग्रेज सरकार सर्वथा निस्संकोच भाव

---

are told, was the most truthful man of his time, and his features are said to have been the ugliest in Greece. —...But his outward form did not prevent Phidias from appreciating the Beauty of Truth in him.

—Gandhi

(Light of India, pp. 39, 187

से इस जत्थे पर ज़ोर-जुल्म नहीं ढाह सकेगी। अतः इन दोनों को वे हठ-पूर्वक हटा देते हैं और इस प्रकार जान-बूझ कर अपनी कुछ बनी हुई बात को भी अपने आप बिगाड़ डालते हैं। यहाँ तीन सुंदर भाव मौजूद हैं। एक तो उपर्युक्त दोनों अंग्रेजों की उत्कट न्याय-प्रियता का भाव, दूसरा गाँधीजी की शूरता का कोमल भाव और तीसरा युद्ध में भी गाँधीजी की अविचल धार्मिकता का भाव जो इस सिद्धांत को कि [१]प्रेम और युद्ध में सभी बातें जायज़ हैं ठुकरा देता है। महाभारत के युद्ध में जब भीष्म पितामह युद्ध के लिये आये तब पांडवों ने शिखंडी, एक हिजड़े को अपनी सेना के आगे कर दिया जिसमें उनके तीक्ष्ण बाणों से सेना की रक्षा हो! गांधीजी ने ठीक इसके विपरीत किया। अतः, मेरी अल्प बुद्धि में, उक्त तीनों ही भाव लौकिक नहीं पारलौकिक चमत्कार रखते हैं।

महाकवि मिल्टन की कविता के विषय में यह उक्ति है कि जितनी सुनने में आती है उससे वह अधिक अभिप्राय रखती है [२]। महात्मा गाँधी के संबंध में महाकवि रवीन्द्रनाथ कहते हैं—

"वे जिस भाषा में कह रहे हैं वह कानों से सुनने की नहीं है, वह प्राणों से सुनने की है।[३]"

---

१ Every thing is fair in love and war.

२ Where more is meant than meets the ear.

३ गांधी-मीमांसा, पृ० ५०

इस प्रसंग में पृष्ठ १८५ में दिये गये 'काव्यलिंग' अलङ्कार का उदाहरण (घ) कृपया देखिये।

प्रो० देवेन्द्रनाथ शर्मा, "विद्यार्थियों के दृष्टिकोण" से लिखी गई अपनी परम प्रशंसनीय पुस्तक "अलङ्कार-मुक्तावली" के आत्म-निवेदन (?) में लिखते हैं—

"मैंने बिहारी सतसई से सबसे अधिक सहायता ली है। ...भला 'शृंगार' निरपेक्ष 'अलङ्कार' भी कोई अलङ्कार है? उसका तो वास्तविक उपयोग 'शृंगार' ही में है।" (पृ० च, छ)

"भूषण-ग्रंथावली" के संपादक मिश्रबंधु महोदय इसकी भूमिका में लिखते हैं—

"हमारे भाषा साहित्य में वीर, रौद्र, तथा भयानक रसों का सर्वोच्च पद है, क्योंकि उत्कृष्ट हिंदी कविता इन्हीं रसों का अवलम्ब ले पृथ्वी पर अवतीर्ण हुई है। ...... शृंगार रस के वर्णन में उसी समय से अबतक हमारी कविता ऐसी कुछ उलझ पड़ी है कि उसका छुटकारा होना ही कठिन दिखाई देता है।.........हमारे इस प्रबंध के नायक भूषण महाराज ऐसे ही समय में उत्पन्न हुए थे, पर इन्हें ऐसे वर्णन पसंद न थे, अतः वे लिखते हैं—

ब्रह्म के आनन ते निकसेते अत्यंत पुनीत तिहूँ पुर मानी।
राम युधिष्ठिर के बरने बलमीकिहु व्यासके संग सोहानी॥
भूषण यों कलिके कविराजन राजन के गुन पाय नसानी।
पुन्य चरित्र सिवा सरजा-सर न्हाय पवित्र भई पुनि बानी॥

हर्ष की बात है कि जैसे इन्होंने शृंगार एवं अन्य अनुपयोगी विषयों-को लात मारकर वीर, रौद्र तथा भयानक रसों ही को प्रधानता देकर अन्य कवियों को सदुपदेश-सा दिया, वैसे ही इनका मान भी ऐसा ही हुआ, जैसा इनसे श्रेष्ठतर कवियों का भी कभी स्वप्न तक में न हुआ। बिहारी लाल जी सदैव कलियुग के दानियों की निंदा ही करते रहे। परंतु उन्होंने यह न विचार किया कि उन्हींके समकालीन भूषण कवि किस प्रकार की कविता करने से किस स्थान को पहुँच गये हैं।"

अब विज्ञ वाचक स्वयं विचार लें कि किस रस में कितना रस है, कितना तत्त्व और महत्त्व है।

सेठ श्री कन्हैया लाल पोद्दार, अपने अत्यंत अपूर्व ग्रंथ काव्य- कल्पद्रुम" के द्वितीय भाग, "अलङ्कार-मञ्जरी" के 'प्राक्कथन' में कहते हैं-

अलङ्कार विषय अत्यंत जटिल है। इस पर आचार्य मम्मट (जिनको विद्वद् समाज में सरस्वती के अवतार की प्रतिष्ठा उपलब्ध है) आदि ने भी अपनी लेखनी अत्यंत विचार और गंभीरता के साथ चलाई थी+......अलङ्कार का विषय अत्यंत जटिल एवं विवादास्पद होने के कारण अलङ्कार विषय का परिमार्जित और निर्दोष निरूपण किया जाना बड़ा ही दुःसाध्य व्यापार है।......अतएव इस ग्रंथ में अनिवार्य रूपसे अनेक त्रुटियों का होना स्वाभाविक है। (पृष्ठ क, ४८,४६)

पुनः आप कहते हैं—

(१) खेद है कि महाकवि केशव के प्रकाण्ड पाण्डित्य और उनकी प्रतिभा के अनुरूप अलङ्कारों का विवेचन 'कवि-प्रिया' में नहीं हो सका है। (पृ० ४१)

(२) 'कवि-प्रिया' में भी 'हेतु' अलङ्कार दण्डी के काव्यादर्श के मतानुसार लिखा है। किंतु संभवतः महाकवि केशव ने दण्डी के 'हेतु' का स्वरूप नहीं समझा। अतः वे उदाहरण देने में सफल नहीं हो सके हैं।.......कारण के अभाव से कार्य का होना तो विभावना अलङ्कार का विषय है। अतः वहाँ 'अभाव हेतु' नहीं। (पृ० ३५८-९)

(३) 'काव्य प्रकाश' में 'रघुवंश' के निम्नाशय वाले पद्य को—

'कहाँ अल्प मेरी मती कहाँ दिव्य रघुवंस,
सागर तरिबो उडुपसों चाहतु हौं मतिभ्रंस ॥"

निदर्शना के उदाहरण में दिया है। अप्पय्य दीक्षित 'कुवलयानंद' में इस पद्य में 'ललित' अलङ्कार मानते हैं। किंतु नागेश उद्योत टीका में इसमें 'निदर्शना' ही मानते हैं और 'कुवलयानंद' में उपर्युक्त 'सेतु बाँधिवो चहतु है अब तू उतरे बारि' यह उदाहरण जो 'ललित' अलङ्कार का दिया है उसमें भी उद्योतकार 'निदर्शना' मानकर 'ललित' को 'निदर्शना' के अन्तर्गत बताते हैं। (पृ० ३७१)

(४) 'भारती भूषण' में 'अनुज्ञा' अलङ्कार का—

"गुरु समाज भाइन्ह सहित रामराज पुर होउ,
अछत राम राजा अवध मरिय माँगि सब कोउ ॥"

यह उदाहरण दिया है। पर इस दोहे में अयोध्या की प्रजा द्वारा मरणरूप दोष की इच्छा नहीं की गई है किन्तु प्रजा द्वारा यह इच्छा की गई है कि हम लोगों के मरण-समय तक राम-राज्य ही रहे अर्थात् हमारे जीते जी अन्य राजा न होकर राम-राज्य चिरकाल तक स्थिर रहे। अतः यहाँ अनुज्ञा नहीं है। (पृ० ३८१)

(५) 'भाषा भूषण' में प्रतिषेध का—

"मोहन कर मुरली नहीं कछु एक बड़ी बलाय"।

यह उदाहरण दिया है। ऐसे उदाहरण प्रतिषेध के नहीं हो सकते हैं। इसमें मुरली का निषेध करके उसमें बलाय का आरोप किया है, अतः अपह्नुति है। (पृ० ४२०)

मिश्रबंधु जी "शिवराज-भूषण" की टिप्पणियों में लिखते हैं—

(१) ये दोनों ही उदाहरण (छं० नं० २४६, २५०) अशुद्ध हैं। विकल्प में संदेह ही रहना चाहिये, पर इन दोनों छंदों में अंत में संदेह हटाकर एक बात निश्चयात्मक कह दी गई है। कदाचित् अपने नायक की पूर्ण प्रशंसा ही के लिये भूषणजी ने अपने ठीक उदाहरण अंत में जान-बूझकर अशुद्ध कर दिये हों, पर यह अन्य प्रकार से भी संभव था। (पृ० ७३)

(२) भूषण का दूसरा उदाहरण तो ठीक है किंतु पहले में अभंग-सभंग का समावेश न तो लक्षण में है न उदाहरण में। (पृ० १०)

(३) भूषण जी का यह कामधेनु चित्रवाला छंद बिलकुल अच्छा नहीं। (पृ० १८७)

(४) संसृष्टि आपने नहीं कही है। जो संकर के उदाहरण दिये गये हैं वे बहुधा संसृष्टि के हैं। (पृ० १०८)

इस प्रकार जहाँ दिग्गजों की यह दशा है वहाँ एक अजकी क्या दशा हो सकती है कहने की आवश्यकता नहीं। संतोष यही है कि—

सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः।[१]

महात्मा गाँधी ने एक स्थान पर लिखा है, "प्रकृति ने हमें ऐसा बनाया है कि हम अपनी पीठों को देख नहीं सकते, उन्हें देखना दूसरों पर रख छोड़ा गया है। इस लिये बुद्धिमत्ता इसी में है कि दूसरे लोग जो कुछ देखते हैं हम उससे लाभ उठायें"।[२] बस, यही भावना रखकर मैं अदृश्य-द्रष्टा

---

१ श्रीमद्भगवद्गीता, अ० १८, श्लोक ४८

२ Nature has so made us that we do not see our backs; it is reserved for others to see them. Hence it is wise to profit by what they see.

—Gandhi

(Mohan-Mala by R. K. Prabhu—
March, 25)

विज्ञ वाचकों द्वारा अपने अदृश्य-दर्शन की, सतृष्ण दृष्टि से, बाट जोह रहा हूँ।

इस पुस्तक के प्रणयन में, अपनी रचनाओं को छोड़कर, जिन ग्रन्थों से मुझे सहायता मिली है उनके लेखकों के प्रति कृतज्ञता प्रकाश करने के लिये मेरे पास शब्द नहीं।

अंत में, अपने ज्येष्ठ भ्राता, पटना हाई कोर्ट के अवसर-प्राप्त ट्राँन्सलेटर, उर्दू के शायर और हिन्दी-रसिक पूज्यपाद श्री बिशुन प्रसाद जी का मैं परम ऋणी हूं। आपने, रुग्न रहते हुए भी, मेरी इस पुस्तक को आदि से अंत तक, पूरे मनोयोग के साथ, सुना और कितनी ही पुरानी बातें मुझे बतलाईं जिनपर मैंने उदाहरण खड़े किये।

पटना
स्वतन्त्रता-दिवस, १९६०
भाद्र कृष्ण० ६, शाके १८८२

विनीत
हेशचंद्र प्रसाद

सहायक ग्रंथों की नामावली

संस्कृत

१ काव्य प्रकाश—मम्मट भट्ट

२ वाल्मीकीय रामायण

३ ईशावास्योपनिषद्

४ श्रीमद्भगवद्गीता

५ श्रीमद्भागवत

६ मनुस्मृति

७ नीति शतक

८ शिशुपाल वध

हिन्दी

१ शिवराज भूषण—महाकवि भूषण (मिश्रबंधु संपादित)

२ काव्य-प्रभाकर—जगन्नाथ प्रसाद (भानु कवि)

३ अलङ्कार-मञ्जरी—सेठ कन्हैया लाल पोद्दार

४ अलङ्कार-मुक्तावली—देवेन्द्रनाथ शर्मा

५ हिंदी काव्य प्रकाश—डा० सत्यव्रत सिंह

६ बापू के क़दमों में—डा० राजेन्द्र प्रसाद

७ बापू के आशीर्वाद—आनद हिंगोरानी

८ गाँधी-मीमांसा – रवीन्द्रनाथ टैगोर ('कमल' अनूदित)

९ रामचरितमानस—तुलसीदास

स्व-रचित

१ दंडी-यात्रा
२ हिमालय
३ स्वदेश-सतसई
४ मनुष्य-सतसई
५ प्रबोध-चंद्रोदय नाटक (अनुवाद)
६ बाहुबलि-शतक

अँग्रेजी

१ Mahatma Vol. III—Tendulkar and Jhaveri
२ The Collected Works of Mahatma Gandhi Vol. I —The Government of India
३ Light of India—M. S. Deshpande
४ Towards New Horizons—Pyare Lal
५ A Gandhi Anthology—Valji Govindji Desai
६ Mohan-Mala—R. K. Prabhu
७ How India wrought for Freedom —Dr. Annie Besant
८ Religio Medici—Thomas Browne
९ History of English Literature—Long

Journals

१ The "Searchlight"
२ The "Indian Nation"

विषयानुक्रमणिका

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१६	अंतिम	जन-काव्य प्रकाश	श्रुतिः-काव्य प्रकाश
२६	१०	अध्यत्त	अध्यत्त
३३	अंतिम	काव्थ	काव्य
३४	४	अव	अब
४८	५	ढिग ईश्वर	भगवान
,,	६	प्रियवर	जान
६१	२१	रामका लंका यात्रा	रामकी लंका-यात्रा
११३	५	अकस	सकल
११४	३	को	के
१२८	७	ये	य
,,	१६	सखा	सीखा
१२६	५	की ही समुन्नति	उन्नति समुज्ज्वला
,,	६	दिया जोर······ आत्मोन्नति	जोड़ी शिक्षा में आत्मोन्नति की विमल कला
१३२	६	विशेष्त्र	विशेष्य
१३४	१५	चाहे	चाहें
१३६	३	नुचित	अनुचित
१४२	३	व्याजोक्ति	व्याजस्तुति
,,	१८	शाचरी	निशाचरी
१४३	१०	धिरें	घिरें
,,	१५	कतु	किंतु
१५७	६	यह सन्	यह ६ अगस्त, सन्
१५८	६	दुख	दुःख
१५६	१५	जागृहुः	जगृहुः
१६२	१७	अच ज	अचरज
,,	,,	कोने को	कोने-कोने

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१६४	४	शरदा	शारदा
१६५	३	का देव	कामदेव
१६६	२२	जनोनुराग	जनानुराग
१६०	३	राज	राज्य
१६३	१६	संनिधि	सन्निधि
१६५	१८	eool	cool
१६६	१८	सकेत्	संकेत
२००	५	बक्ति	उक्ति
२०५	५	प्रसंगिक	प्रासंगिक
२०६	६	शाके	शाक
२३२	७	रक्खा····आब	रक्खी छात्र जनों-की आब
२४१	५	(ङ) सत्य अरे	पृष्ठ १६२ में ६६ प्रौढ़ोक्ति के (घ) के नीचे
२४४	२३	वृर्णो	वृणे
२४६	१८	Foreigners ···Court	पृष्ठ २४७ में नोट २ के ऊपर
२६१	२०	अपनहुति	अपह्नुति
२६२	१०	सुनन	सुजन
२६५	१४	मी	की
२७२	१६	वज्रपत	वज्रपात
,,	२४	legs	head

श्री

गाँधी-भूषण

मंगलाचरण

अजित, अनादि, अनंत, अज, अमल, अमेय, उमेश !
अज्ञ, अगुण, अज्ञान को, दो प्रज्ञा परमेश ! ॥
जिसमें भुवन - अभिराम । सु-सत्य - अहिंसा-धाम ॥
गाँधी के गुण ललाम । गा सकूँ हे गुण-ग्राम ! ॥
उनके अलंकृत भाव । अलंकृत अमल स्वभाव ॥
अलंकृत चरित अनूप । को दूँ अलंकृत रूप ॥
संस्कृतके आचार्य अतुल, जिनकी निपुनाई ।
रही बालकी खाल खींचने सी चतुराई ॥
जिसकी वेबर[१] आदि विदेशी विद्वद्गण ने ।
परम प्रशंसा की, उनको मैं ध्याऊँ मनमें ॥
हिंदीको भूषण पहनाये विविध भाँति के ।
सरस काव्य रचना कर की अति वृद्धि कांतिमें ॥
आसन योग्य किया जग की भाषा-सुपाँति में ।
उन आचार्यों को नमूँ, लहूँ सुभग कांति मैं ॥

---

१. जर्मनीके प्रोफेसर वेबर अपने History of Indian Literature (p. 232) में लिखते हैं—

In the field of rhetoric and poetics the Hindu mind, so fertile in nice distinctions, has had free scope, and

यद्यपि है इसमें नहीं राम - चरितका गान।
राम - दास के चरितका इसमें प्रचुर बखान ॥
अधिक रामसे रामका दास, कही यह बात।
तुलसी ने श्रीमुख स्वयं, उत्तम औ अवदात ॥
देश - भक्त, उसपर परम विश्व - भक्त भरपूर।
अखिल जीव कल्याण में इनका जीवन चूर ॥
पृथ्वीराज - चरित्रका किया सु - चित्रण चंद।
जगमें जिसकी आजतक गूँज रही ध्वनि मंद्र ॥
भूषण ने शिवराजका वर्णन किया अमोल।
छत्रसालका लाल ने कीर्तन किया अतोल ॥
वे गुण - गायक थे परम अजी ! स्वयं गुण गेय।
रहे उच्चतम, श्रेष्ठतम, यह तम-रूप अगेय ॥
यद्यपि अवगुण - माल, भाव एक उरमें यही।
सफल य जीवन - जाल, करूँ महात्मा सुयश गा ॥
यद्पि असफल महान, चढ़नेमें एवरेस्ट के।
यत्न न निंद्य, अमान्य, पूज्य दृष्टि से जन लखें ॥

---

has put forth all its power, not seldom in an extremely subtle and ingenious fashion.

अर्थात् हिन्दू मस्तिष्कने, जो सूक्ष्म प्रभेद प्रदर्शन में अतीव उर्वर है, अलङ्कार शास्त्र एवं काव्य विज्ञानके क्षेत्रमें स्वच्छंद रूपसे विचरण किया है और अपनी सम्पूर्ण शक्ति प्रायः अत्यंत सूक्ष्म और चातुर्य-पूर्ण रीति से उसमें लगा दी है।

अलङ्कार

"काव्य प्रकाश" के प्रणेता आचार्य मम्मट के मतानुसार अलङ्कार काव्य के अंगभूत शब्द और अर्थ के शोभा-वर्द्धक धर्म हैं। जिस प्रकार हार आदि भूषण रमणीके अंगको चमत्कृत करते हैं उसी प्रकार अनुप्रास, उपमा प्रभृति अलङ्कार काव्य के अंग, शब्द और अर्थ को चमत्कृत करते हैं।[१] इस प्रकार अलङ्कार के दो भाग किये गये हैं—शब्दालङ्कार अर्थात् जहाँ अलङ्कार शब्दगत हो और अर्थालङ्कार अर्थात् जहाँ अलङ्कार अर्थगत हो।

शब्दालङ्कार

१. वक्रोक्ति

किसी के कहे हुए वाक्यमें दूसरे के द्वारा, श्लेष किंवा काकु से, अन्य अर्थ की कल्पना वक्रोक्ति अलङ्कार कहलाती है[२]। श्लेषका अर्थ है किसी शब्द या पद में एक से अधिक

---

१ उपकुर्वन्ति तं सन्तं येऽङ्गद्वारेण जातुचित्।
हारादिवदलङ्कारास्तेऽनुप्रासोपमादयः।

—काव्य प्रकाश ८।६७

२ यदुक्तमन्यथा वाक्यमन्यथाऽन्येन योज्यते।
श्लेषेण काक्वा वा ज्ञेया सा वक्रोक्तिस्तथा द्विधा॥

—काव्य प्रकाश ९।७८

अर्थों का होना और काकु का अर्थ है किसी दूसरे के द्वारा किसी दूसरे अर्थ की कल्पना। श्लेष वक्रोक्ति दो तरह की होती है—सभंग और अभंग।

सभंग श्लेप—

(क) महातमा आये यहाँ, नहीं महातम[१] काम।
हैं महातमा यह यहाँ, सादर करूँ प्रणाम॥

(ख) महा महातम[२] पूर्ण यह, क्या यह अमा-स्वरूप ?॥
महा महातम धारते, तव पुरुषोत्तम रूप॥

अभंगश्लेष—

(क) देंगे तुम्हें स्वराज हम, जब आवेगा काल।
तुम से बढ़कर काल कब आवेगा नरपाल ?॥

(ख) कहते निज को वज्र[३] तुम, श्वेत ज्योति आगार।
सचमुच ही हो वज्र[४] तुम, करो देश को छार॥

(ग) कहते हम तारक[५] महा, रखते अतिशय स्नेह।
सत्य, सत्य तारक[६] महा, रंच नहीं संदेह॥

(घ) कहते हम मोहन परम, मोहे सब संसार।
हो मोहन[७] तुम सत्य ही, मूर्च्छित देश अपार॥

(ङ) हाता[८] हैं हम दुःख के, सत्य कह रहे बात।
हाता[९] हो तुम दुःख के, संशय तनिक न तात !॥

---

१ अंधकार। २ माहात्म्य। ३ हीरा। ४ विद्युत्। ५ तारनेवाला। ६ तारकासुर। ७ व्याकुल करनेवाला; माया में डालने वाला; तांत्रिक प्रयोग। ८ हननकरनेवाले। ९ घेरा।

(च) हूँ गदहा, हर्गिज नहीं, हो तुम गुण के ग्राम।
हूं गदहा[1], पर कब किया रुज का काम तमाम ?॥

(छ) विद्यार्थीका तुम सदा करो मान सम्मान।
विद्यार्थी का कब भला हो सकता है मान ?॥

यहाँ दूसरा व्यक्ति 'विद्यार्थी' का अर्थ विद्याका निवारण करनेवाला समझकर इस प्रकार कहता है और इसीमें व्यंग्य अथवा वक्रता है।

(ज) अजी ! विमल विद्या-रथी हैं ये परम सुजान।
हाँ, हाँ, हैं विद्या रथी, ढोते ये मृत ज्ञान॥

यहाँ प्रथम 'विद्या-रथी'से विद्याके रथके स्वामी अथवा उसके चलाने वाले का अभिप्राय है और दूसरे से मरी हुई विद्या की रथी का। भाव, विद्यार्थियों के भीतरसे विद्या की ज्योति तो निकल गई, अब उनके भीतर केवल उसका शव वर्तमान् है जिसे वे ढो रहे हैं। विद्यार्थियों के आधुनिक दुर्व्यवहार का लक्ष्य कर यह कहा गया है।

(झ) महारथी, रण बाँकुरे, योद्धा, वीर महान।
नीति-धर्म से युद्ध में महारथी मतिमान !॥

विद्यार्थी वास्तव में महारथी हैं। इन्होंने स्वतंत्रता-संग्राम में प्रचुर योग दिया। पर आज उनका पतन देख कर ऐसा कहा गया।

---

१ रोगनाशक; वैद्य।

(ञ) परमारथी परम सखे ! नहिँ अनर्थ के वश्य ।
निज[१] को पर[२] को मारते, परमारथी अवश्य ॥

पहली पंक्तिमें परमारथीका अर्थ है—सत्यव्रती, आत्मज्ञानी अथवा उत्तम भाव रखनेवाला। दूसरी पंक्तिमें इसका अर्थ पर को मारनेवाला कहा गया। विद्यार्थियोँ का वर्तमान् आचार-व्यवहार इसका साक्षी है।

(ट) श्याम रंगमें हैं रँगे, श्याम भावना - भाव।
श्याम भावना - भाव में क्यों न रखें तब चाव !

---

१. कुछ विद्यार्थियों ने कुछ विद्यार्थिनियों के मुख पर तेजाब फेंका जिसका मुकदमा चला। पटने के एक कालेज के एक विद्यार्थी ने दूसरे कालेज के एक विद्यार्थी को छुरा मारा। मुजफ्फरपुरमें एक कालेज के कुछ विद्यार्थियों ने दूसरे कालेज के एक विद्यार्थी के कलेजे में बर्छा भोंक दिया जिसको देखनेके लिये बिहार के मुख्य मंत्री डा० श्रीकृष्ण सिंह वहाँ के अस्पताल में गये थे (इन्डियन नेशन, ता० २९-८-५६)

२. (a) The Additional Sessions Judge of Monghyr allowed nine students to be released on bail of Rupees Two Thousand, with two sureties of like amount each. During the week-end these students had been arrested along with eight others on charges of chain-pulling, damaging the four Up Express Trains of the North-Eastern Railway, obstructing communications, travelling without tickets, hurting passengers, rioting, assaulting public servants on duty, etc. on August seven.

—Indian Nation, August 30, 1959

(ठ) परमेश्वर वह श्याम है, देश हमारा श्याम।
रखो हृदय तव श्याम तुम, और लहो शुभ नाम !॥

(ड) कालों की पूजा करें, काली सेवें नित्य।
काले - काली उर बसें, काला यों यह चित्त॥

काकु वक्रोक्ति —

काकु का आधार है ध्वनि। ध्वनि के परिवर्तन से ही यह उत्पन्न होता है। ध्वनि द्वारा हाँ को न और न को हाँ कर देना इसका काम है। यथा,

(क) भारत मा यह कौन दुख नहीं सह रही हाय!
तनय कौन ऐसे समय नहीं उबारे आय?

द्वितीय पंक्ति में काकु उक्ति है। किसी देश-भक्त के यह नैराश्य प्रकट करने पर कि भारत माता को कहीं कोई सहारा नहीं, दूसरा कहता है कि ऐसे दुःख के समय में कौन पुत्र होगा जो माता के दुःख से दुःखी होकर उसे नहीं उबारेगा, अर्थात् अवश्य उबारेगा।

(ख) भाई! हिंसा को न गर टार सके सरकार।
कभी अहिंसा को भला, गाँधी सकते टार?॥

(b) While addressing the students of the Patna College on the eve of the 97th Anniversary of the Patna College on 9-1-60, Dr. Zakir Hussain, Governor of Bihar, exhorted them to improve their mode of thinking, so that they became useful units of the Society. He said, he was very sorry to find the students deviating from the academic atmosphere, and moving towards political, and disruptive forces.

—Searchlight, 10-1-60

दूसरी पंक्ति में काकु उक्ति है। अर्थात् जब सरकार अपने 'हिंसा' को नहीं छोड़ सकती तब गाँधी अपने 'अहिंसा' को भला कब छोड़ सकते हैं, अर्थात् कभी नहीं छोड़ेंगे।

(ग) राम-कृष्ण उरमें रहें, अब क्या चाहें आप ?।
उनका रंग हृदय चढ़ा, नहीं अजी ! यह पाप !॥

कंठी-तिलक धारण करने वाला दुराचारी अपने संबंध में यह कहता है कि यदि उसका हृदय काला है तो यह राम-कृष्ण के रंग के कारण। अतः यह कालापन पाप नहीं, पुण्य है ऐसा काकु से कहा गया।

(घ) शोक नहीं रावण जला, यदि दशमी के रोज।
हृदय ज्योति उसकी ज्वलित, राज रोज अति ओज॥

किसी के यह कहने पर कि दशहरे के दिन रावण जला दिया गया दूसरा यह कहता है कि रावण के जलने का शोक नहीं क्योंकि उसकी ज्योति हम भारतीयों के हृदय में जाग रही है। भाव यह कि रावण के प्रति वर्ष जलाये जाने पर भी हम-लोगों के हृदय से वह नहीं गया; अपनी नित्य-नूतन आभा से वह शोभायमान् है।

(ङ) स्वतंत्रता युग में अजी ! जन हैं परम स्वतंत्र।
अगर बुद्धि से ही दबे, रहे तदा परतंत्र !॥

अनौचित्य की निन्दा सुनकर दूसरा काकु द्वारा यथार्थ बात को उलट देता है। यह वक्रोक्ति उनके प्रति है जो दुर्बुद्धि से दर्प-पूर्वक चलते हैं।

(च) स्वतंत्रता किस बात की, घूमें जो न स्वतंत्र ?
टिकट भला किस बात का, रेल हमारा यंत्र ?

रेल हमारा यंत्र न सूझे बात किसी को।
इसके चलते उचित कहीं आघात किसी को ?॥
हा ! मूरख-नादान विवश हो निज मूरखता।
उलटा अर्थ लगा कलुषित करते स्वतंत्रता॥

बिना टिकट की सफर करने वाले सज्जनों की किसी के द्वारा शिकायत सुनकर सुनने वाले की काकु द्वारा यह वक्रोक्ति है। समाचार-पत्रों से पता चलता है कि इस प्रकार हर साल कई लाख की चोरी जनता किया करती है।

२. अनुप्रास

वर्णों की समता अनुप्रास कहलाती है[1]। इसके भेद इस प्रकार हैं—

(१) वर्णानुप्रास। इसके दो भेद हैं—
छेकानुप्रास
वृत्त्यनुप्रास
(२) शब्दानुप्रास

(१) वर्णानुप्रास—
छेकानुप्रास

अनेक व्यञ्जनों के एक बार साम्य को छेकानुप्रास कहते हैं। यथा,

(क) नीयत पै ही नियत है, नैतिकता नित मीत !।
नहीं देह, हर जगह है उत्तरदायी चित्त[2]॥

१. वर्णसाम्यमनुप्रासः—काव्यप्रकाश
२. The morality of an action depends upon the motive from which we act.—Dr. Johnson

यहाँ न, य और त, पुनः न त व्यञ्जनों की एक-एक वार आवृत्ति होने से छेकानुप्रास हुआ[१]।

(ख) भगवान दया करके इस आरत
भारत का सब संकट काटें॥
यह आपस का सब रार महा
तकरार मिटा, हिय स्नेह से साटें॥
अति नीच कुरीति-कुचाल निकाल,
धरा यह नीति-सुचाल से पाटें॥
प्रिय पुण्य की चाह बढ़ा नित ही,
कटु पाप की राह से चित्त उचाटें॥

यहाँ आरत भारत में र, त, की, संकट काटें में क ट की, रार तकरार में र र की और कुचाल, सुचाल में च ल की एक-एक वार आवृत्ति होने से छेकानुप्रास हुआ।

(ग) करते लाखों लाख खर्च करने को निर्मल।
जिसमें गुड़ में रहे तनिक भी अजी! नहीं मल॥
निर्मलता की आँच चित्त में यों जो धधके।
गुड़ से चीनी, चीनी से मिश्री आ चमके॥

यहाँ ल ख और च न में छेकानुप्रास है।

(घ) शुभ्र प्रवृत्ति, निवृत्ति, भय, अभय व कार्य, अकार्य।
बंध, मोक्ष जाने वही बुद्धि सात्त्विकी आर्य!॥

यहाँ प्रथम पंक्ति में तीन छेकानुप्रास हैं।

---

१. सोऽनेकस्य सकृत्पूर्वः—काव्यप्रकाश

(ङ) धर्म, अधर्म तथा सखे ! कार्य, अकार्य विधान।
जिससे ठीक न लख पड़े, बुद्धि राजसी जान॥

यहाँ प्रथम पंक्ति में दो छेकानुप्रास हैं।

(च) गुनती धर्म अधर्म को तम से होकर व्याप्त।
उलटा जिससे सूझता, बुद्धि तामसी तात !॥

यहाँ प्रथम पंक्ति में एक छेकानुप्रास है।

(छ) स्वप्न, शोक, भय और मद औ पुनि विषम विषाद।
मूर्ख न जिससे त्यागता, धृति तामसी, प्रमाद॥

यहाँ प्रथम पंक्ति में एक छेकानुप्रास है।

(ज) अनुप्रास आनंद को जाने जगत जहान।
मृदुल मेल के मोल को मानें महा महान॥

यहाँ दूसरी पंक्ति में दो छेकानुप्रास हैं।

वृत्त्यनुप्रास—

वृत्त्यन्तर्गत एक अथवा अनेक वर्णों की कई वार आवृत्तियों को वृत्त्यनुप्रास कहते हैं। यह वृत्ति तीन प्रकार की होती है—उपनागरिका (वैदर्भी) परुषा (गौड़ी) और कोमला (पांचाली)

उपनागरिका—

इसमें माधुर्य गुण के द्योतक वर्णों की रचना रहती है। ट, ठ, ड और ढ को छोड़कर मधुर तथा अनुप्रास सहित और समास-रहित अथवा स्वल्प समास-युक्त रचना रहा करती है। यथा,

(क) जन[१]-रंजन औ सुर-रंजन थे,
गुणवान बड़े, नर-नाथ निरंतर।
अघ-गंजन औ दुख-भंजन थे,
मतिमान बड़े, गुण-गाथ शुभंकर ॥
रिपु-तापन थे, अति पावन थे,
बलवान बड़े, नित साथ रमा-वर।
विष-नाशन औ शुचि-शासन थे,
नयवान बड़े, मम माथ पदों पर ॥

यहाँ माधुर्य गुण व्यञ्जक ज, न, र, ग, म और सानुस्वार वर्णों की कई वार आवृत्तियाँ हैं। समास भी स्वल्प हैं।

(ख) जय-जय मोहन दास जयति आनंद-कंद प्रभु।
करमचंद जय देव-कुसुम-मकरंद विमल विभु ॥
जय गाँधी जय आधि-व्याधि-आँधी, अविरल गति।
जय गंधी सद्गुण-सुगंध शुभ, जय अविचल मति ॥
जय विश्ववंद्य-वर, नंद्य कृति, प्रबल-बंध बंधन-हरण।
जय-जय स्वच्छंद-करण जयति हरिश्चंद्र-शुचि-आचरण ॥

(ग) समता जिसकी[२] जगमें न कहीं,
कमता जन-मान कदापि न किञ्चित।
क्षमता जिसमें अति उच्च अपूर्व,
तथापि सदा नमता जिसका चित ॥

---

१. गाँधीजी के संबंध में यह पद्य है।

२. गाँधीजी की।

ममता न कहीं कुछ भी कुछ में,
रमता मन केवल भारत के हित।
थमता लवमात्र नहीं प्रण से,
व्रण देख महा सित-निर्ममता-कृत ॥

(घ) हरिश्चंद्र के ही सरिस हृदय मंजु तव[1] तात!।
परम ज्योति का कुंज है, तेज-पुंज अवदात ॥

एक वर्ण की एक वार आवृत्ति—

दो प्रज्ञा परमेश

एक वर्ण की अनेक वार आवृत्तियाँ—

(क) गाँधी का यश-पुंज, व्याप रहा है विश्व में।
सुरभित कुंज-निकुंज, उनके सौरभ से सकल ॥

(ख) चंदन सरिस स्वभाव, शीतल, सुखद, सुगंध-प्रद।
चंद्र-चाँदनी चाव, रहे न इनके[2] निकट में ॥

(ग) अहंकार से शून्य, विगत अपनापन थे वह[3] ॥
अधन, अगेह, असुख-रत, महा अकिंचन थे वह ॥
जगत मान्य, सुठि लोकमान्यता-भाव-हीन थे।
आत्म-प्रशंसा-चाव से सदा, सदा क्षीण थे।
ये आत्म-प्रशंसाएँ निरख, याँ पर प्रचुर व परम सित।
डर भय हो गाँधी जी कहीं वाँपर कुपित न हों अमित ॥

---

१. गांधीजी का। २. गांधीजी के। ३. गांधीजी।

अनेक वर्णों की अनेक बार आवृत्तियाँ—

भुज चार धरो जिसमें दिक चार से
दैत्य दरो, दुख-संकट टारो।
दिक चार से हो रखवार सदा
दिक चार से सौख्य व संपत सारो॥
सुठि चार पदारथ दान करो,
व्रत-दान अनंत निरंतर धारो।
मुद-मंगल, मोद-विनोद अपार
लहें तुमसे प्रिय वर्ण ये चारो॥
जिसमें श्रुति चार सुचारु धरो,
वितरो वर ज्ञान शिवा श्रुति-स्तंबा !।
मुख-चार करें स्तुति शुभ्र यदा,
भुज चार अशीस सको जगदंबा !॥
भुज-चार की शक्ति-स्वरुप, न क्यों
भुज चार तुम्हें अवनी-अवलंबा !।
भुज-चार लंबोदर लें बहु मोदक
ज्यों भुज चार धरो तुम अंबा ! ॥

—हिमालय

यहाँ च, र, द, और ब की अनेक वार आवृत्तियाँ हैं।

परुषा वृत्ति—

ओज गुण के द्योतक वर्णों की रचना परुषा कहलाती है। इसमें ट, ठ, ड, ढ, आदि वर्णों की अधिकता, रेफ सहित

संयुक्ताक्षर और द्वित्व वर्णों की कठोर रचना रहती है। यथा,

(क) दंडक वन पावनकारी को करूँ दंडवत परम सप्रेम।
दंड सुयश झंडे के थे जो उनके नमूं उन्हें अति नेम॥
खंड-खंड करता अधर्म को. नमूँ धर्म-भुज दंड विशाल।
नमूँ सत्य के ब्रह्म-दंड को, दलन असत्य-गंड विकराल॥
—दंडी यात्रा

यहाँ ड की तो भरमार है ही। साथ ही, रेफ सहित एवं संयुक्त अक्षर भी कई हैं।

(ख) धारण कर दंडी-स्वरूप, देने दंडीमारों को दंड।
दंडी की यात्रा जिनने की करने लवण-नियम शत खंड॥
पुरुषोत्तम महिमालय परम हिमालय सम अनुपम शिव-धाम
शांत तेज-वपु उस विजयी गाँधी-चरणों को करूँ प्रणाम॥
—दंडी-यात्रा

(ग) बारह मार्च बजे साढ़े छः प्रातःकाल समय सुख-धाम।
वीर अठत्तर ले गाँधी ने दंडी-यात्रा की उद्दाम॥
रुंड-मुंड शिथलित औ विगलित दशन तुंड सुठि सज्जित गात।
दंड ग्रहण कर दंडी की शुचि यात्रा की दंडी ने तात!॥
—दंडी-यात्रा

(घ) तोड़ी गईं हड्डियाँ और निचोड़े गये पुरुष-गुप्तांग।
जिसमें स्वयंचरों का दल दे डाले नमक, न रक्खे संग॥
—दंडी-यात्रा

(ङ) खादी-पट-प्रेमी बने ऊँच-नीच सब ओर।
पटकी पटुता देखकर पटक दिया पट और॥

(च) राष्ट्रियता मर जाय, तजूँ न पर जातीयता।
सु-बिहारी कहलाय, भजूँ भला राष्ट्रीयता !!

(छ) [१] कहीं स्वजन को हो जो दंड। जन हो उठें तुरत उद्दंड।
ले-लें कर में लाठी चंड। ले-लें बम-बंदूक प्रचंड॥
फोड़ें हाकिम का बस मुंड। तोडें औरों के भी रुंड॥
रोकें नहीं भला जो दंड। किस निमित्त उनके भुजदंड ?॥
दर्दशरीकी का क्या अर्थ? हमदर्दी हो रहे अनर्थ॥
जीवन इसमें ही है स्वर्थ। ज्ञान सकल अन्यथा कदर्थ॥
हाँ, क्या स्कूल व क्या कालेज। कम या अधिक रहे नालेज[२]॥
अपने जन का दुख अंगेज। करे कौन रहते तन तेज ?॥
लड़के सब जब हैं यों करते। बड़के उन्हें न क्यों अनुसरते ?॥
दंड[३] - विधान उठा दें धड़ से। जनका दुःख उड़ा दें जड़से !॥

---

१. ता० १७-११-५९ के "सर्चलाइट" में एक समाचार छपा है कि गया कालेज के ३,००० लड़कों ने १६-११-५६ को पैरेडाइज सिनेमा पर आक्रमण किया। जिला मजिस्ट्रेट पर एक कुर्सी फेंकी गई जिससे वह बाल-बाल बच गये। यह उदाहरण इसी अनर्थ से पीड़ित और प्रभावित होकर रचा गया। विज्ञ जन इसका व्यंग्य सहज ही अनुभव कर लेंगे।

२. ज्ञान (Knowledge)।

३. दंड-नियमावली (Penal Code)।

कोमला वृत्ति—

माधुर्य और ओज गुण द्योतक वर्णों के अतिरिक्त शेष वर्णों की रचना कोमला कहलाती है। यथा,

(क) लंबा वपु औ लंबा रिपु, जगमें अकथ्य जो।
लंबा बाहु, ध्येय लंबा, लंबा तव पथ सो॥
लंबा यश, लंबा प्रताप, लंबा प्रभाव तव।
गाँधी लंबा[1] वा लंबा[2] अनुकम्पा से सब॥

(ख) लंबा था उद्देश्य तव, लंबा था तव पंथ।
लंबा था राक्षस महा, करना जिसका अंत॥
इससे ही विधि ने दिया लंबा तुम्हें शरीर।
सार्थक कर सबको यहाँ, लंबा हुए प्रवीर!॥

यहाँ ल, व, और श वर्णों की कई बार आवृत्तियाँ हैं।

अनुप्रास के दो और भेद हैं:—श्रुत्यनुप्रास और अंत्यानुप्रास।

श्रुत्यनुप्रास में दंत, तालु और कंठ आदि एक विशिष्ट स्थान से उच्चारण किये जानेवाले वर्णों का साम्य रहता है। यथा,

(क) लख कुचाल, विष-जाल कटु, काल समान कराल।
निज सुचाल के ताल से दला व्याल[3] विकराल॥

(ख) स्वर्गंगा - धारा सदृश धारा तव[4] उपदेश।
नित मनको निर्मल करे पावन देश - विदेश॥

---

१. दुर्गा २. लक्ष्मी ३. विदेशी शासन ४. गांधीजी का

(ग) गो - धन ! धन तू जगतमें, निर्धन हो धनवान।
हिन्दू - मुस्लिम - निधन का पै तू हेतु महान॥

पहले में ल, दूसरे में ग कंठके और ध, न दंत के और तीसरे में भी ध, न दंत के एक स्थानीय वर्णों का साम्य है।

(घ) आत्म-प्रतिष्ठा[१], आत्म-ज्ञान औ आत्म-सुसंयम।
येही केवल तीन शुभ्र अति सुगुण समुत्तम॥
पहुँचाते जीवन को सर्वोत्कृष्ट शक्ति तक।
जगमें कौन पदार्थ न इनके बल नर पा सक?॥

(ङ) हो[२] परिवर्त्तन क्यों न कुछ, मनुज-दशा में मीत!।
नहीं आचरण-दोष है मिटता, रहता नित्य॥

अन्त्यानुप्रास में पद अथवा पाद के अंत में स्वर-सहित वर्णों की आवृत्ति रहती है। उदाहरण में इस पुस्तक के सभी पद्य पेश किये जाते हैं।

(२) शब्दानुप्रास

इसे लाटानुप्रास भी कहते हैं।

शब्द और अर्थ दोनों की आवृत्तियों में अभिप्रायका भेद होना लाटानुप्रास है। यथा,

(क) हियमें जिसके यह, नहीं कायरता, वीरत्व।
हियमें जिसके यह नहीं, कायरता वीरत्व॥

---

१. Self-reverence, self-knowledge, self-control.
These three alone lead life to sovereign power.
—Tennyson

२. No change of circumstances can repair a defect of character. —Emerson

अर्थात् जिसके हृदय में यह (गाँधीजी) विराजमान् हैं उसकी यह बात कायरता नहीं वीरत्व है। पुनः जिसके हृदय में यह नहीं हैं उसका वीरत्व भी कायरता है।

(ख) मन जिसका इनमें[१], नहीं भय, निर्भयता-पुंज।
मन जिसका इनमें नहीं, भय निर्भयता-पुंज॥

(ग) देश-भक्ति है यदि, नहीं नरक, मुक्ति अभिराम।
देश-भक्ति है यदि नहीं, नरक मुक्ति अभिराम॥

३. यमक

भिन्न-भिन्न अर्थवाले वर्णों की क्रमशः आवृत्ति को यमक कहते हैं[२]। अग्नि-पुराण के अनुसार इसके दो भेद हैं—अव्यपेत और व्यपेत।

अव्यपेत—

इसमें आवृत्तिवाले वर्ण या पद एक दूसरे के समीप रहते हैं। यथा,

(क) भारत भारत[३] है महा, करके प्राप्त स्वराज।
गाँधी - बुद्धि - प्रताप से चमक रहा यह आज॥

(ख) हरिजन हरिजन[४] ही नहीं गंगा से भी श्रेष्ठ।
गंगा उर पै मल धरें हरिजन शीश यथेष्ट!॥

---

१. गाँधीजीमें।
२. अर्थे सत्यर्थे भिन्नानां वर्णानां सा पुनः श्रुतिः।
—काव्य प्रकाश
३. भा (ज्योति) रत। ४. भगवान् के जन।

(ग) मोहन[1] मोहन है इनमें, यह चंदन, चंदन कल्मषधारी।
सोहन सोहन मोह इन्हें टुक भी दुख में जब लौं
नर - नारी ॥

नीरस गोरस[2], गोरस[3] में रस मान सदा सुख, दुःख-विदारी।
भक्ति अजा[4], पुनि भक्त अजा[5] न अजान[6] [7]अजा-बल
पुष्टि - सु-धारी ॥

यहाँ मोहन, चंदन, सोहन, गोरस, न अजा में अर्थात् समीपस्थ शब्दों में यमक है।

(घ) अजी! रवीन्द्र[8] रवीन्द्र हैं, ज्योति अनूप लखाय।
रवि न पहुँच सकता जहाँ, पहुँचे ये कविराय ॥

(ङ) चितरंजन चित्तरंजन, देशबंधु विख्यात।
शुभ्र सुभास[9] सुभास[10] ही भारत के अवदात ॥

(च) कस्तूरी[11] कस्तूरी के सम राज रही हैं।
कमला[12] कमला के समान ही भ्राज रही हैं ॥
हैं सरोजिनी[13] सरोजिनी के सदृश भाती।
लक्ष्मी[14] लक्ष्मी के समान सब ठौर सुहातीं ॥

---

१. गांधीजी। २. गो (इन्द्रिय) रस। ३. दधि। ४. सरस्वती; दुर्गा; लक्ष्मी। ५. बकरी। ६. अज्ञान। ७. बकरी। ८. श्री रवीन्द्र नाथ टैगोर। ९. नेताजी श्री सुभासचंद्र बोस। १०. सुन्दर ज्योति रखनेवाला। ११. श्रीमती कस्तूरबा गांधी। १२. श्रीमती कमला नेहरू। १३. श्रीमती सरोजिनी नयडू। १४. श्रीमती विजय लक्ष्मी।

(छ) अहो ! इन्दिरा[१] इन्दिरा[२] सम दात्री सौभाग्य !
शोभन भाव विकाशिनी, विनाशिनी दुर्भाग्य ॥

(ज) प्रिय[३] कर्ण कर्ण न किस मनुज के कर रहे पावन अजी ! ।
हैं [४]हर्षवर्द्धन हर्षवर्द्धन कर रहे किसके न जी ? ॥
समुदारता वह थी अलौकिक और थी अद्भुत महा ।
इस विश्व में इनके सदृश हैं दान-वीर हुए कहाँ ? ॥

(झ) सदा आचरण मार्गही हो, हो मम उत्थान ।
कहा लाट कैनिंग[५] ने, साधु-चरित्र, सुजान ॥

व्यपेत--

इसमें आवृत्तिवाले वर्ण या पद समीप न रहकर दूर रहते हैं । यथा,

(क) ताकें तुमको चक्र[६] सम, बनते तव रथ चक्र[७] ।
पेरे जायँ न चक्र[८] में गढ़ें स्वराज सुचक्र[९] ॥

---

१. श्रीमती इन्दिरा । २. लक्ष्मी । ३. राजा कर्ण का प्रतिदिन सवा लाख मन सुवर्ण दान करना प्रसिद्ध है । ४. प्रति पाँच वर्षों पर महाराजा हर्षवर्द्धन का प्रयाग में अपना सर्वस्व दान करदेना विख्यात है और इसका इतिहास भी साक्षी है । डाक्टर ऐनी बेसेन्ट ने अपने एक ग्रंथ में इसका उल्लेख करते हुए अंगरेजों को ललकारकर कहा है कि जिस भारत में ऐसे-ऐसे भूप-शिरोमणि हुए उसका तुम्हारे बंधन में रहना शोभता है ?

५. My road must be through character to power. —Lord Canning

६. चकवा । ७. सेना । ८. कोल्हू । ९. राज्य ।

(ख) चक्रेश्वर[1] ! तव चक्र[2] है अरि-सेना-हित चक्र[3] ।
स्थापक है शुभ चक्र[4] का, नाशक सकल कुचक्र[5] ॥

(ग) भंगी तो यह हैं नहीं, भंगी[6] भारी आप ।
बृटिश-राज्य-भंगी महा, भंगी ताप अमाप ॥

(घ) भंगी तो यह है न, पै भंगी-हिय के हार ।
भंगी-भंगी मनुज को समझें दनुज अपार ॥

(ङ) जंग नहीं इनमें लगा, जंग करें भरपूर ।
आँगल इनसे जंगकर अंग-अंग से चूर ॥

(च) सुधि आती जब बारिकी[7] दृगसे गिरता बारि ।
लाल सरिस पा लाल[8] को धन्य-धन्य महतारि ! ॥

(छ) यदि स्वराज[9] में रत नहीं, धिक वह अजी ! स्वराज ।
नहीं स्वराज,[10] श्वराज वह, कहते जन-सिरताज ॥

(ज) भोजन अजी ! अनून है, डालो इसमें नून ।
नून डालने पर बना, भोजन परम अनून[11] ॥

---

१. मंडलेश्वर (बेताज के बादशाह गांधीजी) । २. चर्खा । ३. सुदर्शन । ४. राज्य । ५. सैनिक व्यूह; कुमंत्रणा । ६. भंग करनेवाला । ७. बिहार के स्वनामधन्य नेता स्वर्गीय अब्दुलबारी । ८. बिहार के भूतपूर्व मंत्री श्री जगलाल चौधरी । ९. ईश्वर । १०. परस्पर द्वेषी और कलह-प्रिय श्वान का राज्य । ११. अन्यून (पूर्ण) ।

(झ) एक शील से विश्व वश, कर सकता नर तात ! ।
पंच शील राजे जहाँ, कौन वहाँ की बात ? ।।

(ञ) है जो परम सुशील, पंच शील धारण करे ।
दुष्ट महा दुःशील, पदाघात इसपर करे ।।

(ट) चश्मा होता है जिस रँग का चश्म[1] लखें
चश्मा[2] उस रंग ।
होती बोतल है जिस रँग की जल दीखे बदरंग, सुरंग ।।
—दंडी-यात्रा

(ठ) [3]सितद्युतिका प्रिय चाप रहा वह [4]सितद्युतिका था
यह भी चाप ।
सितद्युति[5] पर से छाप उखड़ते, सितद्युति[6] असित,[7]
अमति[8] उर ताप ।।
—दंडी-यात्रा

(ड) चौदह भुवन व चौदह गाँठ । सिखलाता हमको यह पाठ ।।
जो अनंत बाँधे निज कर में । दे अनंत सुख सबके उर में ।।

(ढ) सर्वोदय यदि चाहता, सर्वोदय उर धार ।
धर्मों का भी धर्म यह, अनुपम धर्म अपार ।।
अनुपम धर्म अपार, प्रेम से सींचा है यह ।
सत्य - अहिंसा ही इसका शुचि हृदय सुखावह ।।
तबके, अबके, कबके ऋषि का नहीं यह हृदय ? ।
गाँधी, भावे, जयप्रकाश नित रत सर्वोदय ।।

---

१. आँख । २. झरना । ३. शिव । ४. अंगरेज । ५. नमक । ६. अंगरेज । ७. मुँह में कालिख लगने से काला । ८. जिसकी बुद्धि नष्ट हो गई ।

(ण) चोरी, सीनेजोरी, लूट व घोर डकैती।
दुराचार औ मान-विमर्दन, गर्दन-रेती॥
दुर्गुण कौन न अब बिहार करता बिहार में?।
गाँधी! तव अति प्रिय बिहार में, हृदय-हार में?॥

(त) भारत पै न कुदृष्टि करो, न विचार करो इसको हम जीतें।
सृष्टि रचो न कभी षडयंत्र की, भाव रखो न कभी कटु-तीते॥
विक्रम का न घमंड करो व विभूति प्रचंडके गाओ न गीतें।
सूर्य न राज्य में डूबा कभी वह डूबा यहाँ शठ शान से ऋते॥

अव्यपेत और व्यपेत मिश्रित—

(क) नहीं अछूत, अछूत हैं पापों से, यह पूत।
नित अछूत का संग, पै रहें अछूत, न छूत॥
(ख) दादा[1] हैं दादा समान, मोती[2] हैं मोती समान,
जवाहर[3] जवाहर सरिस नगेश के।

---

१. दादा भाई नौरो जी। ये पारसी थे और स्वतंत्रता-युद्ध के आरंभ-काल में भारत के प्रमुख नेता थे। ये बृटिश पार्लियामेन्ट के सर्व-प्रथम भारतीय मेम्बर थे। इन्होंने एक बार कहा था, "I know Lord Curzon. He and Lord George Hamilton have done more harm to India than any other Englishman." अर्थात् मैं लाट कर्जन को जानता हूँ। उन्होंने और लाट जार्ज हैमिल्टन (भारत के तत्कालीन सेक्रेटरी आव स्टेट) ने भारत को जितनी हानि पहुँचाई है उतनी और किसी अँग्रेज ने नहीं। २. श्री मोतीलाल नेहरू। ३. श्री जवाहरलाल नेहरू।

वल्लभ[१] हैं वल्लभ परम इस भारत के,
राजाजी[२] हैं राजा जी सुज्ञान में, गणेश से ।
मदन[३] मोहन हैं मदनमोहन सरिस,
लाजपत[४] लाजपत सुभग स्वदेश के ।
ब्रजकिशोर[५] हैं ब्रजकिशोर कंसारि सम,
राजेन्द्र[६] हैं राजेन्द्र हाँ भारत के देश के ।।
(ग) मोहन[७] हैं मोहन[८] समान विश्व-मोहन औ
भावे[९] भावे भारत की भूमिको सुचाल से ।
शाह[१०] शाह सुभग, गोपाल[११] हैं गोपाल प्रिय,
तिलक[१२] तिलक इस भारत के भाल के ।।

---

१. श्री वल्लभ भाई पटेल । २. श्री राजगोपालाचारि । ३. महामना मदनमोहन मालवीय । ४. पंजाब-केसरी लाला लाजपत राय । ५. बिहार के श्री ब्रजकिशोर प्रसाद । चंपारन में निलहों के विरुद्ध आंदोलन में ये सर्व-प्रमुख नेता थे । डा० राजेन्द्र प्रसाद के ये गुरु समझे जाते थे । इनका देशप्रेम भारत के किसी भी नेता से कम नहीं था । ६. राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद । ७. मोहन दास करम चंद गांधी । ८. कृष्ण । ९. आचार्य विनोबा भावे । १०. फिरोजशाह मेहता । स्वतंत्रतायुद्ध के आरंभ-काल के एक परमप्रबल और प्रभावशाली पारसी नेता । इन्हें अंगरेज लोग 'Ferocious Mehta' (खूँखार मेहता) कहा करते थे । गाँधीजी ने अपने लेखोंमें इन्हें बार-बार भारतका uncrowned King (बेताज का बादशाह) कहा है । ११. श्री गोपालकृष्ण गोखले । इनके संबंधमें लाट कर्जनने एक बार कहा था "It is always pleasure to cross a lance with him" अर्थात् इनको छेड़ने में बराबर मजा आता है । पुनः इनके देहावसान के बाद कौन्सिल में जब बजट पर बहस होने लगी तब लाट कर्जन ने कहा था, "This discussion, without Mr. Gokhale, is like playing Hamlet, without Hamlet" अर्थात् मिस्टर गोखले के विना बजट पर यह बहस हैमलेट नायक के विना हैमलेट नाटक का खेलना है । गाँधीजी इन्हें गंगा कहा करते थे । १२. लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक । ये एक अद्भुत नेता थे ।

कलाम[1] आजाद हैं आजादी के कलाम सम,
घनश्याम[2] घनश्याम घालक अकाल के।
कृष्ण[3] कृष्ण सदृश औ जीवन[4] हैं जीवन औ
प्रकाश[5] प्रकाश इस वसुधा विशाल के॥

(घ) भारत भारत[6] से अति शोभित, शोभित है पुनि[7] भारत से यह।
भारत[8] से यह शोभ रहा पुनि भारत सागरसे सुषमावह॥
भारत[9] से पुनि शोभ रहा यह, शोभित लोकसमादरको लह।
भारत भारत[10] पूर्ण स्वराज से, भा इसकी बने विश्व-
सुखावह! ॥

---

१. मौलाना अबुल कलाम आज़ाद। बृटिश शासन काल में काँग्रेस के ये अन्तिम अध्यक्ष थे। इन्हीं की अध्यक्षता में अंगरेजों ने भारत का राज्याधिकार सौंपा था। पीछे ये भारतके शिक्षा-मंत्री हुए और अपने जीवन के अंत तक इस पद पर विराजमान् रहे।

२. सेठ घनश्यामदास बिरला। ये तन-मन के अलावा अपने धन से देश के अकाल एवं दुःख-दारिद्र्य-ताप के निवारण में सर्वदा अग्रसर रहते हैं। अतः श्याम घन से इनकी तुलना सर्वथा सार्थक है। यहाँ पर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की अपूर्व पंक्तियाँ स्मरण हो आती हैं जो इनके साथ भी लागू हैं—

याही ते घनश्याम कहावत।
द्रवत दीन, दुख दुसह विलोकत, करुना रस बरसावत॥

३. भारत के उप-राष्ट्रपति डा० सर्व पल्ली राधाकृष्णन। ४. भारत के रेल-मंत्री श्री जगजीवन राम। ५. सर्वोदय-नेता श्री जयप्रकाश नारायण। ६. महाभारत। ७. अर्जुन। ८. भरत मुनिकृत नाट्य शास्त्र। ९. भारतीय (गांधीजी)। १०. ज्योति-लीन।

(ङ) थी हो रही पतझड़ महा हिंदुत्व-भाव-प्रभाव की।
थी आधि-व्याधि विराजती सब दिशि विदेशी भावकी ॥
हाँ, ऐन ऐसे समय मे ऐनी बसंत[1] यहाँ उगीं।
बस अंत अंतकका हुआ व बसंत की शोभा जगी ॥

४ श्लेष

शब्द को विना बदले ही उससे एक या अनेक अन्य अर्थों की उत्पत्ति श्लेष कहलाती है[2]। श्लेष शब्द श्लिष् धातु से बना है जिसका अर्थ है सटना, मिलना। इसके दो भेद हैं—(१)

---

१. डा० ऐनी बेसेंट। यह बृटिश महिला थीं और संसार भर के थियोसोफिकल मंडल की सभा-नेत्री थीं। इन्होंने संसार के समस्त धर्मों की तुलना कर हिन्दू धर्म को सर्वश्रेष्ठ समझकर उसे अपनाया और श्रीमद्भगवद्गीता पढ़ना और भगवान् कृष्ण का नाम जपना अपना धर्म माना। इन्होंने गीताका अगरेजी में अनुवाद भी किया। भारत में पदार्पण करते ही इन्होंने अपने को भारत के रंग में रंग लिया और इसके भीषण कष्ट निवारण में, इसके स्वतंत्रता-संग्राम में जबर्दस्त भाग लिया जिसके चलते इन्हें कई वार कारागार भी जाना पड़ा। यहाँ के अंगरेजी पढ़े हुए लोग शेक्सपियर इत्यादि में भूलकर अपने देश को घृणा की दृष्टि से देखने लग गये थे! उन्हें कालिदास इत्यादि के महत्व समझाकर इन्होंने उनका मन फेरा और उनमें भारतीय सभ्यता आर संस्कृति की ओर अभिरुचि उत्पन्न की।

२. वाच्यभेदेन भिन्ना यद् युगपद् भाषणस्पृशः।
——श्लिष्यन्ति शब्दाः श्लेषोऽसावक्षरादिभिरष्टधा ॥

—काव्य प्रकाश

सभंग और (२) अभंग। सभंग में शब्दों को भंगकर अनेक अर्थ प्राप्त किये जाते हैं और अभंग में शब्दों को विना भंग किये अर्थों की प्राप्ति होती है।

(१) सभंग श्लेष—

(क) सुदृढ़ परम चक्रारि तुम, देते कौन न ताप।
अपने अरिको, हरि[1] यथा दे हरि[2] को संताप॥

यहाँ चक्रारि शब्द को चक्र+अरि इस प्रकार भंग करने से गाँधी और विदेशी शासन दोनों पर यह घटित होता है। गाँधी पक्षमें चक्र अर्थात् मंडल, राज्य के शत्रु और शासन पक्षमें चक्र अर्थात् चर्खे का शत्रु।

(ख) निरत सदाहिंसा रहो, तजो न अपनी बान।
पूरब से पच्छिम उगें चाहे रवि भगवान॥

यहाँ सदा हिंसा में निरत रहने से विदेशी शासन और सदा+अहिंसा इस प्रकार भंग करने से गाँधीजी के पक्षमें अर्थ की प्राप्ति होती है।

(ग) कोन तुम्हें है जानता सत्यसंध नयपाल?।
कोन तुम्हें है मानता सु-अहिंसा दिग्पाल?॥

यहाँ कोन से कौन का अर्थ लेकर यह अर्थ निकलता है कि सत्यसंध प्रभृति गुणों से भूषित तुम को कौन जानता और मानता है? अर्थात् कोई नही! पुनः कोन का को न अर्थात् कौन नहीं अर्थ लेनेपर यह अर्थ निकलता है कि इन सद्गुणों से

---

१. सिंह; मयूर। २. मनुष्य; सर्प।

तुम भूषित हो यह बात संसार में कौन नहीं जानता और मानता है ? अर्थात् इसको सभी जानते और मानते हैं।

(२) अभंग श्लेष—

(क) श्लेष[१] न किसको दे अहो ! हर्ष और आनन्द ? ।
किस को यह रुचता नहीं ? कौन तजे यह कंद[२] ? ।।

(ख) हरि[३] ! सिरजो, पालन करो, करो शत्रु-दव पान ।
देश-वनज विकसित करो, करो सर्प से त्राण ।।

(ग) हर[४] ! दारो दुख-दीनता, जारो दारिद-क्लेश ।
राज-मुकुट राजे परम शीश सु-भारत देश ! ।।

(घ) चक्र[५] चक्रधर[६] आपका काटे कृत्या[७]-शीश ! ।
पहुँचावे स्वातन्त्र्य तक, गढ़े रूप अवनीश ।।

(ङ) नाक[८] प्रभो ! तुम हो अहो ! निर्विवाद यह बात ।
करो दूर अघ[९] देश का, अमल परम अवदात ! ।

५. वीप्सा

किसी शब्दको दो बार प्रयोग करना वीप्सा है। मनुष्य के दुःख-सुख, आश्चर्य, ओज, घृणा, रोचकता प्रभृतिमें द्विरुक्ति की आवश्यकता पड़ती है। यथा,

---

१. श्लेष अलङ्कार; मिलन। २. शकरकंद; मेघ; कपूर। ३. ब्रह्मा; विष्णु; शिव; सूर्य; गरुड़का पुत्र। ४. शिव; अग्नि ५. चर्खा; सुदर्शन। ६. गाँधीजी; विष्णु। ७. राक्षसी जो दुर्वासा ऋषिकी जटासे उत्पन्न हुई थी; विदेशी हुकूमत। ८. सर्वोत्कृष्ट-प्रतिष्ठा-स्वरूप; न+अक (पाप)=अनघ; निष्पाप। ९. पाप; पाप-रूप विदेशी शासन; कंसका प्रधान सेनापति।

(क) राम-राम जपते रहो, गाँधीका उपदेश।
राम-राम! वह नर नहीं, माने इसमें क्लेश॥
(ख) रँगी-रँगीले तो नहीं, रँगी-रँगीले खूब।
हँसते-हँसते हरण की अंगरेजकी डूब॥

६. पुनरुक्तवदाभास

भिन्न आकारके शब्दों का यथार्थतः एक अर्थ न होने पर भी एक अर्थ सा प्रतीत होना पुनरुक्तवदाभास है। इसके दो भेद हैं—

(१) शब्दगत सभंग और (२) शब्दगत अभंग।

(१) शब्दगत सभंग—

(क) ले कर किरण दिनेश से खिले कमल सुख-साज।
ले कर किरण तिमिर-हरण[1]! तुम से राज स्वराज॥

यहाँ कर और किरण दोनों शब्दों का एक ही अर्थ जान पड़ता है पर वस्तुतः कर शब्द का अर्थ हाथ मानने से पुनरुक्ति की झलक मिट जाती है। कर का संबंध ले से करने पर भी यही बात होती है।

(ख) मनहर शंकर सरिस तुम[2] शुभ औ शांति निधान।
हर की अशुभ-अशांति को हरते, धरते ध्यान॥

यहाँ भी शंकर और हर की पुनरुक्ति का आभास मिट जायगा यदि हर के अर्थ हरनेवाला और हरेक समझे जायँ।

---

१. अंधकार-नाशक; सूर्य; गांधीजी। २. गांधीजी।

(ग) हरि, केहरि बसते यहाँ, इस भारत के बीच।
हरि ! तू रक्षा कर सदा, दुरा दुःख औ मीच ॥

यहाँ हरि और केहरि दोनों के अर्थ सिंह लेने से पुनरुक्ति का आभास होता है पर पहली पंक्ति में हरि का अर्थ हँस और दूसरी पंक्ति में इसका अर्थ विष्णु लेने से यह आभास नष्ट हो जाता है।

(२) शब्दगत अभंग—

सुर, नर, विबुध सदा रहे घेरे तुमको[1] तात !।
को तुमसा विख्यात था ? को तुम सा निष्णात ? ॥

यहाँ सुर और विबुध दोनों के अर्थ देवता होने से पुनरुक्ति प्रतीत होती है परंतु सुर का अर्थ महात्मा और विबुध का अर्थ विद्वान् लेने से यह आभास दूर हो जाता है।

शब्दार्थ उभयगत—

गाँधी ! उग्र प्रताप तव अद्भुत भाव, विचार।
साधु शीलता, शुभ्रता जगमग जग संसार॥

यहाँ जग का अर्थ है जाग रहा। इसके स्थान पर चमक रहा इत्यादि शब्द बदल देने से पुनरुक्ति नहीं रहती इसलिये यह शब्दगत है परंतु संसार के स्थान पर जगत् इत्यादि शब्द परिवर्त्तित कर देने पर भी जग के साथ पुनरुक्ति का आभास बना रहता है जिस कारण यह अर्थगत है। इस प्रकार यहाँ शब्द तथा अर्थ उभयगत पुनरुक्तवदाभास विद्यमान् है।

---

१ गाँधीजी को

७. भाषा समक

जहाँ विविध भाषाओं के शब्दों का प्रयोग होता है उसे भाषा समक कहते[१] हैं। इसमें रोचकता आ जाती है जिससे आकर्षण अथवा चमत्कार उत्पन्न होता है। इसके अलङ्कार होने का यही कारण है। यह वहिष्कार-योग्य नहीं है। आचार्य विश्वनाथने अपने ग्रंथ 'साहित्य-दर्पण' में और आचार्य अप्पय ने अपने ग्रंथ 'कुवलयानंद'[१] में इसे स्थान दिया है। जब संस्कृत में इसका स्थान हो सकता है तब हिंदी में इसको स्थान देने से, विशेषकर जब भारत अंगरेजी, संस्कृत, उर्दू, फारसी प्रभृति अनेक भाषाओं का स्थान है, एक विशेष चमत्कार आ जाता है।

उदाहरण—

(क) डियर लाट वर को समझाया, पर उनने नहिं इयर दिया।
नियर रही उनके उर के तो लूट-मार, नहिँ हियर किया॥
शियर शरारत थी वाणी में, थी यह आउट आव गियर गिरा।
चियर न इस पर मिला कहीं से, थी य क्लेशकर मियर गिरा॥

(ख) टिट फार टैट व शठे शाठ्यकी नीति न गाँधी को भाई।
'वसुधैव कुटुंब' से नहीं क्रूर नीति यह अपनाई॥
होकर अजी! परम आजिज भी, नहीं आजिजी ठुकराई।
ठकुराई इसमें ही समझी ओ सुप्रीम सु-चतुराई॥

---

१. शब्दैरेक विधैरेव भाषा सुविविधास्वपि।
वाक्यं यत्र भवेत् सोऽयं भाषासमक उच्यते॥
—कुवलयानंद

(ग) ट्रुथ व नानवायलेँस लेँस थे प्रिय प्रकाश के हाँ उनके।
यही दो रहे लंग्स ललित, लेते वे रहे साँस जिनसे।
दौलत यही बदौलत जिसकी स्वतंत्रता उनने पाई।
यतो धर्मस्ततोजयः अजी! सृष्टि-नीति यह दिखलाई॥

(घ) 'क्विट इंडिया' प्रभुत्वमय कर प्रस्ताव महान।
कांग्रेस ने निज करेज का परिचय दिया सुजान!॥

(ङ) देश-वर्कको शर्क मत करो जीलसे खूब।
जाता अधम अलोन है दर्मयान में ऊब॥

(च) डीवाइड जानें सभी, जानें सब यह रूल।
'डिवाइड एन्ड रूल' में इंग्लिश किन्तु अतूल॥

(छ) गौडसे हैं गौडसे करते विनय।
नाथ! छमिये पाप यह मेरा अछय॥

(ज) ड्यूटी में जो द्युति अहो! कहीं न कोई पाय।
डेविल वह जिसमें नहीँ, नित दुतकारा जाय॥

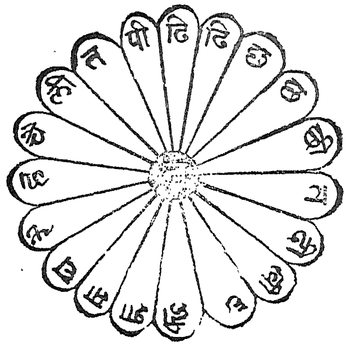
८. चित्र

ऐसी रचना जो पुष्प, पशु, पक्षी प्रभृति के आकार में पढ़ी जाय चित्रालङ्कार कहलाती है।[1] यह कष्ट काव्य है। यहाँ कमल पुष्प के चित्र में इसका उदाहरण दिया जाता है—

दिन-दिन, छन-छन छीन तन, दीन, खीन, धन-हीन।
शान, मान, घन रैन इन, चैन-लीन, तन-पीन॥

१. तच्चित्रं यत्रवर्णानां खड्गाद्याकृतिहेतुता। कष्टकाव्यमेतत्
—काव्य प्रकाश

इसमें भारतवर्ष की पूर्वापर दशा का चित्रण है। स्वराज्य प्राप्ति के पहले क्या दशा थी और स्वराज्य उपलब्ध होने पर क्या दशा है। पहले अत्यंत दीन और हीन अवस्था थी और अब उस घनघोर निशा रूप विदेशी शासन का नाश कर, स्वराज्य सूर्य का प्रकाश ले आने से भारत को शान है, संसार में इसका मान है। यह पहले की अपेक्षा चैन से है, पुष्ट है अथवा प्रफुलित है। यहाँ प्रत्येक शब्द 'न' पर अंत होता है। अतः 'न' केन्द्र है और अन्य वर्ण अर्ध व्यास अथवा 'न' पराग है और अन्य वर्ण पँखुडियाँ —



अर्थालङ्कार

अर्थों को अलङ्कृत करनेवाले अर्थालङ्कार कहलाते हैं। ये शब्द सौन्दर्य के आधार-स्वरूप हैं। अर्थालङ्कारों में उपमा शिरोरत्न मानी गई है। बहुत ठीक कहा गया है कि यह नटी की तरह सादृश्य—मूलक सभी अलङ्कारों में वेश बदलकर नृत्य करती और चित्त में आनंद भरती है। इस प्रकार असम, उदाहरण, उपमेयोपमा, अनन्वय, प्रतीप, रूपक, स्मरण, भ्रांतिमान, संदेह, अपह्नुति, उत्प्रेक्षा. अतिशयोक्ति, तुल्ययोगिता, दीपक, प्रतिवस्तूपमा, दृष्टान्त, निदर्शना, व्यतिरेक, सहोक्ति और समासोक्ति प्रभृति सादृश्य-मूलक समस्त अलङ्कारों का आधार उपमा है। उपमा मनुष्य मात्र के लिये परम स्वाभाविक है। प्रगाढ़ विद्वान् से लेकर महा मूर्खतक इसका व्यवहार करते देखे जाते हैं। ऋग्वेदके एक तिहाई मंत्र सूर्य-संबंधी हैं। इनमें कितने ही अपूर्व उपमाएँ हैं[1]। सूर्य का एक कामुक की भाँति उषा कामिनी को पीछा करना प्रसिद्ध है।

१. उपमा

उप सामीप्यात् मानम् इत्युपमा अर्थात् किसी वस्तु के समीप में अन्य वस्तु के रूप की तुलनात्मक ज्ञान-प्राप्ति।

---

१. साधर्म्यमुपमा भेदे—
उपमानोपमयोरेव न तु कार्यकारणादिकयोः साधर्म्यं भवतीति तयोरेव समानेन धर्मेण सम्बन्ध उपमा। — काव्य प्रकाश

साधर्म्य ही इस तुलना, इस सादृश्य का कारण है। अतः दो वस्तुओं के साधर्म्य प्रतिपादन को उपमा कहते हैं।

जिसे उपमा दी जाय वह उपमेय, जिससे उपमा दी जाय वह उपमान, उपमेय और उपमान दोनों में समान रूप से रहने वाले गुण, क्रिया आदि धर्म को समान धर्म और समानता-सूचक सादृश्य-वाचक शब्द को उपमा-वाचक शब्द कहते हैं।

उपमा के मुख्य दो भेद हैं—पूर्णोपमा और लुप्तोपमा। इनके भी कई उपभेद हैं जिनमें कुछ का वर्णन आगे यथा-स्थान किया जायगा।

पूर्णोपमा

जहाँ उपमेय, उपमान, समान धर्म और उपमा-वाचक शब्द चारो विद्यमान् रहें वहाँ पूर्णोपमा होती है। इसके दो प्रकार हैं—श्रौती अथवा शाब्दी और आर्थी।

श्रौती—

इसमें इव, यथा, वा, सी, से, सो, लौं, जिमि, जैसे प्रभृति सादृश्य-संबंध-वाचक शब्दों का प्रयोग होता है। इन शब्दों के श्रवण-मात्र से ही सादृश्य का ज्ञान होता है। यथा,

(क) हिमगिरि से गंगा यथा निकली परम पुनीत।
गाँधी से निःसृत तथा स्वतंत्रता शुचि मीत!॥

(ख) गाँधी का प्रस्थान है दंडी के प्रति पुण्य।
लंका प्रति प्रस्थान ज्यों रहा रामका धन्य॥

यह उक्ति पंडित मोतीलाल नेहरूकी है।

(ग) नहीं समझना हमें चाहिये कभी किसी भी नर को नीच[1] ।
यह भावना हृदय के भीतर गर्हित जैसे गंदा कीच ॥

—दंडी-यात्रा

(घ) तुमको[2] विषतरु, इव प्रभो ! अबलों कुछ जन हाय ! ।
समझें, होती जलन है, तुमसे उन्हें अपाय ! ॥

(ङ) भारत[3]-जन-हिय-अंश ज्यों शुभ्र हिमालय तात ! ।
अंश हमारे हृदय के कालिदास त्यों भ्रात ! ॥

(च) भारतवर्ष रहा परम अँगरेजों में पीन ।
रहा कपट-मुनि-चरण में ज्यों प्रतापरवि लीन ॥

(छ) गाँधी को दे जेल, फिर छोड़ दिया सरकार ।
निगल यथा महिदेव को उगल दिया उरगारि[4] ।

(ज) विद्याओं में मैं अध्यात्म सुविद्या, कहा कृष्णने आप ।
बीच महाभारत के [5]भारत से, हरते उनका संताप ॥
योंही भारत के इस भारत[6] में भारत हित भारत सनेह ।
हो इस विद्या के वपु बापू ! हो तुम इसके गुण-गण-गेह ।

—दं०. या०.

---

१. गाँधीजी की भर्त्सना अपने उन साथियों के प्रति जिन्होंने बर्नर को अपने न ढोकर उसे कुलियों से ढुलवाया था । २. गाँधीजी को । ३. Kalidas is a part of our hearts as the Himalaya Mountains are a part of the heart of the people of India.

—Jawaharlal Nehru

४. गरुड़ । ५. अर्जुन । ६. महाभारत; इंगलैंड और भारत का युद्ध ।

(झ) यथा ताड़का औ सुबाहु दानव-दल दल, कर उसे विचूर्ण।
राम और लक्ष्मण ने गाधि-[1]तनय का किया यज्ञ था पूर्ण॥
तथा यज्ञ गाँधी का पूर्ण किया, रक्खा न ताप लवलेश।
सत्य-अहिंसा युगल प्रबल ने, मेटा कटुतम कल्मष-क्लेश॥

—दं०. या०.

(ञ) नमुचि उपद्रव-शील, महा दुःशील दनुज था दुख-निधान।
ताप और संताप वितान, अदयता और अमंगल खान॥
हुआ अंत उसका न अस्त्र से, मरा फेन से सो बल-धाम।
सत्य-अहिंसा से हत हुआ तथा दुःशासन[2] अवगुण-ग्राम॥

दं०. या०.

(ट) बच्चा मा के स्तन रहे ज्यों अतिशय संलग्न।
त्यों आध्यात्मिक पुष्टिदा भारत-मा में लग्न॥
भारत-मा में लग्न रहूँ, जानूँ इसकी स्थिति।
मम सर्वोच्च मनोरथ इव इसकी परिस्थिति॥
यह विश्वास गये, बन जाऊँ दूअर सच्चा।
इससे इसमें लग्न रहूँ, मा में ज्यों बच्चा॥

यह उक्ति गाँधीजी की है।

(ठ) प्राकृतिक विज्ञान औ रसायन-शास्त्र के
सु-नियम अटल और अविचल हैं यथा।
दृढ़ है विश्वास मम, शुभ औ अशुभ कर्म
के भी हैं नियम मित्र! अचल महा तथा॥

---

१. विश्वामित्र २. अँगरेजों का दूषित शासन।

कर्म जो अशुभ उनके कुफल अवश्य ही,
कभी न कभी मिलेंगे, देंगे अतिशय व्यथा।
शुभ कर्म के सुफल मिलकर ही रहेंगे,
किसी विधि, प्रकृति-नियम यह औ प्रथा[१] ॥

(ड) चँगेज, कुबला, ताइमूर और नादिर के
जुल्म का सम्मिश्रण था निलहों के स्थानों में।
जनता के ताप औ संताप का था अंत न, था
नाचता नरक निलहों के कारखानों में॥
शत साल से य दुःख दारुण था साल रहा,
रेंगता था जूँ न सरकार वर कानों में।
निलहे खिले थे नील कमलों से, हुए अब
गाँधी-गज दलित, रहा न बल प्राणों में॥

(ढ) दैत्यों ने तप करके घोर, महा बल पाया।
बल पाकर के अजी! घोर उत्पात मचाया॥
कुछ ने त्योंही कर महान तप, लहा स्वराज।
महा उपद्रव मचा रहे चारो दिशि आज॥

---

१. I do believe firmly in one thing that just as there are laws of Physics and laws of Chemis try, there are laws of good action, and bad action. Evil action must, necessarily, some time or other, bring bad results, and good actions must, necessarily, give good results. I cannot say in what form this happens, but that is a law of Nature.

—Jawaharlal Nehru

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्—भगवान् कृष्ण ।

(ण) स्वतंत्रता क्या जो नहीं, छंद-कुबंधन त्याग।
रचना करूँ स्वतंत्र हो, अपनी रुचि में पाग ? ॥
अपनी रुचि में पाग, त्याग सब बंधन-बेड़ी।
चलूँ नहीं, अनुगमन करूँ ज्यों भेड़ा-भेड़ी ॥
स्वतंत्रता-युग में यदि सोही सु-परतंत्रता।
छूटा यदि छल-छंद नहीं तो क्या स्वतंत्रता ? ॥

(त) [1]ज्यों खनित्र से भूमि को खोद सलिल नर पाय।
गुरु-सेवा-बल शिष्य त्यों विद्या पाय अघाय ॥

(थ) वाजि[2]-नियंत्रणमें यथा सारथि चेष्टावान।
उचित तथा विद्वानको इन्द्रिय-यंत्रण मान्य ॥

(द) इन्द्रिय[3]-गण में एक भी विचलित हो यदि यार ! ।
बुद्धि चली जाती तथा, यथा मशकसे वारि ॥

---

१. यथा खनन्खनित्रेण नरो वार्यधिगच्छति।
तथा गुरु गतां विद्यां शुश्रूषुरधिगच्छति ॥
—मनुस्मृति, दूसरा अध्याय, श्लोक २१८

इस संबंध में इतना और पढ़ लीजिये—
गुरो र्यत्र परीवादो निंदा वापि प्रवर्तते।
कर्णौ तत्र पिधातव्यौ गंतव्यं वा ततोऽन्यतः ॥
परीवादात्खरो भवति श्वा वा भवति निंदकः।
परिभोक्ता कृमिर्भवति कीटो भवति मत्सरी ॥
मनुस्मृति, अध्याय २, श्लोक २००-०१

अर्थात्
गुरु का अनहित वा अहो ! हो निंदा जिस ठौर।
कान बंद कर ले वहाँ वा जावे थल और ॥
गुरु अनहित से खर तथा निंदा से हो श्वान।
धनभोगी कृमि हो अजी ! डाही कीट सुजान ! ॥ —लेखक

२-३ मनुस्मृति, अध्याय २, श्लोक ८८; ९९

आर्थी—

इसके उपमा-वाचक शब्द हैं तुल्य, सम, समान, सरिस, सरीखा, सदृश आदि। इव इत्यादि शब्दों द्वारा, शब्द-शक्ति से, उपमान का ज्ञान होता है और तुल्य इत्यादि शब्दों द्वारा उपमान की अनिवार्यता प्रकट होती है। एक में तत्क्षण श्रवण-मात्र से, और दूसरे में सोचने-समझने पर कुछ क्षणों के पश्चात उपमा का बोध होता है। यथा,

(क) सुरतरु सरिस अपार, गाँधी भारतवर्ष में।
इच्छित फल दातार, दुख-दारिद्र्य-हरण महा॥

(ख) बृटिश राज्य ने सिंह सम, गर्व किया दिन-रात।
मनुज एक ने पूँछ धर पटक दिया वर गात॥

(ग) हैं फिरोज हिमगिरि सरिस, लोकमान्य हैं सिंधु।
गंगा तुल्य सु-गोखले, दीन जनों के बंधु॥
यह उक्ति गाँधीजी की है।

(घ) तुम खुद विचारो, हुआ दुष्टाचार है ऐसा कहीं?।
सर्वंसहा[1] सर्वंसहा[2] सम अब सहा जाता नहीं॥

(ङ) व्याकुल महा था हो रहा गजराज पीड़ा-दुःख से।
थे प्राण संकट में, उबारा दौड़ उसे सु-दुःख से।
है ग्राह से त्योंही उबारा आपने इस देश को।
हैं मोक्ष-दाता विष्णु सम गाँधी! न संशय लेश को॥

(च) पाञ्चजन्य[3] अनंतविजय[4] समान तव रण-घोष था।
कृष्णचंद्र व धर्मराज समान ही युत जोश था॥

---

१ सब कुछ सहा। २. पृथिवी। ३. भगवान् कृष्णके शंखका नाम। ४. युधिष्ठिरके शंखका नाम।

पर बढ़ा उनसे बहुत ही रहा रण-कारण महा।
निज न, पर याँ राज्य कर संकट असह था ढा रहा॥

(छ) धरती नहीं गगन, न अस्त्र वा शस्त्र रहा सो।
दिन न रात वह रही, न नर अथवा पशु था सो॥
यों वरदान बचा जगपति, जग-दुख-हर्त्ता ने।
हना हिरण्यकशिपको जग-त्राता, भर्त्ता ने॥
यों ही सूक्ष्म सु-बुद्धिसे सत्य-अहिंसा शुभ्र बल।
गाँधीने नरसिंह सम किया विदीर्ण महान खल॥

(ज) श्वेत, श्याम, रतनार शुचि रंग धरे अति राज।
पावसके आकाश सम दृग तव[१] रुचिर विराज॥
दृग तव रुचिर विराज, श्वेत से आनँद बर्षो।
अहो! श्याम से भीषण रिपु ग्रीषमको[२] धर्षो॥
धर रतनार पसारो प्रेम सु कृपा-निकेत!।
यों सूखे भारतको हरा करो यश-श्वेत!॥

(झ) कैसे-कैसे हुए याँ नर[३] प्रवर महा, धर्म-वीरेन्द्र न्यारे।
क्या-क्या क्लेशों-दुखोंको सहन न उनने था किया हाय! प्यारे॥
विष्णू थे वे अजी! नाभिकमल[४] भव त्यों तात[५] याँ पै सुशोभे।
स्रष्टा स्रष्टा[६] सरीखे इस नव युग के, कृत्य पै विश्व लोभे॥

---

१. गाँधी जीका। २. उत्ताप देनेवाले विदेशी शासक को। ३. दादा भाई नौरोजी, फिरोज शाह मेहता, बाल गंगाधर तिलक, गोपाल कृष्ण गोखले, लाजपत राय प्रभृति जो विष्णुके सदृश थे और, चूँकि मनुष्य समयकी संतान है, गाँधीजी एक प्रकार से इन्हीं लोगों की भावनाओंसे संभूत थे। ४. ब्रह्मा। ५. गाँधीजी। ६. ब्रह्मा।

(ञ) सत्य और अहिंसा सुशोभित हैं संग जाके,
राम और सीता सम सुगुण - निधान जो।
वीरता - निकुंज, शुचि कोमलता - पुंज चारु
धर्म ओ दया के प्रिय रूप राजमान जो॥
भंजन अधर्मके ओ गंजन अदयताके,
युगल स्वरूप शुभ रूप भ्राजमान जो।
गाँधीके पालक ओ घालक अनय - असुर,
चिन्ता न गाँधीके विजयकी सुख - खान जो॥

यहाँ सत्य और अहिंसा उपमेय और राम तथा सीता उपमान हैं, सुगुण-निधान समान धर्म और सम आर्थी पूर्णोपमावाचक शब्द हैं।

(ट) शत्रु महा साम्राज्यके, यत्न करते हैं नित,
जिसमें सु-बृटिश साम्राज्य न रहे यहाँ।
साम्राज्य - विरोधी बातें पत्रमें लिखें सदा ओ
फैलाते हैं घोर अराजकता यहाँ - वहाँ॥
लाके अभियोग इन बातों पर दंड दिया,
तिलकको दंड जिस धारा - गत था दिया।
बोल उठे गाँधीजी, "है धन्य भाग्य मेरा यह,
तिलक समान मान मुझको दिया गया!॥"

(ठ) थोड़े ही दिन गत हुए, लगे भूलने लोग।
उरसे उड़ते जा रहे, उरमें उपजे सोग॥

उरमें उपजे सोग, जल्द जन भूले जाते।
अहह! राष्ट्र-निर्माता को, न तनिक सकुचाते॥
विधि सम सब संबंध जायँगे हा! तोड़े ही।
देश एक दिन इनको सुमिरेगा थोड़े ही[1]॥

(ड) नीच कौन केवट सदृश? ऊँच वसिष्ठ समान?।
भेंटे उससे लखन सम, अति आदर-सम्मान॥
अति आदर - सम्मान मिले, केवट से मुनिवर।
रंच भेदका भाव नहीं लाया उर भीतर॥
कौन बात यदि महातमा सम हियको सींच।
महातमा[2] व्यवहार करें उत्तम गुन नीच?॥

(ढ) धनका न करें कुछ ख्याल कभी, अपमान व मान का भाव दुरावें।
तनका न करें कुछ छोह कभी, प्रिय प्राण का मोह समस्त भगावें॥
तलवार की धार नचें नटराज, स्वदेशके काज सु-गायन गावें।
अँग-अंग में प्रेम भरे परिपूर्ण, पतंग समान सदा यह धावें॥

यह (कांग्रेस-कार्यकर्त्ता) उपमेय, पतंग उपमान, प्रेम भरे समान धर्म और समान वाचक शब्द हैं।

(ण) काँग्रेस-नर-वर-श्रेणी-दीप-शिखा सम त्याग-मूर्त्ति अभिराम।
शिर रक्खे शिर जाता, काटे शिर, शिर रहे गुने गुण-ग्राम॥

---

१ वैदिक काल में सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा जी की पूजा होती थी। धीरे-धीरे पुराण-काल आते-आते वह लुप्त हो गई। अब तो बिचारे ब्रह्मा जी की कहीं कोई भी पूजा नहीं करता। वही दशा गाँधी जी की शुरू हो गई है। धीरे-धीरे उनमें श्रद्धा-भक्ति लुप्त हो जायगी और केवल नाम रह जायगा। २. गाँधीजी।

शिर रक्खे भारत अँधार, शिर काटे भारत हो उँजियार।
इस आध्यात्मिक व्रत का पालन करती देश-भक्ति अति धार॥

(त) अत्याचार[१] बढ़ा यह इस तौर रहा हा, हा,
दीन-बंधु[२] ने रचा नाटक "नील - दर्पण"।
योरोप में अनुवाद[३] ने मचाई हलचल,
किया मन उथल - पुथल अति कर्षण॥
अभिनय इसका हुआ कलकत्ते में जब,
हुआ जुल्म - व्यभिचार का प्रचंड दर्शन।
विद्यासागर[४] ने निज चप्पल को फेंक वाँ पै
प्रकटा चपला[५] सम रोषानल तत्क्षण॥

(थ) आँगल के उर बीच आज भू - डोल है महा।
अजी! वेद-पाठी-कर सम चल-विचल हो रहा॥
पड़ा परम छव-पाँच में भयावह भारत-रिपु।
नव-दो ग्यारह हुआ अंत में वह आपद-वपु॥

(द) पंचशील! तू पंचशीर्ष शंकर के सदृश।
मंगलदायक, शांतिविधायक औ पालक[६] वृष॥
जीवन - जीवन, महाकालके काल भयंकर।
घृणा, भीति, विद्रोह व विश्व - अनल शीतलकर॥

(ध) थिरके कागज-भूमि पर, उर रिपु-छेदन[७] शूल।
पुनि अतिशय वह दीर्ण था फौन्टेन पेन निब तुल्य॥

---

१. बंगाल में निलहों का अत्याचार। २. एक बंगाली किरानी।
३. बंगला से अंगरेजी अनुवाद ४. ईश्वरचंद्रविद्यासागर ५. बिजली
६. न्याय; सत्कर्म। ७. विदेशी शासन कृत-छेद-जन्य शूल।

फौन्टेन पेन निब तुल्य पूज्य गाँधी थे भाई ! ।
रही पीठ पर रौशन जन - अनुसृति रोशनाई ।।
चलते रहे, स्वराज्य शब्द पर ही आकर के ।
लिया अजी ! दम, जिससे हरदम भारत थिरके ।।

(न) भूमि पाँच एकड़ सरिस अजी ! धेनु अति धन्य ।
दुग्ध - मार्ग सुखका परम, सेवें सज्जन पुण्य ।।
सेवें सज्जन पुण्य, भक्ति - श्रद्धा - युत संतत ।
कामिनीके कांचन' से भी आवश्यक यह नित ।।
है कांचन कारण कलहों का, दुखको ऊर्मि ।
भवन कलह - प्रिय हेतु धेनु है सुखकी भूमि[१] ।।

(प) पाश्चात्य सभ्यता का यह प्रखर प्रात प्यारा ।
मोहन महान सोहन अतिशय अनूप न्यारा ।।
राकस समान ही है, आभा अपावनी है ।
बाहर चमक - दमक है, भीतर भयावनी है ।।

(फ) पूर्वीय सभ्यता का यह शुभ्र प्रात प्यारा ।
अमृत समान अनुपम है दिव्य और न्यारा ।।

---

१. Mr. M. V. Krishnappa, Union Deputy Minister for Agriculture, said, here, Today that a cow was equal to five acres of land, in respect of income, work, and happiness. He told the Delhi Pinjarapole Society fair gathering that a cow was moreessential than the gold, which every house-wife had-Mr. Krishnappa said that, whereas gold was the cause of quarrel in many houses, a cow could bring happiness in a quarrel-some house. This was the milky way to domestic happiness.

—Searchlight, 9-11-59

न कपोल - कल्पना यह, न असत्य यह तना है।
मोहन[१] बता रहा यह, जो सत्य से सना है॥
(ब) एक सुकृत भी मनुज का रवि-प्रकाश के तुल्य।
दुःख-तिमिरका नाशकर दे सुख ज्योति अतुल्य॥
दे सुख-ज्योति अतुल्य, खिला वह रहे निरंतर।
हरा-भरा जीवन समस्त, नित आनन्दित कर॥
रह-रहकर हिय उठे उमंग - तरंग अनेक।
हन दुष्कृत, सु-विचार करे जो सुकृत एक॥
(भ) एक भूल भी मनुज की शशिका शाश्वत ग्रास।
उडुगण सम उपचार सब दुख-तमका न विनाश॥
दुख-तमका न विनाश, जन्मभर नर सो रोए।
आजीवन संताप व सुख की नींद न सोए॥
सिर धुन - धुन पछताय, वेदना विद्ध अनेक।
यों वह जन्म गँवाय, भूल करता जो एक॥
(म) घृणा करो तुम पाप से, पापी से न घिनाव।
पाप सु - निंदा योग्य है, पापी करुणा - भाव॥
पापी करुणा - भाव योग्य, वह प्यारा भाई।
उस पर निष्ठुरता निज पर निष्ठुरता नाईं[२]॥
प्रेम - अहिंसा की मनमें नित धारो[२] तृष्णा।
इससे बढ़कर जग उपाय न दुराय जो घृणा॥
यह उक्ति गाँधीजी की है।

---

१. गाँधीजी। २. सदृश।

(य) जान सकूँ प्रभु को नहीं, लड़ूँ न जो अघ साथ।
इसके चलते जाय भी, जो मेरा यह माथ॥
जो मेरा यह माथ जाय तो जाय न शोच।
माथ बचाकर बनना चाहूँ अघी न पोच॥
जितना शुद्ध बनूँ पहुँचूँ उतना ढिग ईश्वर।
मेरा यह विश्वास अटल हिमगिरि सम प्रियवर!॥

यह उक्ति भी गाँधीजी की है।

(र) [1]भारतके शिक्षकों से मेरी यह प्रार्थना है,
सुनें कृपया इसे औ चलें इस पै नित।
अब, जब हैं न वे विदेशी प्रभुके अधीन,
पहचानें निज कर्त्तव्य को वे, है उचित॥
जिनको सँभालना - सुधारना पिताके सम
कार्य उनका है शुभ अभिमान - संयुत।
जान को भी डाल खतरे में ठीक मार्ग पर
मोड़ें उनको, न होने दें कदापि विकृत॥

यह उपदेश गाँधीजी का है।

---

१. शिक्षकों के प्रति इससे बढ़कर क्या उपदेश हो सकता है? यदि औरंगजेब के शिक्षक यथार्थ शिक्षक होते और अपने कर्त्तव्य का वह समुचित पालन करते तो औरंगजेब कोई दूसरा ही औरंगजेब होता। उसके कृत्य राक्षसी नहीं होते। कहा जाता है कि औरंगजेब के बादशाह होने पर उसके उस्ताद उससे मिलने आये। उनके खयाल के बरक्स औरंगजेब ने उनकी बिलकुल मामूली खातिर की और उनसे कहा, "आप जानते थे कि मैं बादशाह हूँगा। फिर आपने बादशाहत की

ऊपर कई उदाहरण ऐसे दिये गये हैं जिन्हें, ज्यों इत्यादि शब्द के प्रयोग के कारण, कुछ लोग पूर्णोपमा न मानकर उदाहरण अलङ्कार मानेंगे। परन्तु प्रायः आचार्यों ने उदाहरण को उपमाका ही एक भेद माना है। इन में महाकवि भूषण भी हैं, क्योंकि शिवराज-भूषण में पूर्णोपमा के दोनों उदाहरण उन्होंने ऐसे ही दिये हैं। इनमें दूसरा उदाहरण यह है—

सासता खाँ दुरजोधन सो औ दुसासन सो जसवंत निहारयो।
द्रोन सो भाऊ करन्न करन्न सो और सबै दल सो दल भारयो॥
ताहि बिगोय सिवा सरजा भनि भूषन औनि छता यों पछारयो।
पारथ कै पुरुषारथ भारथ जैसे जगाय जयद्रथ मार्‌यो॥३५॥

कौनसी नसीहत मुझे सिखलाई? कौन सी नाति और राजनीति मुझे बतलाई? सिर्फ मेरी तारीफ में आपने जमीन और आसमान एक कर दिया।" शिक्षक के अपने कर्त्तव्य पालन न करने और यथेष्ट शिक्षा न देने और विद्यार्थियों को अधर्म के मार्ग से मोड़कर धर्म के मार्ग पर न ले चलने का कैसा भीषण और भयंकर परिणाम होता है यह औरंगजेब के जीवन-चरित से विश्व-मात्र पर विदित है। "रुक्क़ात आलमगीरी" से पता चलता है कि औरंगजेब को अपने बुरे कर्मों का कितना पश्चात्ताप था। उन्होंने एक रुक्क़े में लिखा है—"आमदम तनहा ओ मीरवम बई क़ाफ़ला" अर्थात् मैं आया तो था अकेला पर जाता हूँ (गुनाहों के) झुंड के साथ।" यदि उसे सत्शिक्षा दी जाती तो न हिंदुओं की ऐसी दुर्गति होती और न मुगल साम्राज्य का पतन होता। हंटर साहिब अपने "भारत के इतिहास" में लिखते है—

His life would have been a blameless one, if he had no father to depose, no brothers to kill, and no Hindu subjects to persecute"

लुप्तोपमा

उपमेय, उपमान, समान धर्म और उपमा-वाचक शब्दों में से एक, दो वा तीन लुप्त हो जाने से लुप्तोपमा होती है। यथा,

उपमेय-लुप्ता—

(क) शशि सम शीतलता सुभग, रवि सम तेज - प्रताप।
राम सरिस निस्पृह परम, धर्म सरिस निष्पाप॥
यहाँ उपमेय गाँधीजी का कथन नहीं है।

(ख) भारत-माता-चरण में नख इव रहें अभिन्न।
यही लालसा नित रहे, इसी हेतु हों खिन्न!॥
यहाँ देश-भक्त उपमेयका कथन नहीं है।

अस्तु, प्रसंग-वश मुझे निवेदन करना पड़ता है कि शिक्षक के उपर्युक्त कर्त्तव्य को पहचानकर चलने में मुझे कई स्थानों पर हेडमास्टरी से हटना पड़ा। कुछ कमिटियों ने अवस्था कुछ ऐसी कर रखी है कि गांधीजी के उपदेश पर कभी कोई शिक्षक चल ही नहीं सकता। लड़कों को आंख मूंदकर तरक्की देते चले जाइये। चोरी करें तो करने दीजिये। निकालने पर सेक्रेटरी द्वारा लाकर वे पुनः बैठाये जायँ तो बैठने दीजिये। सेक्रेटरी के आदेश से इन्हें भी आदर-पूर्वक प्रोमोशन दे दीजिये। वेतन कम मिले तो ले लीजिये पर दस्तखत पूरे पर कर दीजिये। ये सब असत्य और अन्याय के ज्वलंत उदाहरण हैं। पुनः स्कूलके हितके लिये, जिसमें लड़कों का हित निहित है, जान लड़ा दोजिये और बदले में दुत्कार सुनिये, घोर दुर्व्यवहार का दर्शन कीजिये। और मजा यह कि इन बातों में सरकार से भी तिरस्कार सहिये। एक नमूना पेश करता हूँ जिसमें लोकहित हो। धनबाद के

उपमान-लुप्ता—

अखिल जगत में आँख पसार। देखा अच्छी तौर निहार।
पर तुमसा पाया न अनूप। कहीं किसी को गाँधी भूप! ॥
यहाँ उपमान का पता नहीं।

धर्म-लुप्ता—

अंगरेजका राज्य था रावण - राज्य समान।
राम-राज्य की स्थापना करते परम सुजान॥
यहाँ समान धर्म ला पता है।

वाचक-लुप्ता—

(क) अहि-भक्षक, रक्षक-मनुज वाहन विष्णु ललाम।
बिश्व-विदित गाँधी गरुड़ को नित कोटि प्रणाम॥
यहाँ वाचक लुप्त है।

अन्तर्गत चिरकुंडा में युगल किशोर रामरक्षपाल हिंदी हाई स्कूल का मैं हेडमास्टर था। ग्यारहवें वर्ग की स्वीकृति और अनुदान की प्राप्ति के प्रयत्न में मुझे पटना आना और कुछ काल तक रहना पड़ा। कमिटी ने और जो कुछ किया सो तो किया ही, इस काल का मेरा वेतन और दैनिक भत्ता, यहाँ तक कि रेल भाड़ा भी नहीं दिये। इस तरह इसने साफ़ और सीधे बे-ईमानी का रास्ता पकड़ा। डिपार्टमेंट में अपील करने पर इन्स्पेक्टर साहिब ने अपनी रिपोर्ट में, लिखित आज्ञाकी अवहेलना करते हुए, कहा, "सेक्रेटरी से लिखित आज्ञा लेकर स्कूल के ये सब कार्य नहीं किये गये। हो सकता है कि हेडमास्टर का हृदय बहुत अच्छा हो पर साधारण समझ और बुद्धिमत्ता का उनमें अवश्य अभाव रहा अथवा आदर्शवाद की भावना से अणुप्राणित हो, जानबूझकर, उन्होंने ये सब कार्य किये।

(ख) प्रिय चितौर, चारु यह राज मयंक।
शोभे जाँ क्षत्राणी-भस्म सु-अंक॥

वाचक-धर्म-लुप्ता—

(क) चंद्रवदनि! भारत-जननि! सुषमा-अवनि अतूल।
विश्व-प्रेम-मंजुल-धरणि! मुद-मंगल-मृदु-मूल॥

यहाँ वदन उपमेय, चंद्र उपमान हैं पर धर्म और वाचक लुप्त हैं।

(ख) सूर्यमुखी! तू धन्य है, धन्य, धन्य, अति धन्य।
नित प्रकाश की ओर मुख, हरि प्रिय परस सु-पुण्य॥

अतः कमिटी ने जो कुछ किया सब ठीक किया।" इस प्रकार श्रीमान् इन्स्पेक्टर साहिब ने भी कमिटी की पीठ ठोक दी और इस नग्न अन्याय का समर्थन किया। और आश्चर्य तो यह है कि श्रीमान् डिपुटी डायरेक्टर ने भी बिना कुछ बिचार किये हाँ में हाँ मिला दिया!

मैंने इस संबंध में शिक्षा-विभाग के सेक्रेटरी के पास १ अगस्त, १९५८ को लिखा। लगभग दो साल बीत गये पर अभीतक कोई भी उत्तर नहीं मिला!

अच्छे हृदय से प्रेरित होकर और आदर्श के पालन में तत्पर होकर काम करने का यह नतीजा, यह दंड! इस प्रकार स्पष्ट रूप से स्कूल की धार्मिकता पर, विद्यार्थियों की नैतिकता पर और शिक्षकों की कर्त्तव्यपरायणता और आदर्शप्रियता पर कुठाराघात किया गया। किंतु इस घोर असत्य के वातावरण में मैं सत्य कह रहा हूँ इसका प्रमाण? प्रमाण हाज़िर है। छोटानागपुर के इन्सपेक्टर साहिब की रिपोर्ट से और धनबाद के मुन्सिफ् महोदय के फैसले से उद्धरण पेश करता हूँ। फैसले में उक्त कमिटी की बेईमानी का विशद वर्णन है—

यह भारतमाता के प्रति कहा गया है जिसका मुख सूर्य की ओर रहता है और जो भगवान् विष्णु के अथवा राम-कृष्ण के स्पर्श से पवित्र है।

धर्मोपमान-लुप्ता—

भारत के सदृश नहीं अपर देश जग बीच।
पै इसको हैं नरक सम बना रहे नर नीच॥

वाचकोपमेय-लुप्ता—

सतत आचरें सत्यमें, सत्य-रूप भगवान।
देख-देख आचरण को मोहें मनुज महान॥

अर्थात् सत्य-रूप भगवान् का सत्य-पालन में आचरण करते हैं। यहाँ उपमेय (गाँधी) और वाचक लुप्त हैं।

The Headmaster may have a very good heart, but he, certainly, either lacked common intelligence, or prudence to absent himself from the school on such missions, without the Secretary's written orders, or he, deliberately, did it, out of a sense of idealism.

—S. Thakur
Inspector of Schools,
Chotanagpur Division
22-9-54

There is enough evidence on the record to show that it was due to the ceaseless efforts of the plaintiff that the school classes could be recognised, grant-in-aid could be obtained, the University fees of the students could be deposited, in time, at Patna, and permission for appearing at the Matriculation Examination could be obtained in favour of Sharda Debi.......But equity and justice demanded that the conduct of the plaintiff should have been condoned in as much as he did a very valuable piece of work in the interest of the

वाचकोपमान-लुप्ता—

करमचंद क्या शोच रहा यह है अवनी पर।
भारत - माता - करम - सिंधु - निःसृत धरणी पर॥
राहु ग्रास करने दौड़ा, मोहन ने मारा।
केतु - सुयश इनका फहराता है अति न्यारा॥
यहाँ चंद्र उपमान और वाचक लुप्त हैं।

धर्म-उपमान-वाचक-लुप्ता—

गले घड़ी, करमें लकुट, अर्द्ध वस्त्र है देह!
दिव्य चक्षु, गजराज - भुज, भरित स्वदेश-सनेह॥

---

school by his long stay at Patna, which was even highly appreciated by defendants nos. 2 and 5 (Secretary and President) as will appear from the letters, filed on behalf of the plaintiff. In stead, I find that, when all the works of the school were completed by the Headmaster, and when the authorities became relieved of the worries, which had been haunting them so long, they backed out, and punished the Headmaster by withholding his pay, dearness allowance etc. for the period from 22 nd. October, 1952 to 9th. December 1952, which period was considered to be leave without pay.

—D. P. Mukherjee
Munsiff 2nd Court, Dhanbad
4-1-58

इन्स्पेक्टर साहिब ने प्रत्यक्षतः आदर्शवाद का खंडन किया है। इन्स्पेक्टर साहिब का विचार इस संबंध में कहाँ तक पुष्ट और परिमार्जित है निम्नाङ्कित उद्धरणों से वाचक वृंद स्वयं विचार लेंगे—

A spirit of idealism should animate the activities, not only of the officers, but, also, of all the assistants of all grades. I would like this spirit of idealism to

भुजा की उपमा गजराज की भुजा से दी जा सकती है, न कि गजराज से अतः यहाँ उपमान लुप्त है। धर्म और वाचक तो लुप्त हैं ही।

मालोपमा

जहाँ एक उपमेय की अनेक उपमाएँ दी जाती हैं वहाँ मालोपमा होती है। इसके दो भेद हैं—(१) निरवयवा और (२) सावयवा।

(१) निरवयवा।

इसके तीन भेद हैं—अभिन्न-धर्मा, भिन्नधर्मा और लुप्त-धर्मा।

अभिन्न-धर्मा—

(क) टूटा मेघनाद लक्ष्मण कर, मधुसूदन-कर मधु रणवीर।
टूटा यथा कर्ण अर्जुन कर, दुंदुभि बाली-कर बल-वीर॥
टूटा ज्यों भस्मासुर हरि-कर, मुर मुरारि-कर, त्रिपुर पुरारि।
टूटा तथा नमक-कानून य गाँधी-कर गुरुसंकटधारि॥—दं०या०

---

infuse all the activities of the staff of this Court from the Registrar down to Government servants of all grades.

V. Ramaswami
Chief Justice, Patna High Court
(Indian Nation, 1-5-56)

If we are to be worthy of our country, we must have big minds, and big hearts, for small men cannot face big issues or accomplish big tasks...... If you have no ideals, then, you have no anchorage.

—Jawaharlal Nehru
(Indian Nation, 15-8-58)

(ख) टूटा भारत का बल जैसे निरस्त्रता के कटु आचार।
टूटा भारत का व्यापार-विभव ज्यों शोषण के व्यवहार॥
टूटा ज्यों हिंदू-मुस्लिम-उर पार्थक्य की नीति अपुण्य।
टूटा तथा नमक-कानून य गाँधी कर से दुखद अक्षण्ण॥—दं०या०

दोनों स्थलोंपर 'टूटा' एक ही समान धर्म होने से ये मालोपमा हैं।

(ग) तन में ईश प्रभा यथा पंकज में रवि-जोत।
चरमें गाँधी का तथा राज रहा उद्योत॥

Hold aloft high ideals, and serve with unswerving zeal.

—Govind Ballabh Pant
Home Minister, Govt. of India

Schools are good or bad, as the Headmaster is capable, energetic, and of high ideals or the reverse.

—P. C. Wren
Director of Public Instruction,
United Provinces (in his School Administration)

इस प्रकार एक नहीं चार महानुभाव एक स्वर से इस बात की पुष्टि करते हैं कि आदर्श सबों को सब अवस्थाओं में ग्रहण करना चाहिये, विशेष कर शिक्षक को, जिसको आदर्श मानव उत्पन्न करना है। महामान्य चीफ जस्टिस के विचारानुसार एक किरानी, एक चपरासी का भी जीवन आदर्श से अनुप्राणित रहना चाहिये पर हमारे इन्स्पेक्टर साहिब के विचारानुसार एक हेडमास्टर को भी इससे सदा, सर्वत्र और सर्वथा बञ्चित रहना चाहिये! 'फार्मैलिटी' रहे पर 'सिंसियरिटी' हरगिज नहीं। शिक्षा-प्रणाली 'आइडियल' हो, पर शिक्षक में 'आइडियलिज्म' हरगिज न रहे! खबरदार! नहीं तो तलवार तैयार है। शिक्षालयों में जो आज इतना नैतिक पतन दृष्टिगोचर हो रहा है उसका प्रधान कारण है शिक्षा-विभागके उच्च

भिन्न धर्मा

(क) जननी सम सुखकर सदा, दुखहर जनक समान।
लक्ष्मी सम सम्पत्तिदा मातृभूमि मम प्राण॥

(ख) महारथी, कंजूस ओ घातक परम अनेम।
यों कृप, कृपण, कृपाण को करूँ प्रणाम सप्रेम॥

यहाँ विदेशी शासन को पराक्रमी होने से कृप (अश्वत्थामा के मामा) स्वराज्य न देने से कृपण और हत्या-काण्ड रचने से कृपाण से उपमाएँ दी गई हैं।

(ग) ज्यों प्रह्लाद, निषाद, विभीषण
ओ कवि आदि जटायु हुए जग।

पदाधिकारियों में, जैसा कि ऊपर प्रदर्शित किया गया है, इसी आदर्श वाद का घोर अभाव। डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने, अच्छी तरह नब्ज तजवीज करके ही, ये बातें कही हैं जो परोक्ष रूप से .इस ओर संकेत कर रही हैं—

It would be desirable, and, also, advisable for the Rama Krishna Mission, Patna, to form a nucleus of character—building activities, and extend its field of noble work to all sorts of educational institutions, which were experiencing a veritable eclipse on the ethical front.

—Dr. Rajendra Prasad
(Searchlight 7-10-59)

इस संबंध में स्वयं भगवान् कृष्ण के ये वचन हैं—

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते॥

श्रीमदभगवद्गीता, अध्याय ३, श्लोक २१

व्यास, कबीर व नाभ[1] सखे !
रविदास लखे, पवि[2] भास यथा नग[3] ॥
ज्यों शबरी,[4] कुबरी[5] कटु कोख,
सु-पंकज पंक मखी पुनि पन्नग[6] ।
त्योंही तमी[7] ! तुम से य जवाहर[8]
शुभ्र स्वराज सुराज[9] पगे पग ॥

—हिमालय

लुप्त धर्मा—

इसमें धर्म लुप्त रहता है। यथा,

(क) कलियुगपर ज्यों सतयुग, भव-बंधनपर ज्यों शुकदेव विराज।
दरिद्रता पर कल्पवृक्ष ज्यों, ज्यों निदाघ पर पावस राज ॥
कदली-दल पर अनिल यथा, घावोंपर ज्यों सर्जरी सुहाय।
मूछों ऊपर यथा उस्तुरा, बृटिश राज्य पर गाँधी भायँ ॥

(ख) अंधकार पर सहस्रांशु ज्यों, वृत्रासुर पर शक्र महान।
रावणपर ज्यों राम कंसपर यथा कृष्ण अच्युत भगवान ॥

---

१ भक्तमाल के रचयिता नाभा जी जो जाति के डोम थे। २ पत्थर अर्थात् हीरा ३ पर्वत ४-५ शबरी और कुबरी नीच कोख से उत्पन्न हुई थीं। ६ सर्प ७ रात्रि; यहाँ १४-८-१९४७ की अमावास्या की अर्द्धरात्रि जब कि भारत को स्वराज्य सौंपा गया था। अभिप्राय यह कि जिस प्रकार राक्षसी इत्यादि की नीच कोख से प्रह्लाद प्रभृति का प्रादुर्भाव हुआ था उसी प्रकार इस अमावास्या की घोर अर्द्धरात्रि से परम शुभ्र और शोभन स्वराज्य का आविर्भाव हुआ। ८ रत्नविशेष ९ शाघ रहा है।

त्रिपुरासुर पर ज्यों त्रिशूलधर, यथा राहुपर हरि रणधीर।
सहसबाहु पर परशुराम ज्यों बृटिश बाहु पर गाँधी वीर ॥
(ग) [१] सिंधुराज पर यथा [२] धनंजय, जरासंध पर भीम विशाल।
यथा सिंधु पर बड़वानल औ वन पर दावानल विकराल ॥
दुर्योधनपर यथा युधिष्ठिर, न्याय-धर्म औ सत्य-निधान।
तथा बृटिश शासन अन्यायी के ऊपर गाँधी धीमान ॥
(घ) महाकाल पर मृत्युञ्जय ज्यों, ग्रह-गण पर गायत्री पुण्य।
मधुकैटभ पर विष्णु, नागपर[३] अजी! यथा वार्ष्णेय[४] वरेण्य[५] ॥
महिरावण पर, कालनेमि पर यथा वीर-वर पवन-कुमार।
पाला ज्यों बारूद पर तथा अरि पर गाँधी गुण-आगार ॥
(ङ) ज्यों अशांति पर शांति, कुसंयम पर शुभ संयम सौख्य-निधान।
यथा क्रोध पर सुठि निरोध औ यथा लोभपर तोष प्रधान ॥
यथा विषय पर वर विराग औ दुःख शोक पर वेद पुराण।
यथा ज्ञान अज्ञान-शीश, गर्हित शासन पर गाँधी मान्य ॥
(च) ज्यों असत्य पर श्रीश[६] सत्यनारायण, हरिश्चंद्र महिपाल।
हिंसा पर ज्यों बुद्धदेव औ महावीर प्रभु परम कृपाल ॥
दुर्गुण पर ज्यों सद्गुण, षट्रिपु पर ज्यों शुभ सुप्रभ प्रज्ञान।
महा प्रतापी, पापी, संतापी पर त्यों गाँधी सुज्ञान ॥दं०या०

---

१ जयद्रथ २ अर्जुन ३ कालिय नाग ४ श्री कृष्ण ५ श्रेष्ठ ६ लक्ष्मीपति।

(२) सावयवा मालोपमा—

गंगा, स्वर्गंगा सरिस, संसद, संसद-देव ॥
प्रिय राजेन्द्र सुरेन्द्र हैं, भारत ! स्वर्ग त्वमेव ॥

यहाँ भारत को स्वर्ग से उपामा दी गई है। इसकी गंगा, लोक-संसद और राष्ट्रपति अवयवों को भी स्वर्गंगा, देव-संसद और सुरेन्द्र, स्वर्ग के अवयवों से उपमाएँ दी गई हैं। अतः यह सावयव मालोपमा है।

रशनोपमा—

इसमें यथोत्तर उपमेय को उपमान बनाया जाता है। यथा,

वेश सरिस विद्या लसे, विद्या सम वर बुद्धि।
बुद्धि समान क्रिया लसे, क्रिया लसे ज्यों शुद्धि ॥
शुद्धि लसे ज्यों सुर-सरित, सुर-सरि हरि-पद तुल्य।
हरिपद संत-हृदय सरिस, अनुपम परम अमूल्य ॥
संत-हृदय गाँधी-हृदय शुचि सदृश दिखलाय।
निर्विकार, निश्छल, सरल, निर्मल-नीति-निकाय ॥

यहाँ विद्या उपमेय और वेश उपमान, फिर विद्या उपमान और बुद्धि उपमेय हैं। इसी प्रकार शृंखला बद्ध वर्णन से यह रशनोपमा है।

समुच्चयोपमा—

इसमें उपमान के अनेक धर्मों का समूह रहता है। यथा,

सत्य, न्याय औ धीरता, सहनशीलता, ज्ञान।
दूरदर्शिता, धर्म में धर्मराज धीमान[१] ! ॥

---

१ गाँधीजी।

यहाँ धर्मराज उपमान के सत्य इत्यादि अनेक धर्मों का समूह है।

लक्ष्योपमा—

यहाँ उपमा के वाचक शब्द का प्रयोग न कर लाक्षणिक शब्द द्वारा सादृश्य दिखलाया जाता है। यथा।

शिवा और राणाप्रताप से बल-विक्रम में।
साहस, शुभ्र स्वदेश-भक्ति, अनुपम शम, दम में॥
सहन-शीलता और धीरता, निश्छलता में।
होड़ ले रहे तुम[1] सु-वीरता, जन-प्रियता में॥

यहाँ किसी वाचक शब्द का साक्षात् प्रयोग न कर 'होड़ ले रहे' इन लाक्षणिक शब्दों द्वारा सादृश्य प्रदर्शित किया गया है।

वैधर्म्योपमा—

इसमें उपमेय और उपमान के धर्म एक दूसरे से विपरीत रहते हैं। यथा—

उस नीले आकाशसे होती जीवन[2]-वृष्टि।
इस नीले[3] आकाशसे मृत्यु-कृशानु[4]-कुवृष्टि॥

व्यंग्योपमा—

इसमें वाच्यार्थ में स्पष्ट उपमा न देकर ध्वनि द्वारा उपमा दी जाती है। यथा,

---

१ गाँधीजा। २ जल। ३ निलहे रूप। ४ अग्नि।

क्षत्रिय-कुल में हुए एक से एक वीर-वर।
ब्राह्मण-कुल में हुए एक से एक धर्म-चर॥
हुआ आज तक कुल में एक नहीं ऐसा नर।
चिंता दुरी वैश्य कुल की यह तुम को पाकर॥

यहाँ स्पष्ट रूप से न कहकर व्यंग्यार्थ की ध्वनि में यह उपमा लक्षित है कि गाँधीजी क्षत्रिय और ब्राह्मण के समान हैं।

२. अनन्वय

जहाँ एक ही वस्तु का उपमान और उपमेय दोनों रूपों से कथन होता है उसको अनन्वय कहते हैं। यथा,

(क) देखा सब ओर से ही पोर-पोर, छोर-छोर,
काले और गोर सब भाँति अति गौर से।
देखा है विचार के विचार ओ आचार सब,
बुद्धि और ज्ञान की गंभीर, धीर दौड़ से॥
देखा न किसी को और कहीं इस वसुधा पै,
पश्चिम जगत ने मिलाके इन्हें और से।
देखा जो किसी को कहीं पर गाँधी के समान,
देखा बस गाँधी को ही अहो! सब तौर से॥

यह प्रसंग तब का है जब अमेरिका में लोगों ने संसार भर पर दृष्टि डालकर गाँधी जी को ही सर्व-श्रेष्ठ मानव माना था। यहाँ गाँधी जी उपमान और उपमेय दोनों रूपों से कथित हैं।

(ख) हैं राजेन्द्र समान, राष्ट्राधिप राजेन्द्र ही।
नेहरू सम धीमान, नेहरू ही हैं मंत्रिवर ॥

लुप्त अनन्वय—

रण रावण औ राम, था रण रावण-राम सम।
गाँधी का संग्राम, था गाँधी - संग्राम सम ॥

यहाँ पहली पंक्ति में महत्त्वमय और दूसरी में अहिंसात्मक धर्म लुप्त हैं।

३. असम

उपमान का सर्वथा अभाव असम कहलाता है। यथा,

(क) दक्षिण अफ्रिका में सु-भारतीय जनता के
दाहे दुख दुसह, असह दुख सह के।
पीड़ित-दलित अति जन थे चंपारन में,
उनको उबारा, दुरा काली काली-दह से ॥
नमक भी ठीक से न मिलता था जनता को,
नमक-नियम तोड़ा, अहिंसा को गहके।
नरक की यातना था भोग रहा भारत हा!
उसको उधारा, अन्य[१] तारक न तुम से ॥

गाँधीजी के समान अन्य तारक नहीं है, इस कथन में उपमान का सर्वथा अभाव है।

(ख) ठूसा[२] नाली में, न पै क्रोध किसी भी तौर।
वैरी से बदला न ले, गाँधी तज को और ?

---

१ तारनेवाला; उद्धारक २ अफ्रिका में कुछ दुष्ट गोरों ने इन्हें मार-पीटकर नाली में ठूस दिया था।

यहाँ गाँधी जी के सदृश दूसरा कोई नहीं, इस कथन में उपमान का पूर्णतया अभाव है।

असम की ध्वनि

हिंसा की ही धूम, मची आजतक युद्ध में।
गाँधी के पद चूम, लहा अहिंसा से विजय!॥

यहाँ ध्वनि यह निकलती है कि गाँधी के समान कोई नहीं हुआ।

४. उदाहरण

जहाँ साधारण तौर पर किसी कही हुई बात का एक अंश लेकर उदाहरण दिखाया जाता है वहाँ उदाहरण अलङ्कार होता है। यथा,

(क) नरको नरका अजी! चाहिये सतत सहारा।
नहीं समीप स्थिति से ही हो काम हमारा॥
करे डाक द्वारा कोई, कोई विचार से।
कोई स्वर्ग गये प्राणी वाणी सु-चारु से॥
जैसे तुलसीदास से हम मिलते हैं रोज ही।
करते नित आलाप हैं, पाते उनसे मौज सी[1]॥

(ख) [2]आकर्षण-शक्ति का प्रभाव विश्वमात्र पर,
चाहे इसे जाने अथवा न जाने कोई नर।

---

१. "बापू के आशीर्वाद" पृष्ठ १४ (भूमिका)

2. 'Light of India' by M. S. Deshpande, p-105

किंतु वैज्ञानिकों ने है काम लिया इससे यों,
डाला जिसने है जग को आश्चर्य में प्रचुर ॥
यों ही वर्ण-धर्म को निकाल ओ प्रयोग कर,
हिंदू-धर्म ने है विश्व को दिया चकित कर ।
हिन्दू जब हुए ग्रस्त अकर्मण्यता से अति,
जाति-पाँति भाँति-भाँति की हुईं असंख्य खर[१] ॥

ये गाँधीजी के वचन हैं।

(ग) गाँधीजी ने अजी ! श्वेत शासन संहारा ।
अंधकार को दूर किया, उँजियार पसारा ॥
पद्म-पुञ्ज को खिला, मोद-मुद सारा न्यारा ।
निज प्रताप से रवि ने ज्यों शशिका बल मारा ॥

यहाँ गाँधीजी रवि और श्वेत शासन शशि हैं।

५. उपमेयोपमा

जहाँ उपमेय और उपमान को परस्पर एक दूसरे का उपमान और उपमेय बनाया जाय वहाँ उपमेयोपमा अलङ्कार होता है। यथा,

(क) दंडी[२] अमरनाथ, वदरी, केदार सु-सदृश ।
अमरनाथ, वदरी, केदार सु-दंडी सदृश ॥

---

१ तीक्ष्ण, हानिकारक, निष्ठुर, नृशंस । २ गाँधीजी ने अपनी दंडी-यात्रा को अमरनाथ, वदरी और केदार की यात्राओं के समान माना था। पंडित मोतीलाल नेहरू ने तो इसे राम का लंका-यात्रा के तुल्य ही माना था।

महा पुण्य के स्थल सब ही अति पावन, प्यारे।
अघनाशक, शुचि-भाव-सौख्य उपजाते न्यारे॥
(ख) गाँधी स्वयंसेवक समान न रंच अंतर जानिये।
गाँधी समान य स्वयंसेवक यह निरंतर मानिये॥
साबरमती[१] सो है अयोध्या सरिस अतिशय पावनी।
है प्रिय अयोध्या सो सखे! साबरमती सम भावनी॥

६ ललितोपमा

जहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की लीलाएँ वर्णित कर समता दिखलाई जाती है वहाँ ललितोपमा होती है। यथा,

काँग्रेस की कार्य-कारिणी सभा, सु-प्रभा-पूर्ण
"भारत को छोड़ो" जहाँ प्रस्ताव अमोघ[२] था।
जगको जगाती, जगमगाती थी भारत को,
ओज को उगाती थी, मिटाती अघ-ओघ[३] को॥
घर-घर साहस बुलाती, लाती बल अति,
भय को भगाती औ दुराती कुष्ट[४] रोग को।
पार्लिमेंट को लजाती, छाती घोर आतंक वाँ,
चबाती थी उसके सभी कटु प्रयोग को॥

यहाँ काँग्रेस की कार्यकारिणी सभा और बृटिश पार्लियामेंट में क्रियाओं द्वारा समता दिखलाई गई है।

---

१ गांधीजी का आश्रम २ अचूक ३ समूह ४ श्वेत कुष्ठ अर्थात् श्वेत शासन।

७. प्रतीप

प्रतीप का अर्थ है विपरीत। इसके पाँच प्रकार हैं—

प्रथम—

इसमें प्रसिद्ध उपमान की उपमेय रूप से कल्पना की जाती है। यथा,

(क) स्वर्ण तपे प्रिय मुकुट हो, लोह तपे हो तोप।
काँग्रेस-चर ! चर-अचर में तव गुण का आरोप ॥

(ख) रत्नाकर ! तू दीखता गाँधी-हृदय समान।
क्यों न बड़ाई हो भला, तेरी सलिल-निधान ? ॥

द्वितीय—

इसमें प्रसिद्ध उपमान की उपमेय रूप से कल्पना कर उपमेय का अनादर किया जाता है। यथा,

कर न शान तू राज्य की, तव सम शाहजहान।
चंद्रगुप्त व अशोक औ अकबर रहे महान ॥

यहाँ शाहजहाँ आदि प्रसिद्ध उपमानों को उपमेय कहकर विदेशी शासक की शान तोड़ी गई है। अर्थात् वे यह न समझें कि राज्य चलाना वे ही जानते हैं और हम भारतीय इसका मर्म क्या जानें ?

तृतीय—

इसमें उपमेय को उपमान मानकर प्रसिद्ध उपमान का अनादर किया जाता है। यथा,

(क) सिंह[१] ! न बल का गर्व कर, जग में सिंह अनेक।
यहाँ तो घर-घर सिंह[२] हैं तव समान दृढ़-टेक ॥

(ख) शशि । करता तू शान व्यर्थ ही शीतलता की।
व्यर्थ शान पुनि तेरी अतिशय उज्ज्वलता की ॥
व्यर्थ ज्योत्स्ना का अभिमान अरे! रखता तू।
गाँधी तेरे तुल्य सबों में, खुद लखता तू ॥

चतुर्थ—

यहाँ उपमान को उपमेय की उपमा के अयोग्य समझा जाता है। यथा,

धरती में गंदगी औ जल चले नीच चाल,
पावक जलाता नित वस्तु निज अंक की।
गगन में चपला है, चाँप देती मौत से सो,
पवन बहाता जग आँधी है आतंक की ॥
सूरज का निशि में प्रताप सब लुप्त और
दिन में विलुप्त सब चाँदनी मयंक की।
रंक ये सकल, समता न कर सकें तव,
गाँधी ! तुम में है बात एक न कलंक की ! ॥

यहाँ धरती, जल, पावक प्रभृति उपमानों को गाँधी उपमेय की उपमा के अयोग्य ठहराया गया।

---

१ बृटिश सिंह २ सिंह उपाधिधारी मनुष्य

पचम—

यहाँ उपमान की, कैमर्थ्य द्वारा, निष्प्रयोजनता सिद्ध की जाती है। कैमर्थ्य (किमर्थम्) का अर्थ है जब यह है ही तब उसका क्या प्रयोजन ? अर्थात् वह व्यर्थ है। यथा,

(क) तव उच्चता विराज विमल, नभ में न लसे सो।
तव धीरता-अचलता शेष न मेरु बसे सो॥
तव गभीरता वारिधि में न विभो ! निवसे सो।
तव शूरता नहीं सुर-अधिपति में विलसे सो॥

'नभ में न लसे सो' इत्यादि वर्णनो से यह दिखलाया गया कि गाँधी के रहते नभ इत्यादि की स्थितियाँ व्यर्थ हैं।

(ख) साहस अजीब तेरा, अति सघन ओ घनेरा।
है सिंह भी सिहाता, नरसिंह भी लजाता॥
तव कीर्त्ति शुभ्र छाई, जैसी नहीं जुन्हाई।
जैसी न अमर की है, मुनि, मनुज अपर की है॥

यहाँ सिंह, नरसिंह, जुन्हाई, अमर तथा अपर मनुज कीर्त्तियाँ उपमानों का, गाँधी जी के साहस और उनकी कीर्त्ति, उपमेय के समीप कैमर्थ्य बताया गया है।

(ग) देव सकल यह चाहें, तज देवत्व।
होते गाँधी, लहते अमित महत्त्व !॥

---

१ नरसिंह भगवान् के लजाने की बात यह है कि वह तो ऐसे पर टूटे जो उनसे कहीं घट था और गाँधी जी ऐसे पर टूटे जो इनसे बे-हिसाब बढ़ा-चढ़ा था।

इसमें उपमान देव की उपमेय गाँधी के निकट निष्प्रयोजनता प्रदर्शित की गई।

८ रूपक

उपमेय में उपमान का अभेद रूप से आरोप रूपक है। इसके मुख्य भेद हैं—अभेद और ताद्रूप्य। अभेद के तीन भेद हैं—सम, अधिक और न्यून।

सम। इसके तीन भेद हैं—सावयव, निरवयव और परंपरित।

सावयव के दो भेद हैं—समस्त-वस्तु-विषय और एकदेश-विवर्त्ति।

अभेदरूपक-सम-सावयव-समस्तवस्तुविषय—

अवयवों अर्थात् अंगों के साथ उपमेय में उपमान का आरोप सावयव है। जहाँ सभी आरोप शब्द द्वारा कथित हों वह समस्त-वस्तु-विषय कहलाता है। यथा,

(क) गरुड़ विष्णु के वाहन हैं, धारण करते हैं वे दो पक्ष।
विषधर-रिपु हैं, रह सकते हैं बिषधर उनके नहीं समक्ष॥
गाँधी वाहन धवल धर्म के, सत्य-अहिंसा इनके पक्ष।
शासक परम भयंकर विषधर रह सकते इनके न समक्ष॥

(ख) हो तुम[1] पुनः चकोर रूप रहती टक लगी चंद पर नित्य।
शीतलता-ज्योत्स्ना के प्रेमी परम अपूर्व मंजु अति चित्त॥

---

१. गांधी जी।

तब तो तुम हो खाने चले अजी ! अंगरेजी राज्य य आग।
मुँह में औ तब पेट में अजब और गजब की है कुछ पाग॥

(ग) हो तुम[1] निर्भय,[2] ये भी हैं निर्भय, भय भागे इन्हें विलोक।
तुम निष्काम, न कम तुम से हैं ये निष्काम, जगत-आलोक॥
एक समान अंक भेंटो तुम, गुनो न भेद जाति औ पाँति।
ये भी अंग लगाते सब को एक समान, एक ही भाँति॥
—दं० या०

(घ) उदधि ! तुम्हारे तन में है प्रिय नमक भरा अतिशय भरपूर।
गाँधी के भी रोम-रोम में करता रमण नमक का नूर॥
तुम खाड़ियाँ बनाते हो भीतर-भीतर ही तट को खोद।
ये खाड़ियाँ बनावेंगे, पचकावेंगे शासक की तोंद॥
तुम्हें तीर दो, इनके भी हैं नहीं अधिक बस दो ही तीर।
सत्य-अहिंसा की मर्यादा नहीं लाँघते ये रणधीर॥
तुम में बाड़वाग्नि, इनमें प्रेमाग्नि, जलाती इनका गात।
तुम में हैं तरंग, इनमें पर-हित-तरंग उठतीं दिन-रात॥
—दं० या०

(ङ) सत्य-अहिंसा पक्ष दो, युगल प्रबल गुण-ग्राम।
काँग्रेस-चर वर विहग के, गये, जायँ यमधाम॥

सावयव एकदेशविवर्त्ति—

इसमें किसी एक आरोप का शब्दतः कथन नहीं होता। यथा,

(क) पर-शासन की विगत निशि, उदित दिनेश स्वराज।
भारत शोभन, सुखद सर, विकसित सरसिज आज॥

---

१. अरब सागर। २. गाँधी जी।

यहाँ सर्वत्र शाब्द आरोप विद्यमान् हैं। केवल सरसिज के साथ उसके उपमेय जन-समुदाय का शब्द द्वारा कथन नहीं है। पर इसका सहज ही आभास हो जाता है।

(ख) गाँधी-रवि-आलोक लह शत्रु-कुमुद अति मंद।
कमल हुए प्रफुलित सभी पाकर परमानंद॥

यहाँ कमल के साथ उसके उपमेय भारत-हितैषी शब्द का कथन नहीं है।

(ग) शासक-नखत चमक रहे, दमक रहे थे अभ्र।
लोकबंधु[१]-गाँधी उगे, गये सकल निज कब्र[२]॥

यहाँ अभ्र के साथ उसके उपमेय भारत शब्द का कथन नहीं है।

(घ) बहुत काल तक किये बहुत लोगों ने बहु श्रम।
उड़े स्वराज्य-गगन-सु-दूर तक करके विक्रम॥
छाया खींच सिंहिका पै लाई नित बाधा।
गाँधी-हनूमान ने हन उसको, व्रत साधा॥

यहाँ सिंहिका के साथ उसके उपमेय इंगलैंड शब्द का उल्लेख नहीं है।

(ङ) प्रिय[3] क्रिप्स इत्यादि पधारे यहाँ मत लेकर के अपने-अपने।
बहु लोग लुभा करके उनके वर मंत्र लगे जपने-जपने॥

---

१. सूर्य। २. यहाँ इंगलेंड से अभिप्राय है। ३. क्रिप्स इत्यादि ब्रिटिश सरकार द्वारा भेजे गये व्यक्तियों ने स्वराज्य का एक ढाँचा भारत के प्रमुख नेताओं के समक्ष प्रस्तुत किया था। लोगों ने इसका स्वागत किया पर गाँधीजी ने इसे तत्त्वहीन समझा और अग्राह्य कहा।

इनकार किये दुख, सोच इसे कुछ लोग लगे कँपने-कँपने।
गुरु गाँधी[१]-सुहंस समीप मिटा तम, "भ्राह्मन सो सपने-सपने ॥

यहाँ तम के साथ इसके उपमेय प्रपंच का शब्द द्वारा उल्लेख नहीं है।

(च) अहंकार के गर्जन से जिसने जन-मन में अति आतंक।
फैलाया औ किया सबों मो सर, रहकरके परम अशंक ॥
उस पराक्रमी पंचानन[२] के केसर को धर, खूब हिलाय।
सत्य-अहिंसा वज्र[३]-दंड से जिसने उसको दिया दुराय ॥
—दं० या०

यहाँ पंचानन के साथ उसके उपमेय विदेशी शासन का शब्द द्वारा कथन नहीं है।

निरवयव रूपक—

अवयव रहित केवल उपमान का उपमेय में आरोप निरवयवक रूपक है। इसके भी दो भेद हैं—शुद्ध और मालारूप। शुद्ध अर्थात् जिसमें एक उपमेय में एक उपमान का आरोप हो। यथा,

(क) सत्य-अहिंसा दोनों, हैं ब्रह्मास्त्र।
शासन अब बच सके न कहता शास्त्र ॥

(ख) हिंसा की भरमार निरख कर भारत में दुखदाई।
हिंसा में अभिरुचि शासक की लख, व्याकुलता छाई ॥

---

१. सूर्य। २. सिंह। ३. बिजली की छड़ी।

गाँधी-बुद्ध प्रबुद्ध अनूपम परम अहिंसा लाई।
अतिशय शुद्ध, विशुद्ध, सुधोपम सुखमय राह दिखाई॥
—दं० या०

(ग) गुने कैसे गाथा तव सुगुरण की जो त्रिपथगा।
चुने क्या-क्या? न्यारी तव कुसुम-क्यारी सुरभिदा॥
धुने माथा कोई इस विपद में क्यों, विकट जो?।
बुने प्राणों से ही जग परम स्वातंत्र्य-पट को॥
—हिमालय

यह उक्ति अमर-शहीदों के प्रति है।

(घ) पाकिस्तान-सुचाँद औ भारत पद्म पुनीत।
मुदित परस्पर दरस से हों यह बदा न मीत!॥

यहाँ पाकिस्तान में चाँद और भारत में पद्म के आरोप हैं। यहाँ भारत के पाकिस्तान से वियोग का दुख प्रदर्शित है।

(ङ) न्याय का किस दिन नहीं था हा! गला घोंटा गया।
कब न निलहा, दोष रहते भी, झटति छोड़ा गया!॥
लाट छोटे औ बड़े अन्याय के ही भक्त थे।
देश भक्षण में युगल ये व्याघ्र, सिंह प्रमत्त थे॥

यहाँ छोटे लाट में व्याघ्र का आरोप है और बड़े लाट में सिंह का।

(च) बस, थे सहायक मजिस्ट्रेट गये बनाये नीलहे।
यों भेड़िये सु-गड़ेरिये थे बने शासक शील से॥
आगार निलहों के, अनय से, बने कारागार थे।
जब चाहते, थे ठूसते उनमें, अकरुण अपार थे॥

(छ) निलहे नील कमल समान ही अति प्रफुलित थे।
सरिस नील मणि चमक रहे थे, मूल्य-रहित थे॥
नील जलद सम जल न, अग्नि पै थे बसाते।
दुरा निदाघ जलद गाँधी के ही बाँ जाते॥

(ज) मृग[1] को ले निज अंक चंद्र मृग-लांछन वर्णित।
नित मारे मृग मृगपति, सिंह जगत में सु-विदित॥
पै मृग-लांछन ईश[2] नेत्र, ज्योत्स्ना-अधिनायक।
परम वंद्य औ सिंह काल, दुख-तम का नायक॥

यहाँ मृग-लांछन में ईश-नेत्र का आरोप है और सिंह में कालका।

(झ) बृटिश गवर्नमेंट निर्मित यह नमक नियम था जटिल जहाज।
गाँधी-बाहु विपुल बल सागर, डूबा सो, सह दंभ समाज॥
सीता-स्वतंत्रता जयमाल लिये, धरती पग, रही विराज।
परतंत्रता-विपत्ति-लता पर गिरा गिरा इस दम गुरु गाज।

यहाँ नमक नियम में जहाज, गाँधी बाहुबल में सागर, स्वतंत्रता में सीता और परतंत्रता में विपत्तिलता के आरोप हैं।

---

१ पूर्वार्द्ध दो पंक्तियाँ महाकवि माघकृत "शिशुपाल-वध" के एक श्लोक का अनुवाद हैं। यह कृष्ण जी को बलदेव जी का, शिशुपाल के प्रति कठोर हिंसा का व्यवहार करने के लिये, उपदेश है। यहाँ उत्तरार्द्ध दो नवीन पंक्तियाँ रचकर चंद्र का पक्ष लेकर, अहिंसा का, सद्भाव का महत्त्व दिखलाया गया है। २ श्रुति वाक्य—चंद्रमा मनसा जातः चक्षोः सूर्य अजायत। पुनः गीता के वचन—(१) अनादि मध्यान्तमनंत वीर्यमनंतबाहुं, शशि सूर्य नेत्रम्। (२) प्रभास्मि शशि सूर्ययोः।

(ञ) मेटे सब कर्म और धर्म इस धरणी पै,
घेंट धर चाँपा सब कला औ उद्योग को।
अन्नहीन, वस्त्रहीन, वित्त से विहीन और
पाप-पीन किया जन, ढाया रोग-सोग को॥
फूट और वैर को चखाया सुधा के समान,
एकता सुधा को सोख, सोखा सुख-भोग को।
सब को सुधार, डार सत्य औषधि अमृत,
गाँधी ने दुराया दुष्ट शासन कुरोग को॥

यहाँ एकता में सुधा, सत्य में अमृत-औषधि और शासन में कुरोग के आरोप हैं।

(ट) "क्षमा करेंगे" बोले रवि, 'है किया आपका समय विनष्ट'।
गाँधीजी ने कहा, "नहीं, मैंने न तजा क्षण एक अभीष्ट॥
चर्खा चलता रहा व चलता रहा आपसे यह आलाप।
समझूँ प्रतिपल इसे चलाना प्रतिपल विभव बढ़ाना माप"॥

(ठ) होना नत अन्याय ढिग [1]पातक है मतिमान!।
भिड़िये अपनी शक्ति भर, त्याग मोह निज प्राण॥

(ड) गाँधी हैं काँग्रेस अहो! काँग्रेस गाँधी आप।
दोनों में अन्तर नहीं, एक आतमा व्याप॥

(ढ) ओक वृक्ष जो थे गड़े, उजड़े, गिरे मुचंड।
गाँधी-आँधी जब चली भीषण परम प्रचंड॥

---

[1] Submission to injustice is a crime.

—Gandhi

(ख) राम ! रम्य आराम तव हुआ [१]असुरका धाम ।
तव अर्बुद अवतार भी, कर न सके कुछ काम ! ॥
(त) शुचि[२] शांति की जिसने सकल साम्राज्य में की स्थापना ।
ओ थी वही एकत्व की प्रिय ख्याति इसमें शोभना ॥
यह चक्र उसी अशोक का हो रहा राष्ट्रध्वजा-हृदय ।
धिक ! शांति ओ एकत्व का इस पर न जो जन-उर-उदय ॥
(थ) क्लेश - तरंगें तरीं, भयंकर ममता - भँवर तरे ।
मित्र-कलत्र - बंधु - ग्रह - ग्राहों के कटु ग्रास टरे ॥
लँघा क्रोध - बड़वानल, तृष्णा - लता - समूह बहा ।
पार उतरने पर हूँ अब संसार - समुद्र महा ॥
—प्रबोध चंद्रोदय
(द) जिनको[३] मानव - मस्तिष्क के एन्जिनियर हम कह सकें ।
वे पत्रकार, लेखक सकल शांति - स्थापना में लगें ॥

---

१. भारत के कोने-कोने में वायु-रूप से कुविचार और भ्रष्टाचार का साम्राज्य ।

२. After the Kalingan war Asoka renounced armament, and commenced his reign under Buddhist codes, and earned world-wide reputation as the only monarch, who maintained peace and order over a very large population, and a vast country, unique in the universe.
On account of this nobility, Buddha and Asoka are remembered by eminent writers, and politicians, whenever the question of peace is discussed.
—Bikhu UThirzeya
(Searchlight, 24-1-60)

३. You, the journalists and writers, who can be called the engineers of human mind, must do all you can to make souls united to struggle for enduring human peace.
—Marshal Voroshilov
The Soviet President
at the Taj Mahal, Agra
(Searchlight, 24-1-60)

(ध) सिगरेट[1] और सिगार को, है अफ़ीम - संपर्क।
बना धुआँरा स्व-मुख को, करें उसे क्यों भ्रष्ट?
करें उसे क्यों भ्रष्ट, पान करके अफ़ीम यों?
करें श्वास को भ्रष्ट, शून्य ये आत्मा को त्यों॥
कैन्सर से भी कभी करा देते ये भेंट।
सेटन यदि मद - पान, बीलज़ेबब सिगरेट॥

यहाँ मुख में धुआँरा, मद-पान में सेटन और सिगरेट में बीलज़ेबब के आरोप हैं। ये वचन गाँधी जीके हैं।

आज[2] अमेरिका में वैज्ञानिक अनुसंधान से भी यही बात सिद्ध हुई है।

---

१. Smoking I consider to be a vice. It deadens one's conscience. It fouls the breath, discolours the teeth, and sometimes even causes cancer.........Cigarette smoking is like an opiate, and the cigars that you smoke have a touch of opium about them. How can you foul your mouth by converting it into a chimney ?....But donot make the mistake that between drink and tobacco drink is a lesser evil. No. If cigarette is Beelzebub, then, drink is Satan.

—Gandhi
A Gandhi Anthology by V.G. Desai.
Bk II pp. 28-29

२. Cigarette smokers absorb about 90 percent of the nicotine to which they are exposed, a series of research projects reveal. Adult smokers in the United States are dying of lung cancer, at the rate of almost 100 a day,

(न) काम[१] क्रोध ओ लोभ ये तनमें तस्कर व्याप।
ज्ञान - रत्न - अपहरण - हित, जागें, जागें आप ॥

(प) जीवन[२] है बस खान, जिससे ले करना हमें।
शोधन, चिकण, मान्य, गढ़ना सम्यक आचरण ॥

(२) माला-रूप अर्थात् जिस में एक उपमेय में एक से अधिक उपमानों का आरोप हो । यथा,

(क) एक-एक पग आगे धरना धरना था अरि उर-पर लात।
बढ़ना था स्वतंत्रता के ढिग, गढ़ना था शुठि स्वर्ण-प्रभात ॥
—दं० या०

(ख) देश-भक्तिको जानें स्वाति-निपात।
श्रेणी सुभग सकल सुख, वेणी तात! ॥

---

the American Cancer Society reported. The report said that one of every four physicians, who smoked, five years ago, had stopped smoking since the habit had been linked to lung cancer. Some 30,000,000 smokers, concerned for their health, have switched to filter cigarettes, the report said. (Searchlight, April 21,1960).

१. कामः क्रोधश्च लोभश्च देहे तिष्ठन्ति तस्कराः ।
ज्ञानरत्नापहाराय तस्मात् जाग्रत जाग्रत ॥
—शंकराचार्य

२. Life is a quarry, out of which we are to mould, and chisel, and complete a character.

—Goethe

(ग) वर्तमान भारत की आत्मा के हो मानदंड मतिमान !
जगके सत्य-अहिंसा के तुम मेरु-दंड औ मर्म-स्थान ॥
करना मर्दन मान तुम्हारा, मानवता का हरना मान।
हनना मेरुदंड मृदुता का, दलना शुभ्र सभ्यता-प्राण ॥
—दं० या०

(घ) जल में रस, शशि-सूर्य में प्रभा, ॐ श्रुति मध्य।
शब्द गगन में, मनुज में पौरुष हूँ, मैं शुद्ध ॥
यहाँ मैं में रस इत्यादि कई उपमानों के आरोप हैं।

(ङ) देव-विप्र - गुरु - प्राज्ञ - सुपूजन, शुद्धि, सरलता।
ब्रह्मचर्य व अहिंसा शारीरिक-तप - सत्ता ॥
अनुद्वेगकर, सत्य और प्रिय हित की वाणी।
सुठि स्वाध्याय कहाते वाणी-तप सुखदानी ॥
मन-प्रसन्नता, सौम्यता, मौन व आत्म-निरोध शुभ।
भाव-शुद्धि अर्जुन सखे ! मानस-तप हैं दिव्यप्रभ ॥

यहाँ शारीरिक तप में पूजन इत्यादि, वाणी-तप में सत्य इत्यादि और मानस-तप में मन-प्रसन्नता प्रभृति अनेक उपमानों के आरोप हैं।

(च) [१]वेदांत औ विज्ञान औ विश्वास—ये त्रय शक्तियाँ।
जिनकी सु-स्थिरता से जगत में नित्य शांति-समृद्धियाँ ॥

---

१. I have summed up the significance of these three forces in a Sanskrit couplet—
वेदांतो विज्ञानं विश्वासश्चेति शक्तयस् तिस्रः।
यासां स्थैर्येनित्यं शांति-समृद्धी भविष्यतो जगति ॥
which means that Vedanta, Vijnan, and Vishwas are the three forces, which. when fully and firmly establi-

वेदांत तो विश्वास है बस एक ईश्वर में अजी।
सम रूप से सम्मान करना सतत धर्मों का सभी।
विज्ञान प्रकृति की छिपी सब शक्तियों की खोज है।
भौतिक व आध्यात्मिक जगत की खोज भी, युत ओज है।।
विश्वास है पारस्परिक कटु अविश्वास-जनित सभी।
दल-बंदियों का नाश, लोक-सुनीति-संस्थापन सही।।

यहाँ वेदांत में विश्वास और सम रूप से सम्मान, विज्ञान में शक्तियों की खोज और जगत् की खोज, पुनः विश्वास में दल-बंदियों का नाश और सुनीति संस्थापन के दो-दो आरोप होने से माला-रूपक है।

(छ) मोह-तिमिर को मिटा, हटा भ्रम-निद्रा नित दुखदा।
प्रकटा परम प्रबोध-चंद्र, जिसकी ज्योत्स्ना सुखदा।।
श्रद्धा, शांति, विवेक, यमादिक का वर विक्रम पा।
विश्व-रूप हो, विष्णु हुआ मैं, मम प्रकाश चमका।।
—प्रबोध-चंद्रोदय

यहाँ मैं (पुरुष) में विश्व और विष्णु के दो आरोप हैं।

(ज) दुर्बलता[१] दुख-रूप, कार्य-करण वा मरण में।
है यह शाठ्य[२]-स्वरूप, कहते कवि, कोविद प्रवर।।

---

shed, will inaugurate the era of perpetual peace and prosperity. —Vinoba Bhave
(Foreword to "Towards New Horizons" by Peare Lal, Page V)

१. To be weak is miserable, doing or dying. —Milton

२. Weakness is wickedness.

परंपरित—

जहाँ एक आरोप दूसरे आरोप का कारण होता है वहाँ परम्परित रूपक माना जाता है। इसके भी दो प्रकार हैं—शुद्ध और मालारूप।

शुद्ध अर्थात् जहाँ एक आरोप दूसरे आरोप का कारण हो। यथा,

(क) अंगरेज-बारूद पर देखो आँख पसार।
सु-अहिंसा पाला पड़ा, हुआ सभी बेकार॥
यहाँ बारूद के कारण पालेका आरोप करना पड़ा।

(ख) दलते निलहे-नाग[1] थे संतत कमल-किसान।
गाँधी-सिंह विलोक कर, भागे लेकर जान॥
यहाँ नाग के कारण सिंह का आरोप हुआ।

(ग) दो सहस्र सैंतीस पुरुष और एक शत
सत्ताईस स्त्रियाँ, बाल संतावन साथ ले।
ह्राँसवाल में विशाल औ कराल काल क्रूर-
के विरुद्ध युद्ध ठाना दक्षिण के नाथ से॥
मानव के अधिकार-भाव का संचार किया,
औ किया प्रहार अत्याचार पै स्व-हाथ से।
भारतीय जन पै जो छाया था तिमिर-घन,
हत हुआ गाँधी-दिननाथ, दीननाथ से॥

यहाँ तिमिर-घनके कारण गाँधी जी में दिननाथ (सूर्य) का आरोप किया गया।

---

१. गज।

मालारूप—

(क) पर-शासन-घन पवन सुठि, संकट-कानन आग।
तुम भारत में अवतरे, था भारत का भाग॥

यहाँ गाँधी जी में पवन और आग दो आरोप हैं जिनके कारण हैं घन और कानन।

(ख) आँगल-निधि कुंभज सुभग! शासन-तम तिग्मांशु!।
करो हृदय मम सर्वथा पावन और अ-पांशु॥

यहाँ गाँधी जी में कुंभज और तिग्मांशु दो आरोप हैं जिनके कारण हैं निधि और तम।

अभेद अधिक अर्थात् जहाँ उपमेय में उपमान से कुछ अधिक कहा जाय। यथा,

(क) सहसबाहु ने रेवा का रोका प्रवाह था।
दुनिया इस पर अबतक कहती वाह! वाह! हाँ॥
हो द्विबाहु गाँधी ने रोकी सिंधु-स्वामिनी।
इसका वर्णन वाणी कर सकती न स्वामिनी॥

(ख) सकल ज्ञान-विज्ञान तुच्छ अति, रखते कोई अर्थ न रंच।
महा मनोविज्ञान निकट तव, जिसमें स्वतंत्रता अप्रपंच॥
जिसमें नैतिकता औ आध्यात्मिकता भरी भव्य भरपूर।
जिसके बल, बलि दे निज को जन पर-हित औ स्वदेश-
हित शूर॥—दं०या०

(ग) हटा भयानक औ बीभत्स, सुवीर रौद्र का कर संचार।
करुणामिटा, हास्य, शृंगार प्रकाश शांतिका जुटा अपार॥

प्रेम-प्रसाद-सुगुण, स्वतंत्रता अद्भुत-रस प्रचंड झंकार।
से झंकृत भारत को किया, अलौकिक सो दंडी सुख-सार ॥
—दं० या०

यहाँ प्रेम में प्रसाद गुण का, स्वतंत्रता में अद्भुत रसका और सो (गाँधीजी) में "काव्यादर्श" के रचयिता महाकवि दंडी का आरोप है। अलौकिक शब्द से अभेद अधिक हुआ।

(घ) नाली[१] में था ठूस दिया अधमूआ करके।
निकले जब, उर रोष न रंच रहा नर-वर के ॥
कहने पर भी किया अजी! न मुकदमा दायर।
सहनशीलता और क्षमा के थे ये सागर ॥
गर बचते तो करते अवश क्षमा गौडसे-[२]कुकृत को।
यों भृगुपति प्रति हरिकी क्षमा से श्रेयस्कर सुकृत सो ॥

(ङ) तुम में करके स्नान तरें जन दग्ध निदाध-ताप-उत्ताप।
इनके उपदेशामृत-अंबुधि में नित नहा तरें त्रय ताप ॥
—दं० या०

दंडी (डाँडी) पहुँच कर अरब सागर में स्नान कर उसके भीतर से नमक-मिश्रित मिट्टी उठाकर गाँधी जी ने नमक-नियम भंग किया था। उसी स्नान का वर्णन है। त्रय ताप तरने से आधिक्य हुआ।

---

१. दक्षिण अफ्रिका में हिन्दुस्तानियों का पक्ष लेने के कारण वहाँ के कुछ गोरों ने इन्हें मार-पीट कर नाली में ठूस दिया था! २. महात्मा गाँधी की हत्या करनेवाला नाथूराम गौडसे।

(च) तरुणी के पाद के प्रहार से, विदित यह,
पादप अशोक हो अशोक फूल लहके॥
अन्न और वसन-विहीन, धन-हीन अति
दीन, अघ[1]-पीन, शुष्क, कष्ट बहु सह के॥
छीन था युगों से आह! शत दाह-ज्वाला-युत,
सतत शिकार शठ, असुख असह के।
भारत-शाखोटक[2] को निज पाद-परस से
गाँधी! तुमने किया अमर-तरु महि पै॥

यहाँ गाँधी जी के पाद-परस से भारत का अमर-तरु होने से अभेद अधिक रूपक हुआ।

(छ) तुम[3] केवल जल के समुद्र, हो जल के ही बस तुम आगार।
सत्य-अहिंसा के समुद्र[4] ये सात्त्विकता-अमृत-आधार॥
साहस, सहिष्णुता, हितैषिता, सुशीलता, सु-बुद्धि-भाण्डार।
सर्व सद्गुणों के पयोधि ये सकल पुण्य के पारावार।
—दं० या०

(ज) सूर्य और शशि से प्रकाश तव[5] निजमें नहीं कहीं कुछ भास।
इन्हें[6] सूर्य-शशि का न प्रयोजन, हैं ये संतत स्वयं प्रकाश॥

---

१. पाप; दुःख; कंसका प्रधान सेनापति अघासुर। अतः अघ-पीन का अर्थ हुआ पाप-पीन; दुःख पीन और विदेशी शासक रूप राक्षस-ग्रस्त। २. श्मशान का वृक्ष-विशेष। ३ अरब सागर। ४ गाँधी जी ५. अरब सागर का। ६. गाँधी जी को।

देते हो तुम घन को वन[1] निज कर वर्षा जो कृषि उपजाय।
देते ये जन को जीवन[2] निज, जिससे जग यह नित लहराय॥
—दं० या०।

(झ) तुम[3] अपने गड्ढे भरते हो, बनते जो जल लेते काल।
ये[4] नरके उदरों के गड्ढे भरने में अतिशय बेहाल॥
गति-विहीन तुम हो, ये गतिमय, गतिप्रदान करते ये नित्य।
दुर्गतिको कर दूर,सुगति को दें ये सुगत सरिस शुचिचित्त॥
—दं० या०

(ञ) पन्ना की द्युति एक थल, सो सीमित परिमाण।
पन्ना पन्ना से बढ़ी, अतुलित ज्योति जहान॥
अतुलित ज्योति जहान, न समता पाई जाती।
लख के त्याग, विराग वीरता भी शर्माती॥
दासी, पर तू श्रेष्ठ गुणों में परम अनन्या।
तव यश-रवि ढिग रत्न समस्त शलभ हैं पन्ना[5]!॥

अभेद न्यून अर्थात् जहाँ उपमेय में उपमान से कुछ हीनता प्रकट की जाय। यथा,

तू दानवी धरे सुठि मनुज-शरीर।
क्षण-क्षण जन को देती दुःख गभीर॥

यहाँ इंगलैंड में मनुज-शरीर से न्यून दानवी रूप का आरोप किया गया है।

---

१. जल २. जल; प्राण। ३. अरब सिंधु। ४. गांधी जी। ५. पन्ना धाई जिसने अपने पुत्र का बलिदान कर राजकुमार उदय की जान बचाई थी।

तादूरूप्य रूपक

जहाँ उपमेय को उपमान का दूसरा रूप कहा जाता है वहाँ तादूरूप्य रूपक समझना चाहिये। इस के भी दो भेद हैं—(१) अधिक और (२) न्यून।

(१) अधिक अर्थात् जहाँ उपमेय में उपमान से अधिकता का वर्णन हो। यथा,

यह अपर सूर्य समुदित दिगंत। प्रभात-प्रभा प्रदर्शित अनंत॥
अरुणोदय यह अनुपम अतीव। शोभा-सौंदर्य अमित असींव॥

यहाँ अपर सूर्य द्वारा उपमेय गाँधी जी को उपमान सूर्य से भिन्न सूर्य माना गया है और भारत के दुःख-अंधकार को दूर करने से अनुपम होने के कारण यह अधिक तादूरूप्य रूपक हुआ।

(२) न्यून अर्थात् जहाँ उपमेय में उपमान से हीनता प्रकट की जाय। यथा,

होकर भी महा प्रकाशमान। अति अद्भुत-द्युति औ सुगुणवान।
हो अपर जवाहर ही महान। क्यों जवाहर हत-ज्योति, म्लान?

यहाँ जवाहरलाल जी को अपर जवाहर कहने में तादूरूप्य रूपक है और म्लान कहने से तादूरूप्य न्यून हुआ। म्लानता के कारण हैं नेताओं का गाँधी-सिद्धान्तों से विपरीत आचरण तथा चीनका विश्वासघात।

६ परिणाम

जहाँ किसी कार्य साधन में असमर्थ उपमान उपमेय से अभिन्न होकर उस कार्य के संपादन में समर्थ होता है वहाँ परिणाम अलंकार माना जाता है। यथा,

गाँधी-वचनामृत सुनो, मंगल, सुखद अगण्य।
विश्व-द्रोह-निर्दलन-हित औषध असम, अनन्य॥

यहाँ गाँधी-वचन उपमेय है और अमृत उपमान। अमृत में सुने जानेकी शक्ति नहीं है पर वचन के साथ एक रूपता प्राप्तकरने पर सुने जाने का कार्य यह कर सकता है। अतः यह परिणाम अलङ्कार हुआ।

१० उल्लेख

एक वस्तु का ज्ञाताओं के भेद से अथवा विषय के भेद से अनेक प्रकार से वर्णन उल्लेख कहलाता है। इस प्रकार इसके दो भेद हैं—

(१) ज्ञाताओं के भेद से। यथा,

कहते इनको लोग राजनीतिज्ञ बड़े हैं।
कुछ कहते हैं इन्हें अजी! नीतिज्ञ बड़े हैं॥
कहीं दार्शनिक कहीं वैद्य हो हृदय गड़े हैं।
शासक कहते, "काल-रूप[१] यह निकट खड़े हैं"॥

(२) विषय के भेद से। यथा,

युद्ध में राम समान व ज्ञान में निर्जर[२] के गुरु के सम हो।
तेज में भानु व शीतलता में सुधांशु समान अनूपम हो॥
सत्य में हो हरिचंद समान, अहिंसा में बुद्ध अनुत्तम हो।
हो उपदेश में व्यास, विदेह विराग में, न्याय में तो यम हो॥

---

१ इंगलैंड के प्रधान मंत्री चर्चिल ने गांधी जी को The Arch-enemy of the Empire अर्थात् बृटिश साम्राज्य का प्रधान शत्रु कहा था। २ देवता।

११ स्मरण

किसी वस्तु को देखकर उसीके सदृश दूसरी वस्तुकी याद आ जाने को स्मरण कहते हैं। यह मनोविज्ञान के साहचर्य नियम पर निर्धारित है। यथा,

स्मरण युधिष्ठिर का अवलोक तुम्हें[1] हो आता।
अत्रि[2], अगस्त्य[3] मुनीशों का भी त्यों हो जाता॥
शिवा और राणा प्रताप की स्मृति हो आती।
कुँवर सिंह की भी बहुतों को सुधि हो जाती॥

विरुद्ध वस्तु के देखने पर भी स्मरण अलङ्कार होता है। यथा,

(क) कलह-वैर व फूट-प्रचंडता। समर-युद्ध-अबुद्ध-अखंडता॥
कपट औ छल-छद्म-प्रवीणता। सतत कल्मष-किल्विष-पीनता॥
अटल द्रोह व द्वेष मलीनता। अमल दंभ व दारुण दीनता॥
विमल-बुद्धि-विवेक-विहीनता। सकल-शोभन-सद्गुण-क्षीणता।
अब लखें इस भारत देश में। निरख लें प्रिय भव्य स्वदेश में॥
सुगुण-सिंधु धरापर जो रहा। अगुण-अंबुधि सो अब हो रहा॥
—हिमालय

भारत की वर्तमान् घोर नैतिक पतन देख कर प्राचीन अलौकिक नैतिक उत्थान का स्मरण हो आता है।

---

१. गाँधी जी को। २-३ इन दोनों महर्षियों ने अरब के लुटेरों से युद्ध कर अपने देश की रक्षा की थी।

(ख) धनद भी जिसको लखके महा ! हृदय में नित लज्जित ही रहा ।।
ठग रहा जिस पै नित दस्युका । धन भगा वह भारत का कहाँ ! ।।
सतत दूध, दही, घृतका जहाँ । नद-नदी बहती मृदु थी, वहाँ ।।
रुज-स्वरूप, भयंकर डालडा[1] । मनुज बीच बना अति लाड़ला ।।
(ग)[2]अब न सो शुचि शिक्षण पाइये । नयन खोल कहीं पर जाइये ।।
[3]नयन मूंद चले सरकार भी । नय न हाय ! नरेश्वर द्वार भी ! ।।

---

१. देखिये 'डालडा' के संबंध में गांधीजी क्या कहते हैं—

Vanaspati is wholly superfluous. Oils may be refined of injurius property, but they do not need to be solidified, nor need they be made to look like ghee. An honest manufacturer will not stoop to counterfeits The market is flooded with them. Counterfeit coins are heavily punishable. Why not counterfeit ghee; since the genuine article is more precious than coins.

To sell vegetable oil, or butter in the form and name of ghee is to deceive the Indian public. It is thoroughly dishonest......Anyone who deceives people in this regard, or countenances the fraud is an enemy of India. —Gandhi

(A Gandhi Anthology Book II Page 50)

२. पटना हाई कोर्ट के भूतपूर्व प्रधान न्यायाधीश, श्रीयुत एस. के. दास, पटने में विद्यार्थी-गोलीकाण्ड की जांच में कमिशन के प्रधान के नाते यह बोले थे, "Nothing is taught in schools these days" अर्थात् आज कल स्कूलों में कुछ नहीं पढ़ाया जाता । हाल में बिहार के मुख्य मंत्री डा० श्री कृष्ण सिंह मुकामा के एक स्कूल में गये तब वहाँ उन्होंने शिक्षकों को पढ़ाने के समय गप करते और इधर-उधर घूमते देखा !

३. स्कूल संबंधी नया कानून इसका साक्षी है ।

यह दशा लखनी न तुम्हें[1] पड़ी। दुसह गंध मिली न तुम्हें[2] सड़ी[3]॥
प्रभु[4]! महातम[5] आज विराजता। दनुज[6] ज्योति ग्रसे अति राजता॥

१-२ गांधी जी को, जिन्होंने शिक्षकों के सम्मुख शिक्षाका आदर्श और शिक्षकों के कर्त्तव्य बतलाये थे। देखिये पृष्ठ ४८।
३. शिक्षकों के प्रति गांधी जीनें कहा है—

Woe to the teacher, who teaches one thing with his lips, and carries another in his breast!

—Gandhi

अर्थात् बुरा हो उस अध्यापक का जो अपने होठों से कुछ पढ़ाता है और अपने हृदय में कुछ और रखता है।

(Light of India, p. 183)

४. गांधी जी के पूर्व-कथित उपदेश को लक्ष्य कर उनके प्रति कहा गया है। ५ घोर अंधकार ६ राहु-केतु अर्थात् अनुचित पठन-पाठन वा आचार-विचार रूप राक्षस अथवा विद्यालयों की प्रबंध-कारिणी समितियों का शिक्षकों के प्रति राक्षसी व्यवहार जिसका शिक्षकों की नैतिकता पर अत्यंत दूषित प्रभाव पड़ा है।

एक दृष्टांत लीजिये। सन् १९५१ में मैं श्री कस्तूरबा बालिका विद्यालय, लोहरदगा का प्रधानाध्यापक था। मंत्री ने अध्यापिकाओं को एक टी पार्टी दी। कुछ अध्यापिकाएँ नहीं आ सकीं। मंत्री महोदय ने इसमें अपना घोर अपमान समझा और फौरन उन्हें सस्पेंड करने को मुझसे कहा। मैंने इसका विरोध किया और नियम बतलाया। तब उन्होंने नियम-विरुद्ध खुद इस विषय का आर्डर लिखकर मुझे दे दिया। मंत्री जीकी डाट-डपट से कुछ अध्यापिकाएँ रो उठीं। मजबूर होकर मैंने आर्डर भेज दिया। पीछे इस अत्याचार के संबंध में मंत्री जी से पत्राचार हुआ। मैंने पुनः उनके कार्य को अनुचित और

१२ भ्रांतिमान्

समता के कारण किसी वस्तु को दूसरी वस्तु समझ लेना भ्रांतिमान् है। यथा,

(क) खादी में कुछ पुलिस लख, समझ देश के भक्त।
कुछ ने निंदा पुलिस की, की उनसे हो रक्त ॥
(ख) एम. एल. सी. जन निरख कुछ, समझा पुलिस प्रवीर।
एम. एल. सी. की ज्यादती, कही अतीव अधीर ॥
(ग) सी. आई. डी. घेरे फिरें, मान उपद्रव-मूल।
गाँधी को गुन सर्वदा, रूप अशांति अतूल ॥

यहाँ रस्सी में सर्पकी तरह परम शांति-स्वरूप महात्मा गाँधी को भ्रम-वश घोर अशांति का रूप माना गया।

अन्याय-संगत बतलाया। तब मंत्री महोदय ने विद्यालय में मेरा रहना ही अनुचित समझा और मुझे पद-च्युत कर दिया। इस संबंध में मैंने अपील की। जाँच हुई पर बिलकुल मुँहदेखी। उत्तर अटपट मिला। तब इस उत्तर का सविस्तर और सप्रमाण खंडन करता हुआ श्रीमान् डिपुटी मिनिस्टर के पास अपील की। इसको चार वर्ष बीत गये। आज तक कोई उत्तर नहीं! अतः निम्नांकित बात बहुत ठीक कही गई है—

The teachers were afraid of these High School Managing Committees, which were behaving like Rakshasas.

—Jagdish Sharma,
(in his Council Speech at Patna, on 3.5.60)

१३ संदेह

किसी वस्तु में किसी दूसरी वस्तु के सादृश्य के कारण संशय उत्पन्न होना संदेह है। यथा,

(क) परम अलौकिक कृत्य हैं, परम अपूर्व प्रताप।
गाँधी नर वा विबुध-वर, दीनबंधु वा आप॥

(ख) राज पूर्णिमा, बुद्ध-जन्म-दिन परम सुहावन।
वा यह गरिमा कवि-कुल-गुरु तुलसी की पावन?॥
वा यह महिमा है महातमा गाँधी की शुचि।
अणिमा आदिक से बढ़कर जिसकी निरुपम[1] रुचि!॥

(ग) उष्ण,[2] दुखद, दुर्गंधमय, परम तापप्रद तात!।
पवन, अपावन श्वसन[3] वा जन-गण का यह भ्रात!॥

१४ अपह्नुति

उपमेय का निषेध कर उपमान का आरोप अपह्नुति है। इसके दो प्रधान भेद हैं—(१) शाब्दी और (२) आर्थी।

(१) शाब्दी अर्थात् जिस में यह आरोप शब्द पर निर्भर हो। यथा,

---

१. चमक। २. The extent of corruption in the country will not be minimised merely by denying its existence. It is corroding the very vitals of the nation.......Misuse of power has become such a common phenomenon that the, people, and even the Government servants have, by and large, lost faith in the impartiality of the administration ...... The common people are being subjected to considerable suffering and loss, on account of the prevailing corruption, Its pinch is felt in every village, almost in every family.

—Searchlight, Leader, 19-1-60

३. निःश्वास।

(क) इंगलैंड कहती न अहिंसा इसको मानूँ ।
हिंसा घोर हमारी निःसंशय यह जानूँ ॥
नहीं मनुज यह दनुज रूप कोई जग राजे ।
मरण-कष्ट दे रहा, अरे ! यह काल विराजे ॥

(ख) सूर्योदय यह नहीं अजी ! भारत-सौभाग्य-सूर्यका भास ।
चंद्र नहीं वह तो अंग्रेजी राज्य-प्रभा का विगत उजास ॥
अंधकार था नहीं निशा का, बृटिश नशेका रहा अँधार ।
तारे थे वे नहीं चमकते, बृटिश बमकते रहे अपार ॥

(ग) ये ओस हैं न, न हैं अहो ! आँसू सु-पीड़ित हृदय के ।
आनंद के आँसू सभी, आनंद से उत्पन्न थे ॥
है दुःख की बीती निशा औ उदय अब सुख-सूर्य का ।
सौभाग्य के शुभ भाव से है भरित आज वसुन्धरा ॥
१५ अगस्त, १९४७ के प्रातःकाल का यह वर्णन है ।

(घ) यह राका शशि न गगन सुहाय॥ कॉंग्रेस-राज्य-ज्योत्स्ना जनाय॥
कालिमा नहीं, यह तप कठोर । इसके तपस्वियोंका सुजोर ॥

(ङ) यह चंद नहीं जिसका प्रकाश । यह महातमा गाँधी विभास ॥
कालिमा नहीं, हरिजन-विलास—लख कौन नहीं पावे हुलास ? ।

(च) नहीं चंद्रमा राज, इंग्लिस्तान विराज यह ।
नहीं कालिमा आज, भारत-भ्रमर सुभव्य यह ॥

(छ) यह हिम न सखे ! मस्तक गिरीश[1] । खादी-टोपी यह सोह शीश॥
अचल की[2] अचल यह चाल देख । बिचले को जिसमें बुद्धि शेष ? ।

---

१ हिमालय २ पर्वत; हिमाचल

(ज) नभ में यह जो जा रहा, नहीं श्वेत घन तात ! ।
भारत से सुर-लोक को, यह कपास - निर्यात ॥

(झ) यह प्रफुल्ल चंद्र न गगन जनाय । य राजते[1] प्रफुल्ल चंद्र राय ॥
अमर[2]-वर्त्म में जिनने अपार । खोला खादी भाण्डार यार !

(ञ) सूता यह सूता नहीं, जनक-सुता अवतार !
रूप महालक्ष्मी विमल, सदा सकल-सुख-सार ॥ —स्वदेश-सतसई

(ट) यह मयंक[3] नहीं, मंसूर[4] मूर्त्ति ! सोऽहं में जिनकी ज्ञान-पूर्ति ।
महिमा जिनकी सब ओर राज । मध्य छिन्न-भिन्न शरीर आज ॥
—हिमालय

(ठ) शशि न, हसन-हुसेन-युगल-रूप । नभ में यह राज रहा अनूप ॥
जिनका चारो दिशि परम धन्य । छाया शुभ यश अक्षय, अनन्य ।

(ड) मृगाङ्क नहीं, मुहम्मद महान । की धर्म-ज्योति छायी जहान ॥
कालिमा नहीं उसमें दिखाय । अनुयायी-विकृत-कृति लखाय ॥

(ढ) यह शशि न, धर्म-ईसामसीह । अनुपम आदर्श परम अनीह[5] ॥
यह[6] मसी न मंजु मयंक बीच । य मसीह चर-कदाचरण-कीच ॥

(ण) रजनीनायक नभमें न राज । गुरु नानककी ज्योत्स्ना विराज ॥
श्यामता नहीं उसमें दिखाय । भारत उनके उरमें लखाय ॥

(त) नहिं चंद, उदित जयचंद मीत ! कर अस्त सूर्य पृथिवी पुनीत ॥
कालिमा न, यह अक्षय कलंक । है लक्षित उसके चारु अंक ॥

---

१ बंगाल के परम विख्यात रसायनज्ञ २ देव-मार्ग; आकाश ३ चंद्रमा
४ सूफी संप्रदाय के सुख्यात संत जिनको, अपना धर्म न छोड़ने के कारण, बादशाह ने अंग-अंग कटवा दिया था । एक-एक अंग के कटने पर, पूछे जाने पर, उन्होंने अपना धर्म छोड़ने से वार-वार इन्कार किया था ।
५. इच्छा-रहित । ६. कालिमा ।

(थ) यह चंद नहीं नभ में विराज। यह पूर्णप्रभ प्रिय पृथ्विराज।
यह कलंकका न स्वरूप साज। यह महाराज जयचंद्र आज॥

(द) यह इन्दु न पृथ्वि-छ्या अनंत। की पसरी दिव्य प्रभा अनंत[1]॥
ओ[2]घोरी घोर-कटुत्व-कुंज। कालिमा सु-दारुण पाप-पुंज॥

(ध) सूर्य नहीं, यह सर्जरी, जगमग-जगमग जोत।
विष-व्रण रावण के लिये, है यह राम-उदोत॥

(न) यह रजनीपति न अनंत राज। यह चरकका चारु बपु विराज॥
शुभ्रांशु न यह[3]लुकमान मान्य। अमृतांशु न हैनीमन[4]महान॥

(प) लिये जा रहे थे कोई सुर भरत-धरणि से।
विपुल होमियोपैथिक औषध तिमिर-तरणि[5] से॥
गगन बीच कुछ गिरीं शीशियाँ उनके कर से।
छितरे टेब्लेट सोही अजी! नहीं तारे ये॥

(फ) भारत-सुदुर्दशा देख-देख। इसकी कुदशा नित पेख-पेख॥
नभका फूटा यह[6]नयन एक। सो ही दर्शित न शशांक नेक॥

(ब) दूब, वनस्पति, वृक्ष पर नहीं ओस-कण राज।
भारत-पापाचरण लख, प्रकृति-अश्रु-कण आज॥

(भ) वे असुर नष्ट हुए, न आसुर वृत्ति[7]नष्ट हुई अहो!।
हैं प्रेत उनके खेलते हम पर, न सच क्या यह कहो॥

---

१. आकाश। २. मुहम्मद घोरी। ३. परम प्रख्यात हकीम। ४. होमियोपैथिक प्रणाली के आविष्कर्त्ता हैनीमन साहिब। ५. रोग-रूप अंधकार के लिये सूर्य सदृश। ६. नैषध-चरित के एक श्लोक के आधार पर रचित। ७. बलि-प्रदान की आसुरी वृत्ति।

है धर्म का न विजय हुआ, यह विजय आह! अधर्मका।
जो आजतक है दानवी साम्राज्य यहाँ कुकर्म का॥

(२) आर्थी अथवा कैतवापह्नुति। इसमें किसी बहाने से उपमेय का निषेध किया जाता है। यथा,

(क) हारी देकर सीख अमरिका सुखद, दुःखहा।
हारे दुनिया के महान जन, कह-कह के हा!॥
सुना न एक रखा हठ आँगल ने अपना ही।
गाँधी मिस था काल नाचता, था जाना ही॥

(ख) ईद और बकरीद में, मानवता सब त्याग।
मजहब के मिस द्रोहकी, धधक रही है आग॥

(ग) मार-काट कर के महा, बिछा धर्मका जाल॥
गो की रक्षा कर रहे, जो प्रेमी गोपाल॥

(घ) पशु-रक्षण के व्याज[1] से मानव-भक्षण खूब।
आज अमानव कर रहे, ला-ला नूतन डूब॥

अपह्नुति के अन्य भेद—

(१) हेत्वापह्नुति अर्थात् जहाँ उपमेय के निषेध का हेतु दिखलाते हुए उपमान का आरोप हो। यथा,

(क) व्याप रहा जगत प्रताप छोर-छोर में औ
चकित सकल लोक देख-देख काज को।
काँप रहा रिपु-दल, खल-बल[2] खल-बली,
उरकी कली गई है सूख, पेख साज को।

---

१ बहाना २ अंगरेजों का दल

लाट, बड़े लाट का है ठाट सब चाट रहा,
डाँट रहा आँगल को, काट रहा राज को।
गाँधी का न काम यह, काम कर रहा है यों
सत्य का पराक्रम, जगा है यह आज जो ॥

यहाँ उपमेय[१] गाँधी जी का हेतु-पूर्वक निषेध कर उपमान सत्य का आरोप किया गया है।

(ख) उछल उछल कवियों ने नित उपमाएँ काढ़ीं।
रवि-शशि-उर यों पड़ीं अजी! रेखाएँ गाढ़ी ॥
नहीं कु-अंक[१], नहीं कलंक उनमें ये राजें।
कवि-सुतीक्ष्ण-मस्तिष्क कृतक्षत उनमें भ्राजें ॥

(२) पर्यस्तापह्नुति। इसमें किसी वस्तु में किसी अन्य वस्तु के धर्म का आरोप करने के लिये उस पहली वस्तु के धर्म का निषेध किया जाता है। यथा,

द्वेष मेट कर, मार घृणा को चपेट और
दाब कर घेंट घन आपस के रार का।
भिन्नता का कर के आखेट, एकता समेट,
लाया बल विपुल सु-बल के आगार का ॥
भय को भगा के और अभय जगा के यों पै,
साहस है लाया भारी सिपाहसालार का।
यह सब कार न समय का, न सुदैव ही का,
यह सब कार गाँधी सत्य-अवतार का।

---

१ सूर्य में दाग (Spots in the Sun)

यहाँ 'कार' में 'गाँधित्व' का आरोप करने के लिये यम-यत्व और देवत्व के निषेध किये गये।

पंडितराज जगन्नाथ ने इसको दृढ़ारोप रूपक माना है।

(३) छेकापह्नुति। इसमें किसी गुप्त रहस्य के प्रकट हो जाने पर उसको किसी प्रकार छिपा लिया जाता है। इसके दो भेद हैं—

(क) श्लेषयुक्त—

हरिजन भाजन प्रेम के, अति उपकारी जात।
भंगी में यों भक्ति तव ? नहीं, संतकी बात॥

(ख) अश्लेष-युक्त—

ब्रिटिश बड़े हैं बदमाश, नाश उनका हो,
नित्य ही महान दुख दे रहे ये देश को।
ऊब गया जी है जनता का यार ! अतिशय,
अनीति अपार है, न नीति लवलेश को॥
यार ! बात ठीक, यह शासन न, शोषण है,
जान पड़े काल गहे भारत के केश को।
[1]पूछने पै बोले छात्र, "बोल रहे हम थे, हा !
रोम ने क्या दुःख दिया आँगल के देश को !"॥

(४) भ्रान्तापह्नुति अर्थात् जहाँ सत्य बात प्रकट कर किसी का भ्रम दूर किया जाय। यथा,

---

१ असहयोग आन्दोलन के समय शिकायत पहुँचने पर किसी प्राध्यापक के आ धमकने और पूछने पर।

भूख मरें नित दुःख जरें, बहु ग्लानि गरें, गुन के स्व-अतीत।
वस्त्र-विहीन महा धन-हीन हैं, दीन व छीन, न चैन है चित्त॥
कर्म मलीन व पाप में पीन व गायँ निरंतर संकट-गीत।
दैव नहीं यह शासक दुष्ट जो वृष्टि करे यों विपत्ति की मीत !॥

यहाँ "शासक···विपत्तिकी "यह सत्य बात प्रकट की गई है और दैवका भ्रम दूर किया गया है।

१५ उत्प्रेक्षा

उपमेय में उपमान की संभावना उत्प्रेक्षा कहलाती है। इसके प्रमुख तीन भेद हैं—

(१) वस्तूत्प्रेक्षा (२) हेतूत्प्रेक्षा और (३) फलोत्प्रेक्षा।

(१) वस्तूत्प्रेक्षा अर्थात् एक वस्तु की दूसरी वस्तु में संभावना। इसके दो प्रकार हैं—उक्त विषया और अनुक्त विषया।

उक्त विषया अर्थात् जहाँ उपमेय कह कर उपमान की संभावना की जाय। यथा,

(क) मार्ग न देख पड़े कुछ सत्यासत्य न सूझे।
गम्यागम्य विचार नहीं कोई भी बूझे॥
अंधकार है महा घोर दुःखद अति भारी।
शासन मानो अमा-रूप आनंद-विदारी॥

यहाँ शासन उपमेय कथित है।

(ख) है इनका आचार भ्रष्ट अतिशय दुखदाई।
है इनका व्यवहार शत्रु सम, सरिस कसाई।

इनका शुभ्र विचार दासता का है काला।
हर व्यापार, लवण मानो व्रण पर है डाला।

यहाँ व्यापार-हरण में उपमेय कहकर लवण उपमान की संभावना का कथन है।

(ग) छिटकी लखो य चांदनी सुखद, विशद, छवि युक्त!
मानो गाँधी-कीर्ति यह प्रकटी द्युति-संयुक्त॥

(घ) डायर[१]-ओडायर[२] मचा रहे सु-हत्याकाण्ड।
मानो शुंभ-निशुंभ हों, हत्यारूप प्रकाण्ड॥

अनुक्तविषया अर्थात् जहाँ उपमेय को न कहकर उपमान की संभावना की जाय। यथा,

(क) जन आकुल-व्याकुल महा, घर-घर चिंता शोक।
मानो नभ बर्सा रहा, ज्वाला आपद्-शोक॥

यहाँ बृटिश शासन उपमेय अकथित है।

(ख) आ धमके अफ्रिका से, अवलोकें यह आप।
आ धमका य मानो शनि, शासन का अभिशाप॥

यहाँ गाँधी उपमेय का कथन नहीं है।

(२) हेतूत्प्रेक्षा अर्थात् अहेतु में हेतु मानना। इसके दो प्रकार हैं—सिद्ध-विषया और असिद्ध विषया।

सिद्ध विषया अर्थात् जहाँ उत्प्रेक्षा का विषय सिद्ध अर्थात् संभव हो। यथा,

---

१-२ पंजाब हत्याकाण्ड से इसका संबंध है। डायर उस समय एक उच्च पदाधिकारी सैनिक था और ओडायर लाट थे।

मुख की शोभा अमित है, आभा परम अनूप।
गाँधी के पथ पर चले मानो आप अरूप॥

यहाँ अरूपता से अनूपता का हेतु गाँधीजी के पथ पर चलना है, जो संभव है।

असिद्ध विषया अर्थात् जहाँ उत्प्रेक्षा का विषय असिद्ध अर्थात् असंभव हो। यथा,

थीं कुमुदिनी जो देश-द्रोही श्रेणियाँ बहु देश में।
अनुरक्त थीं, आसक्त थीं जो शुभ्र, श्वेत विदेश में॥
उनको निरख अति पस्त, मस्त न, अस्त सर्व प्रकार से।
मुस्का रहा मानो अरुण, लगता पता आकार से॥

यहाँ अरुण के मुस्काने का हेतु है स्वतंत्रता प्राप्ति पर देश-द्रोहियों की दीनता जो असंभव है।

(३) फलोत्प्रेक्षा अर्थात् जो फल नहीं हो उसमें फल की संभावना। यह भी दो प्रकार की है—सिद्ध विषया और असिद्ध विषया।

सिद्ध विषया। यथा,

(क) सिंधु पार करके यहाँ आये बृटिश कृपालु।
मानो सीख स्वराज्य की देने दीन-दयालु॥

बृटिश व्यापार के लिये यहाँ आये थे न कि स्वराज्य की सीख देने के लिये। परंतु यहाँ यही फल बतलाया गया। इससे यह सिद्ध-विषया फलोत्प्रेक्षा है।

(ख) इन्द्र वृष्टि यह कर रहे मानो यही विचार।
शासन-ताप प्रचण्ड में मिले ठंड कुछ यार!॥

वृष्टि का होना प्रकृति का नियम है। फिर भी शासन-ताप दूर करने (फल) के लिये इसका होना कहा गया है। इससे यह सिद्ध विषया फलोत्प्रेक्षा है।

असिद्ध विषया—

हिम, आतप औ वात सह रहा है बहु ख्वारी।
वज्र विपुल आघात सह रहा आपद सारी॥
है कर रहा हिमालय मानो तप यों भारी।
जिसमें गाँधी के सम हों हम सद्‌गुण-धारी॥

हिमालय का उक्त फल-प्राप्ति के लिये तप करना सर्वथा असंभव है। इसलिये यह असिद्ध विषया फलोत्प्रेक्षा है।

'मानो' इत्यादि उत्प्रेक्षा-वाचक शब्दों से रहित उत्प्रेक्षा—

(१) गम्या हेतूत्प्रेक्षा। यथा,

तप्त, परम परितप्त है, अति संतप्त, कु-साज।
भारत-ताप सुतीव्र से बिंबित व्योम विराज।

यहाँ व्योम के प्रचण्ड ताप का कारण भारत का विदेशी शासन-जन्य तीव्र ताप कहा गया है जो वास्तव में कारण नहीं है। उत्प्रेक्षा-वाचक शब्द न होने से यह गम्या (प्रतीयमाना) उत्प्रेक्षा है।

(२) गम्या फलोत्प्रेक्षा। यथा,

गाँधीजी न मरे, मरे सतत वे सद्धर्म के ही लिये।
ऊँचा ध्येय रहा सदा हृदय में सत्कर्म के ही लिये॥

राहू औ खल केतु से ग्रसित हैं श्री सूर्य औ चंद्र सो।
छाने को उनमें विमुक्ति रिपु से हैं वे गये अभ्र को॥

यहाँ सूर्य और चंद्र को विमुक्त करने (फल) के लिये, जो यथार्थतः फल नहीं है, गाँधीजी का स्वर्ग में जाना कहा गया है। उत्प्रेक्षा-वाचक शब्द न होने से यह गम्या फलोत्प्रेक्षा है।

सापह्नवोत्प्रेक्षा। यथा,

लोक-सभा यह है नहीं, है सुर-सभा पुनीत।
मानो भारत-हित धरे सुर-गण नर-तन मीत!॥

यहाँ प्रस्तुत लोक-सभा का निषेध कर उसमें भारत हित-साधन के लिये नर-तनुधारी सुर-गण की उत्प्रेक्षा की गई है। यह उत्प्रेक्षा उपर्युक्त भेदों से भिन्न है। इसमें वाचक शब्द का प्रयोग होता है।

१६ अतिशयोक्ति

उपमेय को सर्वथा लुप्त कर उपमान के साथ उसकी अभिन्नता प्रकट करना अतिशयोक्ति है। इसके मुख्य पाँच भेद हैं—(१) रूपकातिशयोक्ति (२) भेदकातिशयोक्ति (३) संबंधातिशयोक्ति (४) असंबंधातिशयोक्ति और (५) कारणातिशयोक्ति।

(१) रूपकातिशयोक्ति अर्थात् उपमेय को लुप्त कर उपमान के साथ उसका अभेद प्रदर्शित करना। यथा,

शासक की करतूत सुन, बोले गाँधी धीर।
मार रहे चट्टान से मक्खी को ये वीर॥

---

१. They are killing flies with stones

—Gandhi

बृटिश शासक द्वारा जनता पर गोली चलाये जाने पर गाँधी जी की उक्ति। यहाँ जनता उपमेय का लोप है।

(२) भेदकातिशयोक्ति अर्थात् भेद न रहने पर भी भेद का निरूपण। यथा,

(क) मुख में लाली आज निराली दीख रही कुछ ज्योति-निकेत !।
भारत के मुख की काली क्या जाती देख सद्‌गुणोपेत !।
लख स्व-वंश के वंशधरों की, राम आदि की भूमि ललाम।
होती मुक्त सहस्र वर्ष पर हर्षित सहस्रांशु सुख-धाम ?॥

यहाँ निराली शब्द द्वारा अभेद में भेद वर्णन किया गया है। वस्तुतः सूर्य में लाली कोई निराली बात नहीं। यह गाँधीजी की दंडी-यात्रा के दिन के प्रातः कालीन सूर्य का वर्णन है।

(ख) विकसित[1] कमल गंध से अंध बनाता भृंगों का समुदाय।
सुरभित हो मकरंद-वृंद से मंद-मंद मंजुल मृदु काय॥
मदन-मत्त यौवन-प्रमत्त रामागण रमण-स्वेद-विच्छेद।
में अति दक्ष, वक्ष को अपने अपर भावनाओं से भेद॥
स्फुट-स्वातंत्र्य-गंध से[1] अंध बनाता भारत सुजन समाज।
सुरभित हो मकरंद-मंजु से मंद-मंद मलयज मृदु साज॥
देश-प्रेम-मद-मत्त रमण-रमणीगण स्वेद-विंदु-वर-वृंद॥
के शोषण में लग्न व परितोषण में मग्न वहूँ स्वच्छंद॥

यहाँ अपर शब्द से अभेद में भेद वर्णन किया गया है।

---

१ शिशुपाल वध के एक श्लोक के आधार पर रचित।

वास्तव में पवन में कोई नवीनता नहीं आई। यह गाँधीजी की दंडी-यात्रा के दिन प्रातः काल में वहनेवाले पवन का वर्णन है।

(३) संबंधातिशयोक्ति अर्थात् असंबंध में संबंध की कल्पना। यथा,

(क) है ऊँचा आचार, आसमान से भी अजी!।
हारा सब 'संसार, निरख अलौकिकता निरी॥

यहाँ संसार मात्र से संबंध नहीं रहने पर भी संबंध का कथन हुआ। यह कथन गाँधी जी के प्रति है।

(ख) पर-दुख हरने के लिए, तपो-चपो दिन-रात।
गाँधी! तव ढिग शक्र भी, लखे हत-प्रभ गात॥

यहाँ शक्र (इन्द्र) से संबंध नहीं रहने पर भी संबंध की स्थापना की गई।

(ग) अहो परम रणधीर, गाँधीजी के चर सभी।
शमी, दमी, गंभीर, लख सुर-गण भी मोहते॥

यहाँ सुर-गण से संबंध नहीं रहने पर भी संबंध की कल्पना की गई।

(घ) बनें भानू-भानू रशमि सु-मसीपात्र-सु-मसी।
बने विद्युल्लेखा ललित अति ही लेखनि अजी!॥
बने प्यारा नीला नभ-थल अहो! कागज महा।
भने बाणी तोभी न तव महिमा पार सक पा॥ –हि०

अमर-शहीदों के प्रति यह उक्ति है। यहाँ भानु का मसीपात्र बनना, भानु-रश्मि का मसी (रोशनाई) बनना आदि असंबंध की बातों में संबंध की कल्पना की गई।

(४) असंबंधातिशयोक्ति अर्थात् संबंध में असंबंध की कल्पना। यथा।

(क) महातमा! माहात्म्य तव दिन-दिन वर्द्धन- शील।
धारण कर सकता नहीं विस्तृत नभ भी नील॥

माहात्म्य का भू-मंडल में स्थान है। यहाँ तथा नभ में भी न अँटने का भाव निदर्शित कर संबंध में असंबंध का निरूपण किया गया।

(ख) मधुर, दुःखहर, तापहर, परम सौख्य-आगार।
अपना[१] घर भी है हुआ कलुषित कारागार॥

यहाँ अपने घर में अर्थात् संबंध में कारागार का अर्थात् असंबंध का वर्णन है।

(५) कारणातिशयोक्ति अर्थात् कार्य के बाद कारण का कथन। इसके तीन प्रकार हैं—

अक्रमातिशयोक्ति, चपलातिशयोक्ति और अत्यन्तातिशयोक्ति।

अक्रमातिशयोक्ति अर्थात् कार्य और कारणका एक ही काल में वर्णन। यथा,

(क) चला महात्मा गाँधी का दल,विचला उर-थल शासनश्वेत।
चढ़ा चढ़ाई पर यह, उतरा उसका चारु चेहरा सेत॥

---

१. अपने ही घर मे, अपने घरको विदेशियों से विमुक्त करने के अपराध में, जेल में ठूस दिया जाना। देशरत्न डा० राजेन्द्र प्रसाद जी ने एक बार अपने व्याख्यान में कहा था, "We are prisoners in our own homes" अर्थात् हमलोग अपने घर में ही कैदी हैं।

कढ़ा कदम इसका ज्यों, भीतर दम वह घुटने लगा स-दाह।
बढ़ा कदम इसका ज्यों, घुटने लगा अजी ! दम उसका आह ! ।

(ख) गाँधी के चलते आँगलकी अचला चली, तलमली बुद्धि ॥
सरकी कली ढली व खलबली मची खलों में, लची समृद्धि ।
शेखी-शान गिरी, शिखी-शिखा शोभन दुरी, झरी छवि पंख।
टूटी छत, फूटी किस्मत औ लपटी कटु तरंग-आतंक ॥

(ग) नमक उठाया साथ नियम उठाया और
मान है उठाया माननीय सरकार का।
भोजन में स्वाद लाया, रिपु में विषाद लाया।
नाद औ निनाद लाया जग में स्व-कार का ॥
जनता में जोश लाया, शासक में होश लाया,
रोष लाया आँगल में असुर अपार का।
ढाया गाज राज पै, बढ़ाया औ स्वराज-काज
बल और विक्रम काँग्रेस कर्णधार का ॥

(२) चपलातिशयोक्ति अर्थात् कारण के सुनते ही वा देखते ही कार्य का होना। यथा,

(क) सुनते ही प्रस्ताव, "भारत छोड़ो" प्रबल अति।
सूख गया सब चाव भारत में चिर राज्य का ॥
(ख) लखते ही व्यवहार, गाँधी का निज ओर यों।
आँगल-उर-अंगार उठा, भस्म कैसे करूँ ? ॥

(३) अत्यंतातिशयोक्ति अर्थात् जहाँ कारण के पहले ही कार्य का होना कथन किया जाय। यथा,

(क) दुर्गुण सकल बिलायँ, पहले ही आगमन के।
पीछे जन वे आयँ, काँग्रेस के सुठि द्वार पर॥

(ख) पितृगणों को तार, निज को औ परिवार को।
आता है नर यार! भारत-सेवा के लिये॥

(ग) स्वर्ग-मुक्ति का द्वार, खोल व बंधन काट भव।
देश-भक्त-आचार, गहता नर पुण्यात्मा॥

(घ) द्वेष, मोह, हिंसा, घृणा औ असत्य आचार।
मिटें पूर्व, पहुँचे सुजन पीछे गाँधी-द्वार॥

१७ तुल्ययोगिता

अनेक प्रस्तुतों अथवा अप्रस्तुतों का केवल एक धर्म द्वारा संबंध का आरोप तुल्ययोगिता है। इसके तीन भेद हैं—

प्रथम अर्थात् अनेक प्रस्तुतों अथवा अप्रस्तुतों के केवल एक धर्म का कथन। यथा,

(क) सुर औ संत, स्वदेश-रत, तीनों सुकृत-निधान।
दिव्य ज्योति हैं धारते प्रिय परमार्थ-प्रधान॥

यहाँ सुर इत्यादि अप्रस्तुतों में 'दिव्य ज्योति धारते' यह एक धर्म कहा गया।

(ख) चल रहा चक्र यह गाँधी जी का सब थल,
चल रहा पवन स्वदेश-प्रेम का अजय।
चल रहा द्रोह इस विषय में शासन से,
चल रहा धरना तमाम अति ही अभय॥

चल रहा सुंदर विचार देश-उन्नति का,
चल रहा जोर राज्य टारने का दुःखमय।
चल रहा दमन है घोर दुष्ट शासन का,
चल रहे आँगल के प्राण अवलोक लय॥

यहाँ चक्र इत्यादि अनेक प्रस्तुतों का 'चल रहा' यह एक धर्म कहा गया।

(ग) [1]जल से तन, मन सत्य से, बुद्धि ज्ञान से तात!।
आत्मा शिक्षा और तप से हों शुद्ध सुभ्रात!॥

द्वितीय अर्थात् हित और अहित में तुल्य व्यवहार। इसके दो प्रकार हैं—श्लिष्ट और अश्लिष्ट।

श्लिष्ट—

गाँधी! है शंका नहीं, हो गुणवान अपार।
भारत औ इँगलैंड को देते हो तुम हार[2]॥

अश्लिष्ट—

धन्य-धन्य! तुम धन्य! अहो! गाँधी! इस जग में।
विश्व-प्रेम है भरा अलौकिक तव रग-रग में॥
अरि औ मित्र समान, भेद का भाव नहीं कुछ।
सुमन[3] समान सुगंध, नहीं दुर्भाव कहीं कुछ॥

---

1. Body is purified with water, mind by truth, intellect by knowledge, and spirit by education and penance. —Manusmriti

२ पुष्पमाला; पराजय

३ वंदौं संत समान चित, हित, अनहित नहिं कोय।
अंजुलिगत शुभ सुमन जिमि, सम सुगंध कर दोय॥—रामायण

तृतीय अर्थात् प्रस्तुत की श्रेष्ठ गुणवालों के साथ गणना। यथा,

गाँधी हैं विराज रहे भारत के बीच आज,
चिंता न तनिक भी है विष्णु भगवान को।
चिंता न गणेश को, सुरेश को, महेश को न,
चिंता नहीं आदि शक्ति, शक्ति-शुभ-स्थान को॥
चिंता न धरा को, न धराधर[1] को चिंता जरा,
अचल भरोसा अचला को, सुख-खान को।
टारेंगे य भार औ उबारेंगे भारत को हाँ,
वारेंगे विपद, वार विपद-निधान को॥

१८ दीपक

प्रस्तुत और अप्रस्तुत का एक धर्म-वर्णन दीपक है। यह दो प्रकार का होता है—श्लेष-मिश्रित और अश्लेष-मिश्रित।

श्लेष-मिश्रित। यथा,

देश-भक्त औ ईश-भक्त औ सत्य-भक्त जो।
धर्म-भक्त औ ज्ञान-भक्त व सुकृत्य-भक्त जो॥
भक्त-स्वजन, जनता-जनार्दन-भक्त महाजन।
भक्त-संत औ भक्त-कंत सो जान महाजन[2]॥

यहाँ प्रस्तुत तथा अप्रस्तुत दोनों का एक धर्म है महाजन होना अर्थात उनमें बड़प्पन वा साधुता का होना।

---

१ शेष नाग।

२ श्रेष्ठ व्यक्ति; साधु

अश्लेष-मिश्रित। यथा,

कोमलता ओ लवणता ओ सुगंधसे पद्म।
दर्शन, धर्म व काव्य से भारत शोभ अछद्म॥

यहाँ प्रस्तुत पद्म और अप्रस्तुत भारत का 'शोभ' यह एक धर्म बतलाया गया है।

१६ कारक-दीपक

जहाँ अनेक क्रियाओं का एक ही कारक हो वहाँ कारक-दीपक होता है। यथा,

(क) डरते और डराते, धमकाते, दुख लाते।
गिरते और गिराते, रहते हैं मदमाते॥
कुछ देते, बहु रखते रोक, बहुत इतराते।
करें मंत्रणा और दमन की नीति चलाते॥

(ख) दूत[१] पठाया, विनय की, दिया शांति-विश्वास।
सफल नहीं जब तब किया नमक-नियम का नाश॥

(ग) [२]मीराबेन, रेजिनल्ड रेनल्ड्स[३] अभिलाषी पहले हम जायँ।
रोका गाँधी ने उनको ओ बोले उनसे यों समझाय॥—दं॰या॰

(घ) चाहूँ नहीं बनूँ जग में सम्राट कहीं का।
बनूँ अजी; मैं लाट वा बड़ा लाट कहीं का॥

---

१ गाँधी जी ने बड़े लाट के पास साबरमती-आश्रम-वासी श्री रेजिनल्ड रेनल्ड्स नामक एक अंगरेज को अपना पत्र लेकर भेजा था। २ आश्रमवासी एक अंगरेज रमणी। ३ नमक-नियम भंग करने के लिये पहले जत्थे में ही भाग लेने के लिये ये दोनों समुत्सुक थे।

बनूँ कहीं का राजदूत—अभिलाष न सपने।
चाहूँ यही धरूँ गाँधी-पद-रज शिर अपने ! ॥

(ङ) कोई[1] जन, समुदाय, राष्ट्र वा निज अनुभव के ही बल चारु।
कर सकता है प्रगति जगत में, जानें इसे प्रबल आधार ॥
इसी तरह मैंने की है तय अपनी अकस मंजिले यार ! ।
गिरे, उठे, गिरकर ओ उठकर चले, किया निर्धारित कार ॥

यह उक्ति प्रधान मंत्री श्री जवाहर लाल जी की है।

(च) सलिल[2] बहा ले जाव तुम, जो कुछ मुझमें पाप।
कहा असत्य, किया कभी द्रोह, दिया अभिशाप ॥

(छ) क्या[3] यदि तू धारे जटा, धारे वल्कल चीर।
भीतर में है मल भरा, बाहर धोवे नीर ॥

(ज) चौराहे पर सर्व थल, अगजा फूँका जाय।
आया चारों ओर से उरका मल न दुराय ॥
उरका मल न दुराय, रहे सो उर में छाया।
नस-नस में ओ रग-रग में वह रहे समाया ॥

---

१ One who never turned his back, but marched breast forward,
Never doubted clouds would break,
Never dreamed, tho' right were worsted, wrong would triumph,
Held we fall to rise, are baffled to fight better,
Sleep to wake —Browning

२. इदमाप प्रवहत यत्किञ्च दुरितं मयि।
यद्वाहमभिदुद्रोह यद्वा शेप उतानृतम् ॥ —ऋग्वेद

३. किन्ते जटाहि दुम्मेध किन्ते अजिन साट्टया।
अब्भन्तरन्ते गहनं बाहिरं परिमज्जसि ॥ —धम्म पद

दुराचार नाचे सब ओर, करे जो चाहे।
बना अगंजा, इसे न जाने दें चौराहे॥

यहाँ मल और दुराचार अनेक क्रियाओं को कर्त्ता हैं। अतः यह कारक-दीपक अलङ्कार है।

२० माला-दीपक

पूर्व-वर्णित वस्तुओं से उत्तरोत्तर वर्णित वस्तुओं का एक धर्म से संबंध होना माला-दीपक कहलाता है। यथा,

(क) देश-भक्ति से देह यह, वंश देह से सोह।
ग्राम वंश से, ग्राम से भारत शुभ संदोह॥

(ख) भारत-रुचि काँग्रेस, काँग्रेस-रुचि गाँधी सुभग।
गाँधी-रुचि-यह देश रहे स्वतंत्र, सुखी सदा!॥

२१ आवृत्ति-दीपक

अर्थ अथवा पद एवं अर्थ की आवृत्ति को आवृत्ति-दीपक कहते हैं। इसके तीन भेद हैं—

(१) पदावृत्ति (२) अर्थावृत्ति तथा (३) पदार्थावृत्ति।

(१) पदावृत्ति अर्थात् जहाँ भिन्न अर्थवाले एक ही क्रियात्मक पद की आवृत्ति हो। यथा,

(क) बरस रहा था वचन वर गाँधी का सुख-साज।
बरस[1] एक भीतर अजी! ले लो मित्र! स्वराज॥

---

१ यह गांधी जी का ओजपूर्ण वचन था–'Swaraj in a year' जिस से देश में काफी जोश आ गया था।

(ख) नीच किसी को गुन न तू, कर उसका सम्मान।
गज की जाती जान है, चींटी से जग जान ॥

(२) अर्थावृत्ति अर्थात् जहाँ एक ही अर्थवाले विभिन्न शब्दों की आवृत्ति हो। यथा,

(क) करम सुधांशु[१] सुभास[२] से विकसे कुमुद-समूह।
विलसे चारु चकोर जन, उडुगण आई रूह ॥

यहाँ विकसे, विलसे और रूह आई एक ही अर्थ के विभिन्न शब्द हैं।

(ख) चंदन-गंध उड़े तभी, जब कटु चोट गडाँस।
धूप जले सौरभ उठे, उर छेदे सुर बाँस ॥—बाहु बलिशतक

(३) पदार्थावृत्ति अर्थात् पद की आवृत्ति जिस में शब्द भी वही हो और अर्थ भी वही। यथा,

(क) कनक कशिपु को था जीता नरसिंह ने, जो
प्रह्लाद को था देता पीर सब तौर की।
रावण को जीता राम ने, सहस्रबाहु को था
जीता द्विजराज ने, थे वीर-शिरमौर जी ॥
कंस को था जीता कृष्ण ने औ दुरयोधन को
जीता धर्मराज ने, जो गूंजे सब ठौर ही।
योंही दुराचार-अत्याचार के आगार को हाँ,
जीता गाँधी जी ने, पर ले के अस्त्र और ही ॥

(ख) धर्म भरे परम सुकर्म भरे अनुपम,
सत्य औ अहिंसा भरे, दया भरे तुम थे।

---

१ चंद्र अर्थात् करम चंद (गाँधी) २ प्रकाश

नेम भरे और सुठि छेम भरे, प्रेम भरे,
जनता के दीनता औ दुःख भरे तुम थे॥
राम-भक्ति भरे, राम-नाम-अनुरक्ति भरे,
विश्व-हित-भाव भरे, न्याय भरे तुम थे।
महारिपु पर जय प्राप्त की सु-भाव[१] भरे,
रिपु-जय-गर्व के अभाव भरे तुम[२] थे!॥

(ग) निज[३] बल निज रक्षा नहीं कर सकता जो देश।
निज को रखे स्वतंत्र वह, यह अधिकार न लेश॥
(घ) गाँधी[४] की बातें नहीं माने भारत मित्र!
तो भारत भारत नहीं रह जाता है मित्र!॥
ये दोनों वाक्य प्रधान मंत्री, पंडित नेहरू के हैं।

(ङ) प्रभु[५] की साधारण कृपा के फल विभव महान।
परम कृपा के फल अजी! नैतिक गुण-गण ज्ञान॥

२२ देहली-दीपक

जहाँ एक ही पदका दो वाक्यों में अन्वय हो वहाँ देहली-दीपक होता है। यथा,

---

१ सुंदर भाव अर्थात् सन्मित्र का भाव। गांधी जी सदा यही कहा करते थे कि मेरा शत्रुत्व अंगरेजी शासन से है न कि अंगरेजों से। २ "अलंकार-मंजरी" में दिये गये उदाहरण के आधार पर रचित।

३-४ ता० १४-४-६० को पटना गाँधी मैदान में भाषण देते हुए नेहरू जी ने ये बातें कही थीं।

५. Sir Thomas Browne in his "Religio Medici."

(क) पौरुष, ऐक्य प्रलय लहैं स्वावलंब अभिराम।
धर्म नशे धन, धवलता, पर-शासन परिणाम॥

यहाँ 'प्रलय लहैं' और 'नशे' में 'देहली-दीपक' हैं।

ख) कला-कुशलता राजती शोभा ललित ललाम।
विमल विवेक लसे विभव देहली[1] अनुपम धाम॥

यहाँ 'राजती' और 'लसे' में यह अलंकार है।

२३ प्रतिवस्तूपमा

उपमेय और उपमान के दो वाक्यों में एक ही समान धर्म भिन्न-भिन्न शब्दों से कहे जाने को प्रतिवस्तूपमा कहते हैं। इसके तीन रूप हैं—

(१) समान धर्म (२) वैधर्म्य और (३) माला।

(१) समान धर्म। यथा,

(क) शोभे प्रिय प्रह्लाद राम-भक्ति दृढ़ प्रबल बल।
गाँधी पूजित पाद विलसे सत्याग्रह गहे॥

यहाँ 'शोभे' और 'विलसे' समान धर्म भिन्न शब्दों में कथित हैं।

(ख) अजी! विदेश व देश के कटु वच करे न कार।
असर न करती अंबु में तनिक तीर-तलवार॥

गाँधी जी के प्रति यह उक्ति है।

(२) वैधर्म्य—

देश-भक्त के कष्ट को मान देश का भक्त।
प्रसव-व्यथा जाने नहीं बाँझ, भाग्य से अस्त॥

---

१ दिल्ली

(३) माला--

गहा असह अपमान को, लही मार[१] भी तात।
मलय रखे विषधर, धरें गरल मार-रिपु भ्रात ! ॥
यहाँ एक ही धर्म शब्द-भेद से कई बार कहा गया है।

२४ दृष्टान्त

जहाँ उपमेय, उपमान और उनके समान धर्मों का बिंब-प्रतिबिंब भाव होता है वहाँ दृष्टान्त अलङ्कार माना जाता है। इसके तीन प्रकार हैं--(१) समान धर्म (२) वैधर्म्य और (३) माला।

(१) समान धर्म—

(क) सत्य-अहिंसा में अहो ! राजे अमित उजास।
सहस्रांशु व सुधांशु में भ्राजे अतुल प्रकाश ॥
(ख) जीत सका वर बृटिश को सत्य-प्रताप अपार।
दुर्योधन पर जय लही धर्मराज्ञ ने यार ! ॥
(ग) स्वयंचरों को साथ ले, गाँधी जयी सुजान।
वानर - सेना साथ ले, विजयी राम महान ॥
(घ) मोहन ने अरि-अनल का किया पान, सुख मान।
मोहन ने प्रिय था किया दावानल का पान ॥
(ङ) श्री गाँधीजी ने किया शासन बृटिश विनाश।
रवि अतिही लघु लख पड़े, उदय विश्व-तम नाश ॥

---

१ गांधी जी ने भारत में और दक्षिण अफ्रिका में मार खाई थी !

(च) गाँधी ने शोषण किया शासन प्रबल महान।
कुँभज ने शोषण किया वारिधि, विदित जहान॥

(छ) शास्त्र-पुराण कथित कथा का गाँधी लें सार।
पय को गहता हंस है, तजता वारि विकार॥

(ज) गाँधी कारागार गये जब करने उसे प्रकाशित, मान्य।
छोड़ गये जाज्वल्य ज्वालमय ज्वलन[१] जवाहर प्रमुख सुजान॥
श्याम सुघन आवास, नील आकाश मध्य मार्तण्ड महान।
गया यदा था छोड़ गया भूपर कृशानु[२] को तेज-निधान॥
—दं० या०

(झ) भारत - माता के लिये, खादी में भगवान।
बसे द्रौपदी के लिये, साड़ी में जन-त्राण॥

(२) वैधर्म्य—

जकड़ा नरके उर पाप अहो ! इस भाँति भयंकर औ विकराल।
छल-छद्म बना प्रिय पद्म समान, सुदुःसह जीवन, कष्ट कराल॥
यह तो विलसे तबलों, जबलों अवलोकें नहीं अखिलेश कृपाल।
प्रति पंकज-कोश तमिस्र[३] दुरे जब ताकें तमारि[४] दिनेश[५] दयाल[६]॥

यहाँ पाप का रहना और तमिस्र का दूर होना वैधर्म्य में दृष्टान्त है।

---

१. अग्नि। २. अग्नि। ३. अंधकार। ४-५ सूर्य। ६. श्री कन्हैयालाल जी पोद्दार कृत "अलङ्कार-मञ्जरी" की पद-संख्या — के आधार पर रचित।

(३) माला—

(क) शाण चढ़ा मणि, रण-विजयी शस्त्राहत औ गजेन्द्र मद-क्षीण
शरत काल सकुचित सरिता, चंद्रमाद्वितीया का अति दीन ॥
मुग्धांगना[१] मदन - व्यथिता, गत - संपत दानी पुरुष उदार ।
स्वीय क्षीणता से शोभें[२], शोभें गाँधी कृश जन - दुख-भार ॥
(ख) केवट को गुन भरत सरिस भेंटे उससे रघुवर भर अंक ।
शवरी का जूठा तक खाया, मानों थे वे कब के रंक ॥
वानर-भालु जंगली जीवों से जोड़ा उनने संबंध ! ।
आदिमवासी, वन्य व हरिजन तव स्व-प्राण गाँधी ! मृदु-गंध !

—दं० या०

२५ निदर्शना

प्रथम—वस्तुओं के परस्पर संबंध में, चाहे वह संभव हो अथवा असंभव सादृश्य दिखलाना निदर्शना है। यह प्रथम भेद है। इसके तीन भेद हैं—(१) संभव वस्तु संबंध (२) असंभव वस्तु संबंध और (३) मालारूप।

(१) संभव वस्तु संबंध

(क) गाँधीजी इस जगत में पुरुषोत्तम कहलायँ।
सत्य-अहिंसा में अमित तेज-महत्त्व बतायँ॥
(ख) शिव कैलास, पयोधि में बसें विष्णु भगवान।
बंधन-मुक्त निवास में सुख, दरसायँ महान॥

---

१ विरह-संतप्ता साध्वी स्त्री। २. "नीति-शतक" के एक श्लोक का अनुवाद।

(ग) गिरिशिर-गिरिकण पवन-बल नीचे गिरता आय।

नीच उच्च पद ग्रहण कर गिरता यह दिखलाय[1] ॥

यहाँ सर्वत्र क्रिया द्वारा दृष्टान्त-रूप से दूसरों को बोध कराया गया है।

(२) असंभव वस्तु संबंध

वाक्यार्थगत—

(क) सत्य - अहिंसा त्याग कर जो चाहे लें राज।

सो चाहे पद काटकर चढ़ना पर्वत - राज ॥

(ख) सत्य-अहिंसा रहित हो चाहे रखें स्वराज।

चाहे दरके पात्र में सो रखना जल साज ॥

पदार्थ-गत—

हरि-हिय कौस्तुभमणि सुभग, शोभे परम पुनीत।

गाँधी उर धारे घड़ी, धारें हरि-छवि मीत ! ॥

यहाँ सर्वत्र उपमाकी कल्पना द्वारा असंभव संबंध की असंभवता दूर हो जाती है।

(३) मालारूप

(क) अरण्य में रोना, शवको उठाना, धरणी पै

कमल उगाना और ऊषर में वर्षण।

सीधा करना श्व-पुच्छ, बोलना बधिर ढिग,

धरना अंधेके सामने सुभग दर्पण ॥

---

१. उन्नतं पदमवाप्य यो लघुर्हेलयैव स पतेदिति ब्रुवन्।

शैलशेखरगतो दृषत्कणश्चारुमारुतधुतः पतत्यधः ॥—काव्यप्रकाश

निकालना अनल से जल, जल से सु-घृत,
गरल से सुधा और सिकता से तैल-कण।
हत्याकाण्ड, रोलैट विधान के विधाता से है,
गहना भारत की स्वतंत्रता परम धन ॥

(ख) भुज-बल से सागर तरना औ धरना विषधर।
कर गहना चाँदनी, लाँघना मेरु महीधर ॥
चाह रहा निःसंशय, है जो चाह रहा नर।
तव गुण-गण-वर्णन करना ह नर-वर[१] ! मुनिवर[२] ! ॥

दोनों उदाहरणों में अनेक उपमानों के वर्णन होने से ये मालारूप निदर्शना हैं। सभी उपमानोपमेय भाव में परस्पर संबद्ध हैं।

द्वितीय भेद—इसमें उपमेय का गुण उपमान में अथवा उपमान का गुण उपमेय में आरोपित होता है।

उपमेय के गुण का उपमान में आरोप—

क) गाँधी की ही गंध है अमल कमल में मित्र !।
गाँधी की ही गंध है पारिजात में चित्र ॥

(ख) गाँधी का प्रताप प्रभाकर में विराजता औ
गाँधी की ही ज्योति विराजती रजनीश में।
गाँधी की व्यापकता-उदारता विराजे व्योम,
गाँधी की गंभीरता विराजती वारीश में ॥

१-२ महात्मा गाँधी।

गाँधी की ही धीरता ओ उच्चता विराज रहीं,
विश्व-वंदनीय, विश्व-विदित गिरीश में।
गाँधी का ही साहस विराजे सिंह में अतुल्य,
गाँधी का ही तेज दुक मुकुट महीश में॥

उपमान के गुण का उपमेय में आरोप—

महात्मा के वचन में, निवसे सुधा-मिठास।
उनके मंजुल हास में, सदा सुधांशु-उजास॥

दृष्टान्त अलङ्कार में भी उपमेय और उपमान वाक्यों का बिंबप्रतिबिंब भाव रहता है। परन्तु यहाँ दोनों वाक्य स्वतंत्र रहते हैं और उपमान द्वारा उपमेय का निश्चय कराया जाता है। निदर्शना में दोनों वाक्य एक दूसरे से संबंध रखते हैं।

२६ व्यतिरेक

उपमान की अपेक्षा उपमेय के उत्कर्षवर्णन को व्यतिरेक कहते हैं। यह चार प्रकार का होता है—

(१) उपमेय के उत्कर्ष और उपमान के अपकर्ष का कारण कहना। यथा,

(क) गाँधी गंगा से अधिक उपकारी प्रिय मित्र!।
वह मृतको दे मुक्ति ओ यह जीवित को चित्र!॥

(ख) जग-योद्धाओं से बढ़े गाँधी परम अभीत।
सत्य-अहिंसा से लड़े ये ओ वे विपरीत॥

(ग) गाँधी-हिय समता नहीं, कर सकता नवनीत।
ये पर-दुख से द्रवित हों, वह निज दुख से मीत!॥

(घ) राम[1] और द्विजराम और बलराम से अधिक साहस-पूर्ण।
बाज और मृगराज से बढ़े साहस में शिवराज सु-पूर्ण॥
है कविराज गिरा न मृषा, शिवराज किंतु थे सैन्य-समेत।
हिंसा ध्येय रहा उनका, गाँधी अ-सैन्य व अहिंसोपेत॥ दं०या०

(ङ) दिल्लीपति[2] औरंगजेब था कुंभकर्ण दानव अवतार।
काशीपति श्री विश्वनाथ भागे थे जिससे सुमति बिसार॥
भागे नहीं शिवा पै, रहे, निरंतर डटे स्वतेज सँभार।
गाँधी भिड़े अभय उससे रवि अस्त न जिसके राज्य अपार॥

(च) उस आस्तिक से जो रहे, नित आसक्त असत्य।
नास्तिक सौ गुण श्रेष्ठ जो तन दे पाले सत्य॥

(छ) धन खरदूषण! धन्य महिरावण! रावण धन्य!
निज भगिनी के मान-हित, दिये स्व-प्राण अनन्य!॥
दिये स्व-प्राण अनन्य! सहन कर ताप अपरिमित।
मान-बिमर्दन को गुन मान-विमर्दन निज, चित॥
राक्षस होकर भी तुम थे अति अद्भुत परिजन!
कहाँ मनुष्य करे पालन यह व्रत, दे तन-धन?॥

(ज) नील जलद शीतल जल को ही है बर्साता।
हाँ, ओला भी कभी-कभी यह है सरसाता॥
पै तुम[3] संतत तप्त तोय को हो बर्साते।
उससे बढ़े, अनल के ओले हो सरसाते॥

---

१ देखिये शिवराज-भूषण, पद्य-संख्या ५१
२ देखिये शिवा-बावनी, ,, २२

यहाँ निलहों को नील जलद से उपमा दी गई है और दोनों के आचरण में उत्कर्षापकर्ष बतलाये गये हैं।

(झ) धरती ! तू धरती अरी ! उर पर उदधि-पहाड़ ।
नर पै निज उर में धरे दुख-गिरि-उदधि अपार ॥

(ञ) गोमाता माता से बढ़ी हुई है, मानें।
माता सेवा चाहे, गो सो नहीं, य जानें ॥
माता के मरने पर होता व्यय क्या सोचो।
गोमाता मरने पर आती काम अनेकों[1] ॥

यहाँ भी गोमाता और माता—उपमेय और उपमान दोनों के उत्कर्षापकर्ष, कारण के साथ, वर्णित हैं। यह उक्ति गाँधी जी की है।

(ट) वंशीवट में वंशीधर ने वंशी टेरी।
जिससे सूखी लकड़ी ठंडी[2] हुई घनेरी ॥

---

१. Light of India P. 119

२ इस संबंध में इस अपूर्व वर्णन का आनंद लें—

ऐसी तो देखी नाहीं जैसी ब्रज मंडल माहीं,
अद्‌भुत, अनोखी बात मोपै कहि आवै ना।
अंबिका रसोई करन जैसे ही गई है आज,
बाँसुरी बजाई श्याम, रंच मोहि भावै ना ॥
मेधो मध्य बेधो रस, अनल बिहीन शक्ति,
फूँकि-फूँकि हारी, नेक दाहकता आवै ना ॥
ऐरी मेरी मैया तैं बरजि दै कन्हैया को
रंधन समय में श्याम बाँसुरी बजावै ना ॥

आश्रम में गाँधी ने वंशी ऐसी टेरी।
ठंडे भारत भर में गर्मीने आ घेरी॥
जिससे रिपु ठंडे पड़े, पंडे[१] भी ठंडे हुए।
फूटे हंडे दुःख के, ऊँचे अति झंडे हुए॥

यहाँ कृष्ण जी के वंशी टेरने से सिर्फ सूखी लकड़ियाँ ठंडी हो गई थीं और गाँधी जी के वंशी टेरने से इंगलैंड ठंडी हुई, उसके पुजारी ठंडे हुए, ठंडे भारत में गर्मी आई, दुःख दूर हुआ और स्वराज्य प्राप्त हुआ।

(२) उपमान के अपकर्ष का कारण-निर्देश। यथा,

धर्मराज से हैं अधिक गाँधी धर्म-निधान।
वे बोले वच द्वयर्थ[२] औ ये न कभी मतिमान !॥

(३) उपमेय के उत्कर्ष का कारण-निर्देश। यथा,

निशि में रवि न, न दिवस में शशि का सोह प्रकाश।
स्थिर प्रकाश से युगल को जीता[३] दिव्य-विभास !॥

(४) उपमेय के उत्कर्ष और उपमान के अपकर्ष के कारणों का अ-वर्णन। यथा,

(क) लेनिन[४], लिनकान[५] से विशद गाँधी जी की नीति।
इससे ज्ञानी नित गहें गाँधी-नीति स-प्रीति॥

---

१. सरकार के खुशामदी और देशद्रोही २ अश्वत्थामा हतो नरो वा कुंजरो वा—यह प्रसिद्ध ही है। ३ दिव्य ज्योति धारण करने वाले गाँधी जी ४ रूस का विख्यात साम्यवादी नायक ५ अमेरिका का प्रख्यात सर्व-प्रथम राष्ट्रपति।

(ख) ईश्वर से भी है बड़ा नैतिक नियम सुजान ।
सिखलाया यह जगत को बुद्ध ने सुमतिमान ॥
यह उक्ति गाँधीजी की है ।

२७ सहोक्ति

'सह' प्रभृति के बल से जहाँ एक ही शब्द के सहारे अनेक अर्थ प्राप्त हों वहाँ सहोक्ति होती है । यथा,

(क) गया हुलास सभी अशंक शासन करने का ।
गया आत्म-विश्वास अटल हो याँ रहने का ॥
गया विनोद, गया साहस शासक का चोखा ।
नमक-नियम के साथ गया रिपु-दर्प अनोखा ॥

(ख) सत्य गया व अहिंसा गई, शुभभाव गये व गये शुभ पंथ ।
धर्म गया, शुभ कर्म गया व गये व्यवहार अछद्म दिगंत ॥
नेम गया, शुचि प्रेम गया, सुठि न्याय गया व गये बहु संत ।
त्याग गया, अनुराग गया, प्रिय क्या न गया सँग गाँधी के हंत ! ॥

२८ विनोक्ति

एक के विना दूसरे की शोभा अथवा अशोभा का वर्णन विनोक्ति है ।

शोभा—

(क) कष्ट व संकट सत्य - हित सहा सदैव अकथ्य ।
[1]तुम में नाथ ! विराजता बिना स्वार्थ के सत्य ॥

१ गाँधीजी ।

(ख) क्या-क्या दुःख नहीं सहा जग-दुख-दारण हेत।
दंभ बिना [२]तुम में लसे विश्व-भावना सेत॥

अशोभा—

(क) जीवन और मरण दोनों ये एक तत्त्व के ही दो रूप।
संशय नहीं एक सिक्के के ही ये जानो युगल स्वरूप॥
मुझे सत्यतः जीवन-सुखसे मृत्यु-दुःख है अति सुस्वादु।
जाँच और यातना लवण, जीवन ये विना जिसके अस्वादु॥
—दं० या०

आश्रमवासियों के प्रति महात्माजी की उक्ति।

(ख) बुद्धिमान, विद्वान हुए औ ज्ञानमान भी।
कीर्तिमान, कुलवान हुए ऐश्वर्यवान भी॥
रूपवान, बलवान हुए गुणवान सभी विधि।
देश-भक्ति के विना रहे नादान सभी विधि॥

(ग) लिया मंत्र शिवका व शक्ति का मंत्र लिया है।
लिया रामका मंत्र बड़ा ही काम किया है॥
लिया बुद्ध वा महावीर का मंत्र महा है।
मानव-प्रेम सु मंत्र लिया न, कु-मंत्र गहा है॥

(घ) सीखा बिच्छू-मंत्र व सीखा सर्प-मंत्र भी।
सखा मारण-मोहन, भूत-पिशाच-तंत्र भी॥
तंत्र-मंत्र सीखा पर व्यर्थ हुआ हा! सब कुछ।
सीखा जो न विदेशी भूत भगाने का कुछ॥

(ङ) कला[१] बिना विज्ञान के, है दारिद्र्य-निधान।
है विज्ञान कला बिना, बर्बरता की खान॥
बर्बरता की खान कला-विरहित विज्ञान।
यही सोच करके गाँधी जी ने धीमान॥
वारण कर मस्तिष्क-मात्र की ही समुन्नति।
दिया जोर औ जोड़ी शिक्षा में आत्मोन्नति[२]॥

(च) सब सुख, सब आनंद है, सब विद्या औ ज्ञान।
बिना विश्वके प्रेमके, सब है विपद-निधान॥

शोभा-अशोभा—

सत्य बिना शोभें नहीं मानव, विद्या, राज।
सत्य बिना शोभें सही शठ औ चोर-समाज॥

२६ समासोक्ति

जहाँ प्रस्तुत के वर्णन से अप्रस्तुत का ज्ञान होता है वहाँ समासोक्ति होती है। इसके तीन भेद हैं— १) समान विशेषण द्वारा (२) समान कार्य द्वारा और (३) समान लिंग द्वारा।

(१) समान विशेषण द्वारा। इसके दो प्रकार हैं—अश्लिष्ट और श्लिष्ट।

अश्लिष्ट—

(क) भारत को भगवान ने सद् गुण दिये अनेक।
दिया ऐक्य भी क्यों नहीं, जो शत गुण में एक॥

---

१. Art without Science is poverty, but Science without Art is barbarism. —Bacon

२ बुनियादी शिक्षा से अभिप्राय है।

यहाँ कलह - प्रिय नेताओं के प्रति संकेत होने से समासोक्ति है।

(ख) भारत-धरणी ! धन्य तू, भाग्यशालिनी ! धन्य !।
तेरे क्रोड़ विराजते गाँधी परम अनन्य ॥

यहाँ प्रस्तुत भारत-धरणी से अप्रस्तुत किसी भाग्यशालिनी जननी का ज्ञान होता है।

श्लिष्ट—

मुख अतिशय दुर्गंधमय, मति-हत अति मतिमान।
वारुणी[1]-निरत, गुन नहीं अनुचित, उचित सयान[2] ॥

यहाँ विदेशी शासक की प्रतीति होती है जिसका मुख स्वराज्य-प्रदान संबंधी असत्य और दूषित भाषण से दुर्गंधमय हो गया है और जो मतिमान हो कर भी इस विषय में मति-हत है। वह वारुणि-प्रिय है अर्थात् अपने पश्चिम देश का प्रेमी है और स्वभावतः मदिरा-प्रेमी है, जिन कारणों से उचित और अनुचित का उसका विचार नष्ट हो गया है। इस प्रकार प्रस्तुत शासक से अप्रस्तुत पियक्कड़ की प्रतीति होती है।

(२) समान कार्य द्वारा—

(क) छेत्ता[3] से छाया कभी, हरते छन भर भी न।
पाहन खाकर भी तनिक, हनते अहो ! कभी न ॥

---

१. पश्चिम दिशा; मदिरा २. प्रोफेसर श्री देवेन्द्रनाथ शर्मा जी कृत "अलङ्कार-मुक्तावली" में इस संबंध में दिये गये उदाहरण के आधार पर रचित। ३ काटने वाला; दुष्ट शासक

यहाँ प्रस्तुत तरुवर से अप्रस्तुत गाँधी जी का ज्ञान होता है।

(ख) हृदय-विदारक और नित कर्त्ता कर्म जघन्य।
उसको जीवन, अन्न, धन देती भू! तू धन्य!॥

यहाँ प्रस्तुत कृषक से अप्रस्तुत शासक का बोध होता है। 'भू' भारत-भूमि का द्योतक है।

(३) समान लिंग द्वारा—

सती,[1] सतोगुण-रूप और करुणा-स्वरूप शुचि।
परम दिव्य, निरुपम सुंदरता, अति शोभन रुचि॥
निरख अहिंसा को यों उसपर सत्य निछावर।
लख हरि-रूप अहिंसा ने भी वरा सत्य वर॥

यहाँ सत्य और अहिंसा से अलौकिक गुरुता-सम्पन्न नायक और नायिका की पारस्परिक प्रीति की प्रतीति होती है। अहिंसा स्त्रीलिङ्ग और सत्य पुल्लिङ्ग के जो विशेषण हैं वे इस संबंध में उपयुक्त ही हैं।

३० परिकर

साभिप्राय विशेषण का प्रयोग परिकर कहा जाता है। यथा,

(क) काले हैं गाँधी, कालों के हैं प्रतिनिधि ये, काला देश।
सु-कमनीय काले कमरे में गये मिटाने काला क्लेश।

---

१ तपस्विनी।

(ख) चक्रपाणि[१] ! तुमको निरख क्यों भागे न सुरारि[२] ?।
अघ[३] क्यों हो न विलीन प्रभु ! पाकर तुम्हें अघारि ? ॥

(ग) इन्द्रिय-लोलुपता बढ़ी बेहद, हद न लखाय।
हृषीकेश[४] ! अविलंब अब हो हे नाथ ! सहाय ॥

३१ परिकरांकुर

साभिप्राय विशेष्य का कथन परिकरांकुर कहलाता है। यथा,

(क) लक्ष्मी[५]! तू दुर्गा बनी, देख दुर्ग-दुख देश।
है जादू तव नाम में, दे जगको उपदेश ॥

(ख) शासन-घाम सुघोर था, देता ताप महान।
गाँधी प्रकटे मेघ मृदु, सुखद अतीव सुजान ॥

(ग) दिया दुःख-संतार बहु रे मधुकैटभ मंद !।
बच न सका[६] दैत्यारि से, कर के भीषण द्वंद्व ॥

(घ) मोहन[७] का है दास वही जिसके हों जगमें मोहन काम।
अहो ! कर्म में चंद वही जो दे ज्योत्स्ना, दे सुधा ललाम ॥
गाँधी ! सच्चे मोहन दास व सच्चे कर्म चंद तुम चारु।
तव सुठि सदाचार का जगमें है बज रहा मनोहर[८] मारु ॥

---

१. विष्णु भगवान्; गांधी जी २ दैत्य; विदेशी शासक ३ पाप; अघासुर जो कंस का प्रधान सेनाध्यक्ष था; उच्च पदाधिकारी अंगरेज ४ इन्द्रियों का स्वामी; परमात्मा। ५ झाँसी की रानी श्री लक्ष्मी बाई ६ विष्णु भगवान्; गाँधी जी ७ कृष्ण भगवान् ८ डंका

३२ अर्थ-श्लेष

स्वभावतः एकार्थक शब्दों द्वारा अनेक अर्थोंका कथन अर्थ-श्लेष है। यथा,

(क) गाँधी ! मुख तव और रवि युगल एक सम सोह।
तिमिर-हरण,[१] शुभ दिन-करण, विमल-ज्योति संदोह[२] ॥

(ख) मोहन मोहन के सम भीति-निवारण, आधिव्याधि विदारण।
चक्र गहे अति शोभ रहे प्रिय, सत्य शुभाकृति विकृति-वारण ॥
दैत्य-विभंजन, सज्जन-रंजन, सूर, निरंजन, दुर्गति-दारण।
दीन-सुबंधु, दया शुचि सिंधु[३] विमुक्ति-विधायक, शोक-सँहारण ॥

(ग) चंद य चंद समान मनोज्ञ, पसार रहे मृदु चाँदनी मीत !
श्याम स्वरूप धरे उर में सुषमामय भारत की अचला नित ॥
भारत-सिंधु निहार, उमंग के भार प्रवर्द्धित पा वर वित्त।
आग चुगें जन मंजु चकोर व पान करें प्रिय प्राणद अमृत ॥

(घ) राम कहाँ तव चरण-रज, मानव-करणी ख्यात ?।
पाहन जितने जन हुए होते मानव नाथ ! ॥

इन उदाहरणों में तिमिर-हरण, शुभ-दिन-करण, मोहन, चंद आदि के स्थान इनके पर्याय-बाचक अन्य शब्दों के भी प्रयोग हों तो अर्थ नहीं बदलेंगे। इससे ये अर्थ-श्लेष हैं। शब्द-श्लेष में अनेकार्थक शब्द के अनेक अर्थ कहे जाते हैं और अर्थ-श्लेष में एकार्थक शब्द के अनेक अर्थ।

---

१ स्वराज्य का दिन-१५-८-१९४७ २ समूह ३ विदेशी शासन से मुक्ति

३३ अप्रस्तुत प्रशंसा

अप्रस्तुत के वर्णन द्वारा प्रस्तुत की प्रतीति अप्रस्तुत प्रशंसा कही जाती है।

इसके पाँच भेद हैं—(१) कारण-निबंधना (२) कार्य-निबंधना विशेष-निबंधना (४) सामान्य-निबंधना और (५) सारूप्य-निबंधना।

(१) कारण-निबंधना अर्थात् अप्रस्तुत कारण के कथन से प्रस्तुत कार्य का बोध। यथा,

(क) सत्य-अहिंसा ग्रहण कर को न चढ़ा आकाश ?।
किसकी ज्योति जगी नहीं ? भग्न न किस का पाश ?॥

(ख) हिंसा और असत्य से किसका हुआ प्रकाश ?।
को न नरकगामी हुआ ? किसका हुआ न नाश ?॥

यहाँ सत्य इत्यादि कारण अप्रस्तुत हैं और आकाश चढ़ना इत्यादि कार्य प्रस्तुत।

(ग) हिंसा और असत्य पर चाहे चलना लोग।
गाँधी चलने दें नहीं, गुन अंबुधि दुख-सोग।

यहाँ दुख-सोग अप्रस्तुत कारण से "हिंसा-असत्य पर न चलने देना" प्रस्तुत कार्य का बोध होता है।

(घ) कोमलता कमल से, काम्यता कपूर से ओ
शीतलता शीतांशु से ले हिय सुहावन।

नेत्र-ज्योति सूर्य से औ दिव्य दृष्टि सप्तर्षि से,
रचना-कौशल प्रकृति से अति भावन ॥
शूरता षड़ानन से, सु-बुद्धि गजानन से,
सनक-सनंदन से ज्ञान अघ-द्रावण।
चतुरता, दृढ़ता प्रभंजन के नंदन से
लेके चतुरानन ने रचा गाँधी पावन ॥

यहाँ कोमलता इत्यादि कारण अप्रस्तुत हैं और गाँधी की रचना प्रस्तुत है।

(२) कार्य-निबंधना अर्थात् अप्रस्तुत कार्य के वर्णन से प्रस्तुत कारण का बोध। यथा,

(क) गाँधी-प्रज्ञा-चक्षु रच विधिने धोया हाथ।
धोवन जमा वही हुआ जगत-चक्षु दिन-नाथ ॥

यहाँ गाँधीजी के ज्ञान-चक्षुकी ज्योति का वर्णन, प्रस्तुत कारण का बोध कराने के लिये, जगत्-चक्षु (सूर्य) निर्माण-रूप अप्रस्तुत कार्य का कथन किया गया।

(३) विशेष-निबंधना अर्थात् अप्रस्तुत विशेष के वर्णन से प्रस्तुत सामान्य का बोध, यथा,

धर असत्य को हृदय में, पहुँचा को न विनाश ?।
सत्य पाल किसने नहीं काटा यमका पाश ? ॥

यहाँ असत्य और सत्य के परिणाम कथन अप्रस्तुत विशेष से असत्य और सत्य आचरणवाले सामान्य प्रस्तुत के पतन और उत्थान का बोध होता है।

(४) सामान्य-निबंधना अर्थात् अप्रस्तुत सामान्य के वर्णन से प्रस्तुत विशेष का बोध। यथा,

(क) हिंसा नुचित है सदा, पर जब हिंसक पास।
बल-प्रयोग है उचित न कि कायरता से नाश॥

यह उक्ति गाँधीजी की है।

यहाँ हिंसा सहने वाले मनुष्य अप्रस्तुत सामान्य के वर्णन से बल-प्रयोग करनेवाले मनुष्य अच्छे हैं इस प्रस्तुत विशेष का बोध होता है।

(ख) आपस में अँगरेज सब कहें, "हर्ष की बात।
गाँधीजी का लक्ष्य है नहीं हमारा गात"॥

यहाँ "गाँधी....गात" इस अप्रस्तुत सामान्य से गाँधीजी की सुन्दर न्याय-नीति प्रस्तुत विशेष का ज्ञान होता है।

(ग) सत्याग्रह की नीति को कहें अनीति-निधान।
राजहंस तज को करे नीर-चीर पहचान?॥

यहाँ राजहंस अप्रस्तुत सामान्य से सत्याग्रह के नीति-औचित्य प्रस्तुत विशेष की प्रतीति होती है।

(५) सारूप्य-निबंधना अर्थात् प्रस्तुत का वर्णन कर उसके सदृश अवस्थावाले अप्रस्तुत का कथन। इसके तीन भेद हैं—श्लेष-हेतुक, श्लिष्ट विशेषण और सादृश्य-मात्र।

श्लेष-हेतुक—

सिंह न याँ अवकाश अब करने का तव वास।
विद्युद्दंड विराजता अतुलित-शक्ति-निवास॥

यहाँ सिंह के प्रति कथन अप्रस्तुत है और उसके समान अवस्थावाला बृटिश शासक प्रस्तुत।

श्लिष्ट विशेषण—

धन्य-धन्य तुम चक्रधर[1]! चक्री[2] करो निहाल।
व्याकुल करते चक्र[3] को चक्कर दे बेहाल॥

यहाँ विष्णु भगवान् अप्रस्तुत हैं और गाँधीजी प्रस्तुत। सादृश्य मात्र। इसे ही अन्योक्ति कहते हैं। यह तीन प्रकार की होती है :—

वाच्यार्थ में अर्थ का अनारोप—

क) कौन लाभ उस स्वर्ण-शैल औ रजत-अद्रि से करें विचार।
जहाँ वृक्ष बस वृक्ष ही बने रहते, लहते लव न सुधार॥
आदरणीय मलय पर्वत ही, जहाँ नीम, अर्जुन, कंकोल।
तरु भी चंदन हो जाते हैं, बन जाते हैं अमल अतोल॥
—दं० या०

यहाँ प्रस्तुत मलय पर्वत के वर्णन से स्वर्ण शैल और रजत पर्वत की हीनता प्रकट की गई। यह उपालम्भ उन धनी व्यक्तियों के प्रति है जो सिर्फ अपने में ही मग्न रहते हैं, कुत्तों की तरह केवल अपने ही पेट पालते हैं और दूसरों की, यहाँ तक कि अपने परिवार की भी कोई खबर नहीं लेते, उनकी सहायता नहीं करते। प्रशंसा चंदन की है—अर्थात् उस व्यक्ति

१. चर्खा रखनेवाले गांधीजी; सुदर्शनचक्र रखनेवाले विष्णुभगवान्।
२. चकवा; चर्खा चलानेवाला। ३ राज्य; सेना।

(४) सामान्य-निबंधना अर्थात् अप्रस्तुत सामान्य के वर्णन से प्रस्तुत विशेष का बोध। यथा,

(क) हिंसा नुचित है सदा, पर जब हिंसक पास।
बल-प्रयोग है उचित न कि कायरता से नाश॥

यह उक्ति गाँधीजी की है।

यहाँ हिंसा सहने वाले मनुष्य अप्रस्तुत सामान्य के वर्णन से बल-प्रयोग करनेवाले मनुष्य अच्छे हैं इस प्रस्तुत विशेष का बोध होता है।

(ख) आपस में अँगरेज सब कहें, "हर्ष की बात।
गाँधीजी का लक्ष्य है नहीं हमारा गात"॥

यहाँ "गाँधी.....गात" इस अप्रस्तुत सामान्य से गाँधीजी की सुन्दर न्याय-नीति प्रस्तुत विशेष का ज्ञान होता है।

(ग) सत्याग्रह की नीति को कहें अनीति-निधान।
राजहंस तज को करे नीर-क्षीर पहचान?॥

यहाँ राजहंस अप्रस्तुत सामान्य से सत्याग्रह के नीति-औचित्य प्रस्तुत विशेष की प्रतीति होती है।

(५) सारूप्य-निबंधना अर्थात् प्रस्तुत का वर्णन कर उसके सदृश अवस्थावाले अप्रस्तुत का कथन। इसके तीन भेद हैं— श्लेष-हेतुक, श्लिष्ट विशेषण और सादृश्य-मात्र।

श्लेष-हेतुक—

सिंह न याँ अवकाश अब करने का तव वास।
विद्युद्दंड विराजता अतुलित-शक्ति-निवास॥

यहाँ सिंह के प्रति कथन अप्रस्तुत है और उसके समान अवस्थावाला बृटिश शासक प्रस्तुत।

श्लिष्ट विशेषण—

धन्य-धन्य तुम चक्रधर[1]! चक्री[2] करो निहाल।
व्याकुल करते चक्र[3] को चक्कर दे बेहाल॥

यहाँ विष्णु भगवान् अप्रस्तुत हैं और गाँधीजी प्रस्तुत। सादृश्य मात्र। इसे ही अन्योक्ति कहते हैं। यह तीन प्रकार की होती है:—

वाच्यार्थ में अर्थ का अनारोप—

क) कौन लाभ उस स्वर्ण-शैल औ रजत-अद्रि से करें विचार।
जहाँ वृत्त बस वृत्त ही बने रहते, लहते लव न सुधार॥
आदरणीय मलय पर्वत ही, जहाँ नीम, अर्जुन, कंकोल।
तरु भी चंदन हो जाते हैं, बन जाते हैं अमल अतोल॥

—द्० या०

यहाँ प्रस्तुत मलय पर्वत के वर्णन से स्वर्ण शैल और रजत पर्वत की हीनता प्रकट की गई। यह उपालम्भ उन धनी व्यक्तियों के प्रति है जो सिर्फ अपने में ही मग्न रहते हैं, कुत्तों की तरह केवल अपने ही पेट पालते हैं और दूसरों की, यहाँ तक कि अपने परिवार की भी कोई खबर नहीं लेते, उनकी सहायता नहीं करते। प्रशंसा चंदन की है—अर्थात् उस व्यक्ति

१. चर्खा रखनेवाले गांधीजी; सुदर्शनचक्र रखनेवाले विष्णुभगवान्।
२. चकवा; चर्खा चलानेवाला। ३ राज्य; सेना।

की जो आस-पास के अपने दीन हीन परिजनों का परम उपकार करता है, उनके कलेवर तक पलट देता है। पुनः स्वर्ण-शैल और रजत गिरिरूप राजों-महाराजों के सम्पर्क से किसी की दशा में कोई परिवर्तन नहीं हुआ परन्तु चंदन-रूप महात्मा गाँधी के संसर्ग से कितने ही नीम चंदन हो गये—यह अर्थ भी इससे निकलता है।

(ख) मानसरोवर जो रहा हंस-कंज-आगार।
पंकिल ताल हुआ, भरा भेक, सर्प, सेवार ॥

यहाँ प्रस्तुत मानसरोवर के वर्णन से पुण्य[१]-भूमि भारत की वर्तमान हीन दशा का वर्णन है।

(ग) डाकू, चोर, लवार, धार देह खद्दर खदिर[२]।
हरिश्चंद्र-व्यवहार करें भला कैसे कहो ! ॥

यहाँ अप्रस्तुत हरिश्चंद्र के वर्णन से चंद्रमा समान श्वेत खद्दर धारी चोर आदि का दुराचार व्यक्त किया गया।

(घ) अजी ! नहीं वह राम अब, नहीं अयोध्या हाय !
रावण थल-थल राजता, थल-थल लंक लखाय ॥

यहाँ अप्रस्तुत प्राचीन भारत के वर्णन से वर्तमान भारत की दूषित और शोचनीय अवस्था व्यक्त की गई है।

---

१. गायन्ति देवाः किल गीतकानि,
धन्यास्तु ते भारत-भूमिभागे ॥

२. चंद्रमा।

वाच्यार्थ में अर्थ का आरोप—

हंस न त्यागो प्रकृति निज, नीर-क्षीर का ज्ञान।
देवोपम गुण यह सदा, भाजन मान महान॥

यहाँ अप्रस्तुत हंस के द्वारा प्रस्तुत मनुष्य को, कम-से-कम महात्मा गाँधी के अनुयायियों को, अपना न्याय, उचित-अनुचित का विचार, न त्यागने के लिये कहा गया है।

वाच्यार्थ में अर्थ का आरोप और अनारोप—

वपु सुठि, केसर-सुभग-युत हिंस्रक-गण-सिरताज।
यों शोभन वनराज पर क्यों मोहित[1] गजराज ?॥

विदेशी शासक रूप सिंह में अनुरक्त प्रस्तुत भारतीय भूप के प्रति यह उक्ति है। स्पष्ट न कहकर अप्रस्तुत गजराज को संबोधन कर यह कहा गया है। यहाँ सुठि वपु और सुभग केसर मोहक होने के कारण अनुकूल हैं। फिर भी, इन्हें प्रतिकूल कहा गया है और इस प्रकार आरोप किया गया। हिंस्रक होने से मोहकता नहीं आ सकती। यही अनारोप है। पुनः शोभन कहने से आकर्षण का आरोप हुआ परंतु यह भी अमोहकता का ही कारण कहा गया। अतएव आरोप और अनारोप यहाँ दोनों विराजमान् हैं।

३४ प्रस्तुताङ्कुर

प्रस्तुत से प्रस्तुत का द्योतन प्रस्तुतांकुर है। इसमें उपालंभ रहा करता है। यथा,

---

१ "अलंकार-मंजरी" में इस संबंध में दिये गये उदाहरण के आधार पर रचित।

(क) गाँधी को तजकर भजें बृटिशरका पद - कंज।
लात मारकर मित्र को, सहें लात अरि - पुंज ॥

(ख) चंद्र[1] त्याग, अनुराग है सदा राहु[2] के बीच।
सुधा त्याग गहते गरल जो है लाता मीच ॥

(ग) राजा[3] - राय - उपाधिधर गाँधी-संगति छोड़।
शासक की पनही धरें सरपर सादर दौड़! ॥

३५ पर्यायोक्ति

(१) अभीष्ट अर्थ का प्रकारान्तर से वर्णन पर्यायोक्ति है। यथा,

---

१. गांधी जी। २. विदेशी शासन।

३. इस बात की सत्यता में शायद ही किसी को संदेह हो। मेरा निजी अनुभव यह है--सन् १९३१ में बनारस के एक राजा ने विज्ञापन निकाला कि मुझे एक ऐसा प्राइवेट सेक्रेटरी चाहिये जो अन्य योग्यताओं के अतिरिक्त हिंदी में कविता भी कर सकता हो। मैंने आवेदन-पत्र भेजा। उसके साथ, कविता के प्रमाण-स्वरूप, "स्वदेश-सतसई" नामक स्व-रचित पुस्तक की (जिसमें ७५७ बरवै छंद थे और जो गाँधी जी को समर्पित थी) एक प्रति भेज दी। इसमें अँगरेज सरकार के अत्याचारों का भी कुछ वर्णन था। फिर क्या था? राजा बहादुर ने चट मेरी पुस्तक संयुक्त प्रांत की सरकार के पास भेज दी। उसने इसे बिहार सरकार के पास भेज दी। मैं इस समय आरा जिला स्कूल में अध्यापक था। मेरी खानातलाशी हुई। पुस्तक जब्त हुई और मैं बीस साल की सरकारी नौकरी से सदा के लिये हटा दिया गया!

(क) निर्मल जन तो है वही निर्मल तन का भक्त।
गोरे दिल का है वही गोरा - तन अनुरक्त॥
यह उक्ति अंगरेजों में अनुरक्त व्यक्तियों के प्रति है।

(ख) मुझमें नैतिकता नहीं! क्या कहते हो भ्रात?।
खादी मैं धारण करूँ, बची कौन सी बात?॥
यह नीतिभ्रष्ट खद्दरधारियों के प्रति कहा गया है।

(ग) मैं सुमार्गगामी नहीं! भाँग पड़ी तव बुद्धि।
हो आया हूँ जेल से, लिया डिप्लोमा शुद्धि॥
यह जेल से आने पर भी कुमार्ग पर चलनेवालों के प्रति कहा गया है।

(२) अभीष्ट अर्थ को प्रत्यक्ष न कहकर उसकी सफलता के लिये प्रकारान्तर से वर्णन। यथा,

(क) बड़े लाटने सत्वर उत्तर में बस किया स्व-खेद प्रकाश।
कहा, "आप जो सोच रहे हैं उसमें राज-नियम का ह्रास॥
इससे शांति-भंग का भय है, जिससे होती हानि महान।
कैसे, इस कारण, हो सकता सहमत इसमें कभी सयान!"
इसमें प्रत्यक्ष रूप से आदेश न देकर प्रकारान्तर से गाँधीजी को नमक-नियम भंग करने से रोका गया।

(ख) इन बातों पर ध्यान न देकर, कही गई हमसे यह बात।
"पूर्ण स्वराज्य-विषय की बातें करना, धरना धीपर लात॥
नहीं योग्य भारत इसके है अभी, न होने को चिरकाल।
ऐसा करना ढाना होगा उस पर आपद कठिन, कराल॥"
—दं० या०

सीधे यह न कहकर कि हम स्वराज्य नहीं देंगे विदेशी सरकार ने प्रकारान्तर से इसका निषेध किया।

३६ व्याजोक्ति

जहाँ निंदा से स्तुति और स्तुति से निंदा द्योतित हो वहाँ व्याज स्तुति होती है। इसके दो भेद हैं—

(१) निंदा में स्तुति और (२) स्तुति में निंदा।

(१) निंदा में स्तुति—

(क) नर-व्याघ्र, नर-शार्दूल हैं, नर-सिंह हैं, हैं क्या नहीं!।
यह बात है न छिपी किसी से, जानती दुनिया सभी॥
फिर भी इन्हें कहते महात्मा हैं लजाते जन नहीं।
यह शब्द का क्या दुरुपयोग न? यों भला देखा कहीं?॥

(ख) हिंसा करो असत्य की, सदा दुर्गुण हनते।
हिंसा करो अधर्म की सदा, पाप न गनते॥
हिंसा करो शाठ्य की और अशुद्धि चवाओ।
गाँधी! तदपि अहिंसा-व्रती सदा कहलाओ॥

(ग) खींचो खाल सु-धर्म की यथा बाल की खाल।
बने रहो सु-महातमा, अजब जगत का हाल!॥

(घ) भैरव, भूत, पिशाच, निशाचर, निशाचरी हैं आज हताश।
निखिल डाकिनी और शाकिनी, अखिल योगिनी-यूथ निराश॥
काली-हृदय हूक-सी और कपाली-डमरू मूक महान।
कारण रण-प्रयाण गाँधी का, जिसके हैं विपरीत विधान॥

(ङ) बोली हिंसा "अहो हंस-वाहन[1] ! आहत हो आई पास।
हुआ चाहता है स्रष्टा ! तव सुभग सृष्टि में मेरा नास॥
सत्यानासी, सत्य-उपासी, सतत अहिंसोल्लासी दुष्ट[2]।
कलि में भी कर रहा हमारी हिंसा, हों क्यों आप न रुष्ट ?

—दं० या०

(२) स्तुति में निन्दा—

(क) भारतको दो टूक कर, किया कलह दो टूक।
ऐसे सहृदय के गये, किसके हृदय न हूक ?॥

(ख) तरु सेमरसे सरसीरुह सदृश पुष्प खिलें अतिही मन-भावन
मकरंद-विमुग्ध मिलिंदधिरें, फल मंजुल आश शुकादि सुहावन॥
फल पायँ नहीं, उड़ जायँ सभी, तुममें यह बात नहीं अनभावन।
कर दो टुक देश दिया फल सुंदर, हो तुम सेमर से अति भावन॥

अर्थात् बृटिश शासक सेमर से बढ़े हुए हैं क्योंकि उसमें विशालता, फूलकी सुंदरता आदि हैं पर फलका नाम नहीं। कतु इनमें फलोत्पादनकी भी शक्ति है और इन्होंने भारत को दो टुक कर, कलह मिटाकर, यों शांति स्थापित कर, भारत को सुंदर और मधुर फल चखाया।

(३) और की निंदासे और की निंदा—

गौर तुम्हें किसने किया ? काला उर सब तौर।
शीत देश किसने दिया ? ग्रीष्म-रचयिता घोर॥

---

१. ब्रह्मा। २. गांधी।

(४) औरकी स्तुतिसे और की स्तुति—

पुण्य कौन ऐसा किया, पुरुषोत्तम कहलायँ।
जगके उत्तम पुरुष नित तव पद-लीक लुभायँ ?॥

(५) और की निंदासे और की स्तुति—

[1]नंगे में नित निरत हैं [2]मोती परम उजास।
भक्ति[3] जवाहर भी करें अनुपम, सहित हुलास॥

(६) और की स्तुतिसे और की निंदा—

तव प्रताप-रवि-उदयसे शासक-शशि अति मंद।
भारत-हृदय-कमल खिला, हत उलूक-आनंद॥

३७ आक्षेप

जहाँ किसी अभीष्ट अर्थ में विशेषता लानेके लिये उसका निषेध-सा किया जाय वहाँ आक्षेप अलङ्कार होता है। इसके तीन भेद हैं—(१) अभीष्ट अर्थका निषेध-सा करना। इसके दो प्रकार हैं—वक्ष्यमान - निषेधाभास और उक्त वस्तु में निषेधाभास।

वक्ष्यमान निषेधाभास—

(क) भक्ति हमें भगवान, दो निज अविरल, कर दया।
भक्ति हमें सुख-खान, वा हैही निज देश प्रति॥

(ख) अहो ! जनार्दन देव ! दो मुझको शुभ भक्ति निज।
वा हैही सुठि भेव, जन - जनारदन में मुझे॥

---

१. नंगा फकीर; महात्मा गाँधी। २. श्री मोतीलाल नेहरू। ३ श्री जवाहरलाल नेहरू।

उक्त वस्तु में निषेधाभास—

कारण भारत दुःखका, भारत ही है भ्रात ! ।
कहूँ और क्या ? समझ सब, मौन रहूँ मैं तात ! ॥

(२) पक्षान्तर ग्रहण कर वर्णित वस्तु का निषेध करना—

गाँधी के मंत्री न थे [१]महादेव गुण-ग्राम ।
गाँधी-हियके भाव के थे वे मूर्त्ति ललाम ॥

(३) अनभीष्ट वस्तु में सम्मतिका आभास—

रहो बने शासक अहो ! सुखसे भोगो राज ।
हम भी साज रहे सकल असहयोग के साज ॥

३८ विरोधाभास

वास्तविक विरोध न होने पर भी विरोध का वर्णन विरोधाभास है । यथा,

(क) लवण-नियम को वार कर, परम सलोने आप ।
दिया सलोने अन्न में प्रिय माधुर्य अमाप ॥

(ख) हो कर के भी चंद तुम, कहलाते हो सूर ।
कहा सूर, हो जड़ रहे, चार चाँद अक्रूर ! ॥

(ग) खोना निज को सर्व में कहें महात्मा मान्य ।
निज को पाने का अजी ! केवल मार्ग अनन्य[२] ॥

---

१. महात्मा गांधी के प्राइवेट सेक्रेटरी श्री महादेव देसाई ।

२. Mankind is notoriously too dense to read the signs that God sends from time to time. We require drums to be beaten into our ears, before we would wake from our trance. and hear the warning, and see that to lose oneself in all is the only way to find oneself. —Gandhi
(Mohan-mala by R. K. Prabhu, January 18)

(घ) विश्व बुराई का सखे! रचनेवाला राम।
तोभी रहे अछूत वह इससे जग-अभिराम[१]॥
(ङ) आग और पानी अगर चाहें, देखें साथ।
तो निहारिये नेहरू औ नवाइये माथ॥
(च) रख कर के भी चक्र औ, रख कर के भी सिंह।
देश अहिंसा का व्रती, कहते जो नरसिंह॥
(छ) जो बूड़ा न स्वदेश में, बूड़ा सो मति मंद।
बूड़ा जो निज देश में, तरा अमंद, सु-वंद्य॥
(ज) फँसा अजी! प्रेम सुपाश में है। य धर्म जो नित्य प्रकाश में है॥
य भावना ठीक मनुष्य सी है। दया महा पूजित प्रेयसी है॥

दया दक्ष प्रजापति की कन्या थी जिसका विवाह धर्म से हुआ था। अतः इस कथन में वास्तविक विरोध नहीं है। प्रेमपाश में फँसने का दोष नहीं आता।

(झ) दुःख, रोग औ शोक का नहीं अंत कहीं है।
भवन कौन, जन कौन तप्त-संतप्त नहीं है?॥
पत्रों में पढ़, देख चतुर्दिक सु-विकट संकट।
कहते ईश्वर दीन-बंधु, त्राता अति उत्कट॥

---

१. I know that He has no evil in Him, and yet, if there is evil, He is the author of it, and yet untouched by it. I know, too, that I shall never know God, if I do not wrestle with and against evil, even at the cost of life itself.

—Gandhi
(Mohan-mala, January 5)

(ञ) तुम में यदि करुणायतन ! करुणा का कण एक ।
होता तो जग में नहीं होते दुःख अनेक ॥

(ट) अगणित हैं नक्षत्र, चंद्र औ सूर्य सोहते ।
सृष्टि असंख्य जीवमय नित जो चित्त मोहते ॥
ऐसे नभ को औ स्रष्टा को शून्य कहें हा ! ।
शून्य चेतना छोड़ कौन यह कह सकता, हाँ ? ॥

(ठ) करके रचना सृष्टि की व्याप रहे वाँ ईश ।
सृष्टि परे मम हृदय, याँ लख न पड़े जगदीश ॥

३६ विभावना

विना प्रसिद्ध कारण के कार्य की उत्पत्ति को प्रथम विभावना कहते हैं । यथा,

(क) उच्च कोटि के कौशल पर है नहीं सफलता निर्भर तात ।
प्रभु पर ही निर्भर यह औ वह दीनों का ही देता साथ ॥

(ख) पकड़े जाने पर मेरे साथी औ जनता मत घबड़ायँ ।
कारण, मैं न, ईश इस आन्दोलन का नेता न्याय-निकाय ॥

(ग) कल-बल-छल सब से भरे, धरे विपुल हथियार ।
हारे वहाँ जहाँ नहीं हाथ एक हथियार ॥

(घ) हिंसा का था बल प्रबल, था जो महा कराल ! ।
उसको हँस, हिंसा विना, जीता अहो ! कृपाल ! ॥

(ङ) शूर बड़े वीर बड़े और रणधीर बड़े,
कसे कड़े बंधन से यह देश - देशको ।

साहसी बड़े, न और देश हो सकें खड़े जो
चतुर-चालाक गहने में देश - केश को॥
राज्य में न इनके सहस्र कर डूबे कभी,
जल-थल-नभ अधिकार ज्यों सुरेश को।
धारे अस्त्र-शस्त्र भाँति-भाँति के कराल अति,
हारे सो निरस्त्र गाँधी से, न रहे लेश को ! ॥

(च) जग[१] में दो ही शक्तियाँ, असि व लेखनी मित्र !।
अंत लेखनी से सदा असि हो विजित, विचित्र ! ॥

द्वितीय—अपर्याप्त कारण से कार्य की उत्पत्ति। यथा,

(क) अतुलित बल, सेना अमित, विदित सकल संसार।
उसे अठत्तर मनुज ले, दी दंडी में हार ! ॥

(ख) महा प्रबल रिपु पर विजय, पाई प्रकट जहान।
सत्य-अहिंसा से अहो ! गाँधी अबल महान॥

(ग) अस्सी में भी असि गही, खसी न शौर्य - तरंग।
है यथार्थ बल हृदय में, कहे कुँवर- रण रंग॥

(घ) होने पर ही वृद्ध, दे जगत धर्म पर ध्यान।
बचपन में ही वीर ने गहा अलौकिक ज्ञान॥

---

१. There are only two powers in the world, the sword and the pen, and, in the end, the former is always conquered by the latter.

—Napoleon.

(ङ) रहे वर्ष तेरह के, कच्चे थे तुम सब विधि ! ।
किया मोह को वभी तीन-तेरह हे गुण-निधि ! ॥
जिसने सारे जग के सिर पर रक्खा पद निज ।
उसके सिर पर निज पद रक्खा, गत-मनसिज द्विज ! ॥
हे धर्म-वीर ! तव वीरता व्यापे सब थल में प्रभो ! ।
हे महावीर ! इस विश्व की वैर-विपद वारो विभो ! ॥

यहाँ तेरह वर्ष की कोमल अवस्था-रूप अपर्याप्त कारण से कठोर मोह पर विजय- प्राप्तिरूप कार्य की उत्पत्ति हुई ।

(च) धन्य हुमायूँ ! धन्य तुम ! रक्खा राखी-मान ।
हिंदू - भगिनी - हित हनी मुसलमानकी शान ॥
मुसलमानकी शान हनी हिंदू - भगिनी - हित ।
किया न शोच-विचार जातिका मन में किञ्चित ॥
नाता दूध न मानें जन याँ नीच नगण्य[१] ।
माना नाता धागे का, तुम अतिशय धन्य ! ॥

तृतीय—प्रतिबंधक के रहते हुए भी कार्य की उत्पत्ति । यथा,

(क) कांग्रेस साथ सदैव हैं, जो सद्गुण - आगार ।
दुर्गुण - दास बनें तदपि, सनें असुर-आचार ॥

(ख) रोकें अधिकारी सकल, रोकें पुलिस प्रवीण ।
तदपि सभागे भाग लें, छात्र प्रबुद्ध, अदीन ॥

---

१ तुच्छ; निकृष्ट

स्वतंत्रता-समर में छात्रों के भाग लेने की ओर संकेत है।

चतुर्थ—अकारण से कार्य की उत्पत्ति। यथा,

मलिन, अनित्य शरीर से निर्मल, नित्य सुकीर्ति।
करके सेवा देश की लहें सुमति शुचि-दीप्ति॥

पंचम—विरुद्ध कारण द्वारा कार्य की उत्पत्ति। यथा,

(क) गाँधी के कोमल वचन निगम-नीति-नय-पूर्ण।
शासन के उर कठिन को करते अतिशय चूर्ण॥

(ख) गाँधी जी का यह परम शीतल, सरल स्वभाव।
देता है संताप नित शासक को अति ताव॥

(ग) लखो अहिंसा से रुका हिंसा-वज्र-प्रभाव।
लखो साधुता से रुका शठता का शठ भाव॥

(घ) श्याम सदन को अहो! महात्मा गये महा तम जहाँ विराज।
करने को जग में प्रकाश, हरने को तम व तिमिर साम्राज्य॥

(ङ) जल के बदले जल यदि हम स-प्रेम पिलावें।
तो इस में क्या बात प्रशंसा की हम पावें?॥
प्यासे हैं ओ नहीं पिलावे जल हम को जो।
उसे पिलावें जल अति आदर से, शोभा तो॥
यह वचन गाँधी जी का है।

षष्ठ—कार्य से कारण की उत्पत्ति। यथा,

(क) बृटिश-राज्य ने अतुल दुख दिया कलेजा फाड़।
नयन-मीन से बह रही अबलों सरित अपार॥

(ख) महा रार करके लिया मुस्लिम पाकिस्तान।
अब इस पाकिस्तान से रार मच रहा तान॥
(ग) नेता - मेल - मिलाप का है स्वराज्य परिणाम।
इस स्वराज्य से निसृत है दृढ़ संगठन ललाम॥
(घ) और सरित-सर से प्रकट होता जग में पद्म।
गाँधी के उर-पद्म से सर-स्वराज्य, सुख-सद्म॥

४० विशेषोक्ति

कारण के रहते भी कार्य का न होना विशेषोक्ति है। इसके तीन भेद हैं – (१) उक्त निमित्ता (२) अनुक्त निमित्ता और (३) अचिंत्य निमित्ता।

(१) उक्तनिमित्ता अर्थात् जिसमें कार्य की उत्पत्ति न होने का कारण कथित हो। यथा,

दला न किसने देश को, दल-बल ले हा, हंत!।
दल न सका गुरु ज्ञान को, कृपा रही भगवन्त॥

(२) अनुक्त निमित्ता अर्थात् जिस में कार्य के न होने का कारण कथित न हो। यथा,

(क) रहा था हे स्वामी! तव निकट ही काल बहु लों।
चखा सुब्रह्मानंद परम परानंद मृदु सो॥
पिपासा पै मेरी निकट रहने की य न गयी।
महात्मा जी! कैसी तव सु-महिमा है मधुमयी!॥

यह गाँधी जी के किसी अनन्य प्रेमी के भावका वर्णन है। यहाँ पिपासा न जाने का कारण कथित नहीं।

४२ असंगति

संगतिका अभाव असंगति है। इसके तीन भेद हैं—

(१) कारण और कार्य का भिन्न-भिन्न स्थलों पर होना। यथा,

(क) नमक - नियम को तोड़ने, गाँधी चलते भूमि।
शासकका उर दलकता, उठती चिंता - ऊर्मि॥
(ख) असहयोगका योग लें गाँधीजी गुण - खान।
छूटे शासक - भोग औ शासन तपे महान॥

(२) अन्यत्र किये जाने योग्य कार्यका अन्यत्र किया जाना। यथा,

अस्त्र चाहिये तो बर्साना जहाँ अस्त्र हो।
लाठी उचित चलाना, चलता जहाँ अस्त्र सो॥
जहाँ न कोई अस्त्र, न लाठी, हिंसा कोई।
वहाँ अस्त्र - वर्षा करते जिनकी मति खोई॥

(३) जो कार्य करना है उसके विपरीत कार्यका किया जाना। यथा,

असहयोग आरंभ कर, अपनाया सहयोग।
अकस्मात इस कार्य से, हुए क्षुब्ध बहु लोग[१]॥

---

१ चौराचौरी में स्वयंचरों ने थाना जला दिया था। इस पर गाँधीजी ने असहयोग आन्दोलन स्थगित कर दिया था। प्रधान मंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू जब गत वर्ष पटने आये थे तब उन्होंने कहा था कि इस अचानक बंदकर देने के कार्य से मैं भी अत्यंत क्षुब्ध हुआ था। पर आज जब मैं इस बात पर विचार करता हूँ तब इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा करता हूँ।

४३ विषम

यह अलङ्कार तीन प्रकार का होता है—(१) दो बे-जोड़ वस्तुओं का संबंध बताना। यथा,

(क) कहाँ सत्य-शुचि-धर्म-रत, गाँधीजी अति वंद्य।
कहाँ असत्य-अधर्म-रत शासन अतिशय निंद्य॥

(ख) कहाँ बृटिश अति विक्रमी अस्त्र-शस्त्र से पूर्ण!।
भारतीय जन-गण कहाँ, अबल, निरस्त्र, सु-चूर्ण!॥

(ग) भूखों मरें असंख्य नर, पशु-हत्या भरमार।
ऐसी होली में भला कौन मजा है यार?॥
कौन मजा है यार! मधुर पूआ खाने में?।
कौन मजा है, नवल वसन तन पै लाने में!॥
अंग-अंग में भारत के बदरंग निरेखो।
होली की लाली क्या, नर जब मरते भूखों!॥

(२) कारण और कार्य के गुण अथवा क्रियाएँ परस्पर विपरीत हों।

गुण-वैषम्य—

(क) तुम तो हो उज्ज्वल परम, गाँधी काले, श्याम।
काली फैली कीर्त्ति तव इनकी धवल, ललाम॥

(ख) अंग-अंगपर पानी यह तव शीतलता का जो आगार।
उठा रहा है आँगल के प्रिय अंग-अंग में अति अंगार॥

—दं० या०

अरब सागर में नमक-नियम तोड़ने के समय गाँधी जीके स्नान के संबंध में यह कहा गया है।

(ग) नतशिर गाँधी सिंधु निकट जब नमक ले रहे उससे धीर।
नत शिर यों शासनका, उन्नत शिर भारतका करते वीर॥
—दं० या०

(घ) कितने जनों के हृदय में बर्छे अजी! भोंके गये।
कितने सुजन उस समय अहह! शिकार गोली के हुए॥
इज्जत बची थी नारियों की भी नहीं उस ठाम में।
थे काम यों काले हुए निलहों के गोरे चामसे॥

क्रिया-वैषम्य—

(क) गाँधी - संगति से उगें, देश - भक्ति-शुभ ज्ञान।
किंतु इसी से आ जगें जेल व संकट प्राण॥

(ख) नमक नहीं यह उठा रहे हैं गाँधीजी निज कर में आज।
बिठा रहे हैं, गाड़ रहे हैं स्वतंत्रता-सुर-लता, स्वराज॥
—दं० या०

(ग) नीचे को मुड़ना यह उनका ऊपर को उड़ना अति रम्य।
नीचेको नवना यह उनका अहो! उड़ाना शत्रु अदम्य॥
—दं० या०

(घ) दलन कर रहे दमन से, शमन देश-अनुराग।
उपजाता यह अमन पै, देश-भक्ति औ त्याग॥

(३) कर्त्ता को क्रिया के फलकी प्राप्ति न होकर अनिष्ट घटित होना—

(क) "भारत छोड़ो" सुहृदकी थी यह सुखद सलाह।
इसपर शासन ने तुरत दिया वज्र ही ढाह!॥
(ख) करें प्रार्थना पुण्य, शुभ-स्वराज्य के हेतु नित।
पै भर्त्सना जघन्य, उत्तर में हमको मिले॥
(ग) सात[१]वीर, रणधीर छात्र शुचि मति में पागे।
बढ़े, त्याग सब भय, पटना सचिवालय आगे॥
गाड़ें ध्वजा शिखर पर इसके मनमें लाकर।
गोली खाकर मरे सकल फाटक ढिग जाकर॥

१, यह सन् १९४२ की घटना है। एक भारी भीड़ पटना सेक्रेटेरियट की ओर उसपर झंडा फहराने के लिये बढ़ी। इसमें विद्यार्थियों का भी झुंड था। इसमें से सात झंडा लेकर इस काम के लिये फाटक की ओर बढ़े। वहाँ सरकारी अफसरों ने रोका। पर ये अपने प्रण से कब पीछे हटनेवाले थे? ये कलेजे तानकर आगे बढ़े। उधर से गोलियाँ चलीं। ये सातो उनके शिकार हुए। वर्तमान् कांग्रेस-सरकार ने फाटक के समीप, थोड़ी ही दूर पर, बहुत खर्चकर, इनकी पूरी कदकी मूर्त्तियाँ, ठीक उसी अवस्था में जिसमें ये उस समय अवस्थित थे, हाल में स्थापित की हैं। इनकी आत्माओं की शांति के लिये गया के श्री बाबा कारूदासजी की सुयोग्य शिष्या श्रीरामेश्वरीदासी जी की उत्कट प्रेरणा एवं परिकरबद्धता से फाटक से कुछ ही दूर पर श्री राम महायज्ञ का अनुष्ठान किया गया, जो ता: २९-४-६० से आरंभ होकर ५-५-६० को समाप्त हुआ। इसमें कुछ मिनिस्टरोंने भी हाथ बटाया पर बिहार कौंसिल के स्पीकर, श्री विन्ध्येश्वरी प्रसाद वर्मा जी इसके प्राण थे।

यहाँ ध्वजा गाड़ना फल की प्राप्ति न होकर गोली खाकर मरना अनिष्ट घटित हुआ।

(घ) कसे वीरता का बाना सातो ये सोहें।
फाटक ढिग इनकी सु-मूर्त्तियाँ मनको मोहें॥
पर लातेही सुध इनकी सुध-बुध सब जाती।
उरमें उठती आह, दुख से दहती छाती॥

यहाँ उक्त वीरों की सुध करने से सुख न उपज कर हृदय में दाह उत्पन्न होना अनिष्ट घटित हुआ।

४४ सम

इसके तीन भेद हैं—(१) यथायोग्य संबंध वर्णन। यह दो प्रकार का होता है—सद्योग और असद्योग।

सद्योग—

(क) बड़े लाटने वार बहु, सुभग मंत्रणा हेत।
गाँधी को बुलवा किया आदर प्रेम-समेत॥

(ख) तुम गाँधी हो गंध के सुंदर अनुपम धाम।
वह कस्तूरी सुरभि-निधि, जोड़ी परम ललाम॥

(ग) [1]वर्ण-धर्मको नहीं है भोजन औ विवाहमें
बंधनकी बेड़ी, यह बात जन जान लें।
पवित्रता और स्वास्थ्य-नियम निमित्त किंतु
हो सकें आवश्यक ये बंधन, य मान लें॥

---

१. Light of India, page 107

पर यदि ब्राह्मण विवाहे शूद्र-कन्या को वा
शूद्र-तनया विवाहे ब्राह्मण को शानसे।
तो न वर्ण-धर्म विपरीत यह कर्म होगा
वर्ण-धर्म-तत्त्व यह, गुनें इसे ध्यानसे॥

ये वचन गाँधीजी के हैं।

(घ) [1]आचार ही है परम धर्म बखान करते वेद यों।
स्मृतियाँ यही हैं कह रही, उनमें न इनमें भेद यों॥
बस अखिल तपका मूल है आचार ही यह जान लो।
जग निखिल उन्नति हो इसी से निसृत, इसको मान लो॥

(ङ) [2]गर है अजी य स्वतंत्रता बदतर विदेशी राज्य से।
गर छा रही है अराजकता असह अति इस राज्य में॥
तो सकलका कारण अभाव मनुष्य में आचारका।
निज देशको न महान कर सकते विगत-आचार, हाँ॥

---

१. आचार: परमोधर्म: श्रुत्युक्त: स्मार्त एव च।
सर्वस्य तपसो मूलमाचार जागृहु: परम्॥

—मनुस्मृति

२. People complained that Swaraj was worse than the British Raj, and that there was lawlessness in various parts of the country. All these were due to lack of character in men. Without character, the people would not be able to make the country great.

Dr. Rajendra Prasad

(in his speech as the Rama Krishna Ashram, Patna, on 6. 10. 59)

(च) यह काला बाज़ार, हे कपूर इव गौर प्रभु !।
मेले कालाज़ार, उठे कभी उससे न फिर !॥

असद्योग—

(क) हिंसा परम असत्य औ भीषण अत्याचार।
धन-अपहरण विदेश-नृप योग्य अखिल व्यवहार॥

(ख) घोरी औ जयचंद में हुआ परस्पर स्नेह।
बृटिश व द्रोही देशके, एक प्राण, दो देह॥

(२) कारणके अनुरूप कार्य वर्णन—

(क) [1]जगके आधे से अधिक, दुःख व दैन्य नशायँ।
आपस में सद्भाव को जो नर-गण दर्शायँ॥

(ख) हो निम्नगा-अधीश्वरी,[2] तुमको इसकी शान।
हो गति तव यदि निम्नगा, विस्मय क्या मतिमान?॥

(ग) जिनने ऐसे काम किये थे डाँटा उन लोगों को खूब।
बोले, "सदा स्पष्टवादी मैं, सह न सकूं अनुचित की ऊब॥
रुका न मैं, वर्णन करने से गिरि सम शासनके कटु दोष।
रुका न मैं चित्रण करनेसे गिरिसम निज दोषोंके कोश"॥

—दं० या०

यहाँ अनुचित काम-रूप कारण पाकर उसके अनुरूप डाँट-रूप कार्य का वर्णन हुआ। यह वचन गाँधीजी का है।

---

१. More than half the difficulties of the world would be allayed, or removed by the exhibition of good temper. —Arthur Helps.

२ Mistress of the Sea

(घ) धर्म-धरा ओरहीसे भारत, विदित यह,
कैसे-कैसे धर्म - प्राण प्राणी याँ थे राजते।
हरिश्चंद्र, दशरथ, जनक, दधीचि, शिबि,
राम और कृष्ण, धर्मराज थे विराजते॥
वसिष्ठ ओ वाल्मीकि, व्यास, शुक, कपिल ओ
बुद्ध, महावीर जिस भूमि पै थे भ्राजते।
अचरज कौन यदि सत्य ओ अहिंसा अस्त्र
रण हित धार कर गाँधीजी हैं गाजते?

भारत धर्म-धरा है। अतः गाँधी जैसे धर्मात्मा नेता का होना सर्वथा अनुरूप है।

(ङ) [1]अपना बंधु आपही मानव, अपना रिपु भी है वह आप।
अपने ही अपनी आत्मा का उद्धर्ता, संहर्त्ता आप॥
आत्मा बंधु उसी का जिसने है उसपर पाया अधिकार।
आत्मा शत्रु अजी! उसका जिसका वश उसपर नहीं अपार॥

(च) [2]मम चिंतन-अर्चन-निरत जो अनन्य हो तात!।
उसकी रक्षा ओ कुशल मैं करता नित भ्रात!॥

---

१ उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बंधुरात्मैव रिपुरात्मनः॥
बंधुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत्॥
—श्रीमद्भगवद्गीता अ० ६, श्लोक ५-६

२. अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥
गीता, अ० ९, श्लोक २२

(३) विना अनिष्ट के कार्य-सिद्धि—

विघ्न नहीं आया तनिक, तोड़ा नमक-विधान।
बोलीं नयडू, 'जयति-जय भंजन नियम अमान्य !" ॥

४५ विचित्र

अभीप्सित फल-प्राप्ति के लिये विपरीत कार्य-विधान।

यथा,

(क) गाँधी जी के निकट आ, झुकते उठने हेत।
बैठें होने को खड़े, भरित भावना सेत॥

(ख) श्याम सु-भारत देश प्रति धरें भक्ति अति चाव।
जिसमें उज्ज्वल हों परम, हो श्यामता-अभाव॥

(ग) देश-भक्त जितने जगत डूबें तरने हेत।
जीते मरने के लिये, मरते जीने हेत॥

(घ) पशु हँसे खाने लगे, चले खड्ग-तलवार।
धोखा दे उसको हनें, सुन्दर धर्म विचार॥
सुन्दर धर्म विचार हनें उसको एवायक।
नर हो यों करते अधर्म गुन धर्म-विधारक॥
अचरज क्या यदि कोने कोने हो नर नर-पशु।
रक्खे निज अभ्यन्तर रंच न अन्तर नर-पशु !॥

यहाँ पुण्य की प्राप्ति के लिये पाप-कर्म किया गया।

४६ अधिक

आधार और आधेय में से किसी एक के आधिक्य का वर्णन अधिक अलङ्कार कहलाता है।

आधार का आधिक्य—

(क) [१]एक अंश है जगत यह जिस प्रभु का प्रिय मित्र ! ।
जगत बीच अणु-अणु वही राज रहा अति चित्र ! ॥

यहाँ आधेय प्रभु की अपेक्षा आधार जगत् का आधिक्य वर्णित है।

(ख) राज रहे श्री राम, गाँधी ! तव वर हृदय में।
स्रष्टा जग-अभिराम, रोम कोटि ब्रह्माण्डधर ॥

यहाँ आधेय राम की अपेक्षा आधार गाँधी का आधिक्य वर्णित है।

आधेय का आधिक्य—

(क) निलहों ने क्या दुख दिया जनको याँपर तात ! ।
उसका है आकाश में अक्स आजतक भ्रात ! ॥

निलहों द्वारा दिये गये अपार दुःख का प्रतिबिंब-मात्र आकाश में है जिससे वह नीला दीख रहा है। इस वर्णन से आधार आकाश की अपेक्षा आधेय दुःख का आधिक्य वर्णित है। आकाश की नीलिमा निलहा-दत्त दुःख का अक्स है, न कि इसका अपना रंग।

---

१ अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन।
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥
—श्रीमद्भगवद्गीता अ० १०, श्लोक ४२।

(ख) शेष[1] लहैं देह जो हजार, प्रति देह में औ
लहैं शीश सुभग हजार के हजार भी।
शीश प्रति आनन हजार औ आनन प्रति
लहैं जीभ शारदा हजार के आधार की॥
जन्म सो हजार लहैं, गणप से शिक्षा गहैं,
रस-गुण-सिंधु काव्य सौरभ-आगार की।
तोभी न कथन कर सकें, पा सकें अवधि
गाँधी ! तव गुण-गण-गरिमा अपार की॥

महाकवि भूषणने अपने "शिवराज भूषण" में पंचम प्रतीप के उदाहरण में श्री शिवाजी के संबन्ध में लिखा है—

कुंद कहा पयवृंद कहा अरु चंद कहा सरजा जस आगे ?।
भूषन भानु कृसानु कहा व खुमान प्रताप महीतल पागे ?॥
राम कहा द्विजराम कहा बलराम कहा रन मैं अनुरागे ?।
बाज कहा मृगराज कहा अति साहस मैं सिवराज के आगे ?॥

यहाँ महाकवि भूषणने चंद, सूर्य और अग्नि के अतिरिक्त एक नहीं तीन-तीन रामों से भी बढ़कर शिवाजी का शौर्य-चित्रण किया है।

आचार्य मम्मटने 'काव्यप्रकाश' में 'विशेष' का यह उदाहरण दिया है -

स्फुरदद्भुत रूपमुत्प्रतापज्वलनं त्वां सृजताऽनवद्य विद्यम्।
विधिना ससृजे नवो मनोभूर्भुवि सत्यं सविता बृहस्पतिश्च।५६१

---

१ "काव्य-प्रभाकर" में दिये गये उदाहरण के आधार पर रचित।

अर्थात् "राजन् ! विस्मय जनक सौंदर्य, जाज्वल्यमान प्रतापानल किंवा विशुद्ध विद्या से विभूषित तुम्हें बनानेवाले विधाता ने इस संसार में एक नया कामदेव बना दिया, एक अभूतपूर्व सूर्य रच दिया और कर दिया उस बृहस्पति का निर्माण जो सचमुच अपूर्व है !"

—डा. सत्यव्रत सिंह कृत हिंदी व्याख्या (पृष्ठ ४३६)

इसका कारण निर्देश करते हुए मम्मट महाराज कहते हैं—

सर्वत्र एवं विध विषयेऽतिशयोक्तिरेव प्राणत्वेनावतिष्ठते तां विना प्रायेणालङ्कारत्वायोगात्

अर्थात् ऐसे विषयों में सर्वत्र अतिशयोक्ति, जिसके बिना प्रायः कोई भी अलंकार अलंकार नहीं माना जा सकता, प्राण बनकर निवास करती है।

अतः महात्मा गाँधी के संबंध में मेरे उपर्युक्त उदाहरण में किसी को कुछ आपत्ति नहीं होनी चाहिये।

४७ अल्प

छोटे आधेय की अपेक्षा बड़े आधार का छोटा वर्णन अल्प कहलाता है। यथा,

(क) मुट्ठी[१] भर अँगरेज, मुट्ठी में भारत रखें।
करें य क्यों अँगेज, जिसके कर भारत बसे ?।

१. पटने के एक बहुत नामी वकील, श्री गुरुप्रसाद सेन जर्मनी गये थे। वहाँ उन्हों ने जर्मनी के तत्कालीन परम प्रसिद्ध प्रधान मंत्री बिस्मार्क से मिलना चाहा। बिस्मार्क ने उत्तर में यही कहला भेजा कि जिस विशाल देश को मुट्ठी भर अंगरेज अपने वश में किये रखे हैं उस देश के मनुष्य से मिलना समय नष्ट करना है।

(ख) शासन महा विशाल, भारत में अँगरेज का।
नहीं बजावें गाल, सो गाँधी मुट्ठी बसे!॥

४८ अन्योन्य

दो वस्तुओं द्वारा परस्पर एक ही क्रिया का संपादन अन्योन्य है। यथा,

(क) भारत से हैं शोभते, गाँधी जी गुण-खान।
गाँधीजी से शोभता भारत सुगुण-निधान॥

(ख) भारत की स्वाधीनता गाँधीजी से सोह।
गाँधीजी स्वाधीनता से सोहैं, गत-मोह॥

४९ विशेष

इसके तीन भेद हैं—

(१) प्रसिद्ध आधार के विना आधेय की स्थिति—

(क) धन्य देश के भक्त, स्वर्ग गये भी नित रहैं।
रहते जन अनुरक्त, जिनमें तन-मन से सदा॥

(ख) भारत-गारत भारत का सब कष्ट निवारा।
जीवन में सबके यौवन ला, बल संचारा॥
करके भारत को स्वतंत्र सुर-धाम सिधारे।
तोभी "गाँधी-गाँधी" चिल्लाते जन सारे॥

(ग) गाँधी जी! हा! अब तुम नहीं आज याँ सोहते हो।
तो भी प्यारे! अचरज महा, विश्वको मोहते हो॥

देखूं, माता[१] शुचि चरण को आज भी चूमते हो।
नेत्रों में तात! सतत अहो। घूमते-झूमते हो॥

(घ) गये स्वर्ग भी अजी! महाकवियों की अमृतवाणी।
रहती कल्प तलक देती आनंद अमित कल्याणी॥
अस्त हुए प्रिय लोक-बंधु के छा जाती है लाली।
त्यों ही तव समाधि पर जगकी श्रद्धा-भक्ति निराली॥

यहाँ प्रसिद्ध आधार के बिना ही आधेयभूत श्रद्धा-भक्ति राजमान् है।

(२) एक वस्तु की एक ही स्वभाव से, एक ही समय में अनेक स्थानों पर स्थिति[२]—

(क) नेता, जनता, सुजन-हिय प्रविशे गाँधी पूज्य।
टूटा जैसे ही अजी! नमक कुनियम अपूज्य॥

(ख) ग्रामों में, नगरों में, भारत के दर-दर में।
स्वयंचरों में, भक्तवरों में औ नर-नर में॥
क्या स्वदेश औ क्या विदेश जग के थल-थल में।
स्वतंत्रता-संवाद हर्ष अति लाया पल में॥

---

१ भारत माता।

२, एकमपि वस्तु यत् एकेनैव स्वभावेन युगपदनेकत्र वर्तते स द्वितीयः

—काव्य प्रकाश

(३) एक कार्य के करते हुए किसी दूसरे अशक्य कार्य की सिद्धि—

(क) पाया गाँधी का दरस, पाया दरस विराग।
पाया गाँधी का परस, पाया परस प्रयाग॥

(ख) चाल में प्रगति अति सुखकर ला रहे औ
अरि-उर-पाहन को अहो! पिघला[1] रहे।
उतसाह डाल तीव्र वेग से झुला रहे औ
हृदय में दिव्य प्रेम-दीप हैं जला रहे॥
सूखे हिय को हरा बना रहे हैं चारों ओर
जीवन के महादानी मेघ को हैं ला रहे।
स्वतंत्रता-राग एक को अलाप गाँधी प्रिय
षट राग सुभग प्रभाव को खिला रहे।

यहाँ एक स्वतंत्रता का राग अलाप कर गाँधी जी भैरव, मालकोस, हिंडोल, दीपक, श्री और मेघ इन छः रागों के प्रभावों को उत्पन्न कर रहे हैं इस प्रकार एक कार्य को करते हुए कई अशक्य कार्यों के होने का वर्णन है।

---

१ अँगरेजों के change of heart अर्थात् हृदय-परिवर्तन की ओर गाँधीजी की प्रबल चेष्टा से अभिप्राय है।

५० व्याघात

(१) एक के सिद्ध किये कार्य का अन्य द्वारा अन्यथा कर दिया जाना व्याघात है। यथा,

(क) प्राप्त करें जिस भक्ति[१] से भारत-द्रोही पाप।
प्राप्त करें उस भक्ति[२] से भारत-प्रेमी आप[३] ॥

(ख) गाँधी जी के साथ से गहा ताप - संताप।
पर स्वतंत्रता से सभी दहा व लहा प्रताप ॥

(२) कारण को उलटा सिद्ध कर के कार्य साधना—

हो न योग्य तुम राज्य के, हो अतिशय नादान।
कारण यही स्वराज्य का, सीख बनें धीमान ॥

स्वराज्य न देने का कारण प्रथम पंक्ति में और स्वराज्य पाने का यही कारण दूसरी पंक्ति में वर्णित हैं।

५१ कारण-माला

जहाँ पूर्व-पूर्व कथित वस्तु उत्तरोत्तर कथित वस्तुओं के कारण बनें वहाँ कारणमाला अलङ्कार होता है। इसके दो भेद हैं, एक तो यह और दूसरा जहाँ उत्तरोत्तर कथित वस्तु ही पूर्व-पूर्व कथित वस्तुओं के कारण बनती हैं।

पहला—

(क) [४]विजितेन्द्रियता से विनय, विनय-जन्य गुण-वृद्धि।
सुगुण-वृद्धि जन-प्रेम दे, दे जन - प्रेम समृद्धि[४] ॥

---

१ विदेशी शासन में भक्ति २ स्वदेश-भक्ति ३ ईश्वर

३ जितेन्द्रियत्वं विनयस्य कारणं गुण प्रकर्षोविनयादवाप्यते।
गुण प्रकर्षेण जनोऽनुरज्यते जनोनुराग प्रभवा हि सम्पदः ॥ का. प्र.

४ उन्नति, सम्पत्ति, शक्ति।

(ख) विषय-ध्यान से विषय-संग है अजी ! उपजता।
विषय-संग से काम, काम से क्रोध जनमता॥
पुनः क्रोध से मोह, मोह से स्मृति-विनाश हो।
स्मृति-विनाश से अर्जुन ! निश्चय बुद्धि-नाश हो॥
बुद्धि-नाश से मनुज का सर्वनाश होता सतत।
विजितेन्द्रिय लहता सुभग प्रसन्नता ओ शांति नित॥

(ग) विद्या देती विनय, विनय देती सु-पात्रता।
देती अजी ! पात्रता धन, जो रिपु-निर्धनता॥
धन से होता धर्म, धर्म से सुख होता है।
यों विद्या सुख-मूल, न जिसमें नित रोता है॥

दूसरा—

मानव तन का मूल धर्म ओ मूल धर्म का।
है सुकर्म, उपकार मूल है प्रिय सुकर्म का॥
है उपकार सु-मूल देश-जन-हित नित चिंतन।
हित-चिंतन का मूल देश प्रति प्रेम शुद्ध मन॥

यहाँ उत्तरोत्तर कथित वस्तुएँ पूर्व-पूर्व कथित वस्तुओं के कारण होती चली गयी हैं।

५२ एकावली

पूर्व-पूर्व कथित वस्तु के प्रति उत्तरोत्तर कथित वस्तुओं का विशेषण-भाव से स्थापन अथवा निषेध एकावली है।

(१) विशेषण-भाव से स्थापन—

नर जो सुन्दर, शुभ्र और शोभन विचार-युत।
शोभन-शुभ्र विचार वही जो शुभाचार-युत॥
शुभाचार वह जिसमें देशोद्धार भरा है।
देशोद्धार जहाँ हर नर नित हरा-भरा है॥

(२) विशेषण-भाव से निषेध—

(क) नहीं अजी! दुनिया में ऐसा स्थान कहीं है।
अति गुणज्ञ, मर्मज्ञ जहाँ पर सुजन नहीं है॥
सुजन न एक न गाँधी-यश वर्णन करता हो।
गाँधी-यश सो नहीं, न जन का मन हरता हो॥

(ख) विना पुण्य संस्कार न हो सकती स्वदेश-रुचि।
विना देश-रुचि देश-भक्ति सकती न जाग शुचि॥
देश-भक्ति के विना न गाँधी में सु-भक्ति हो।
गाँधी भक्ति विना न कभी भी देश-मुक्ति हो॥

विशेष्य-विशेषण-भाव न रहने पर भी, केवल एक शृंखला-मात्र वर्णन भी एकावली अलङ्कार माना गया है। यथा,

खादी में शोभता है असित तन अहो! तेज से पूर्ण प्यारा।
पाता आभा महा है शुभद सुतन में वृद्धता-रूप न्यारा॥
भाई जी! वृद्धता में शुचि सुमति लसे, देश-मांगल्य की ही।
राजे [1]राजन्य-शोभा मृदुल सुमति में इन्द्र जाज्वल्य[2] की ही॥

---

१ राजा; राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद का यह आंशिक शब्द-चित्र है। २ तेज; ज्योति

अर्थात् खादी में तन, तन में वृद्धता, वृद्धता में सुमति और सुमति में इन्द्र की ज्योति राजेन्द्र बाबू में राज रही हैं।

५३ सार

वस्तुओं का उत्तरोत्तर उत्कर्ष अथवा अपकर्ष वर्णन सार अथवा उदार कहलाता है। यह तीन प्रकार का होता है—(१) सारोत्कर्ष अर्थात् 'सार' शब्द के प्रयोग द्वारा (२) धर्मोत्कर्ष अर्थात् वस्तु के धर्म द्वारा और (३) स्वरूपोत्कर्ष अर्थात् स्वरूप के उत्कर्ष द्वारा।

(१) सारोत्कर्ष—

जीवन में है धर्म सार कहते कवि कोविद।
धर्म-सार है सत्य कहें नित निगमागम विद॥
सत्य-सार है सत्य रूप प्रभु का प्रिय पूजन।
प्रभु-पूजन का सार एक बस जन-दुख भंजन॥

(२) धर्मोत्कर्ष—

(क) देश-भक्ति है यही सिखाती मरे व्यक्ति कुल-हित अपने।
ग्राम-हेतु कुल मरे, नगर-हित ग्राम मरे, न शोच सपने॥
प्रांत-हेतु सुठि नगर मरे औ देश-हेतु प्रिय प्रांत मरे।
विश्व-हेतु नित देश मरे, कटु क्लेश हरे, न कदापि टरे॥
इसी हेतु भाई! मैं चाहूँ सत्वर देश स्वतंत्र बनें।
राष्ट्रियता का अर्थ यही है, नहीं और कुछ आप गुनें।

अतः स्वतंत्र बने यह भारत देश, नहीं अब और लचे।
जिसमें यह सम्पूर्ण देश मर जाय व मानव जाति बचे!॥

यह उक्ति महात्मा गाँधी की है।

(ख) प्रेम[१] बढ़े जब तक न छेक ले यह कुल ग्राम।
ग्राम न जबतक लेवे छेक नगर अभिराम॥
नगर प्रांत को, प्रांत देश को इस विधि तबतक।
प्रेम बढ़े नहिं सृष्टि छोर तक पहुँचे जबतक॥

(ग) उपल काठ से कठिन है उससे कठिन सु-लोह।
उससे कठिन जनेश तुम, करो न जन पर छोह॥

(३) स्वरूपोत्कर्ष—
गिरि से हिमगिरि उच्च है, हिमगिरि से आकाश।
गाँधी जी आकाश से ऊँचे जगके दास॥

वस्तुओं के उत्कर्ष में ही केवल नहीं, अपकर्ष में भी यह अलङ्कार माना जाता है। यथा,

अपकर्ष—

(क) तृण से तून व तूल से याचक हलका मीत॥
याचक से वह मनुज जो चले देश विपरीत॥

---

१ We must widen the circle of our love till it embraces the whole village; the village, in its turn, must take into its fold the district, the district the province, and so on till the scope of our love becomes co-terminous with the world.

—Gandhi
(Mohan-mala, Feb. 10)

(ख) विद्या-बुद्धि-विहीनसे हेय धर्मसे हीन।
धर्म-हीनसे हेय है भारत-भक्ति विहीन॥

५४. यथासंख्य

क्रमशः कहे हुए पदार्थों का जहाँ क्रमशः अन्वय हो वहाँ यथासंख्य अलङ्कार होता है। यहाँ अन्वय से संबंध का अभिप्राय है। इसको क्रमालङ्कार भी कहते हैं। इसके दो भेद हैं—

(१) शाब्द अर्थात् समास-रहित और (२) आर्थ अर्थात् समास-युक्त क्रम।

(१) शाब्द—

(क) अंगरेज, अँगरेज का राज व सुभग स्वराज।
गाँधी के वर प्रेम औ घृणा, सुतृष्णा साज॥

(ख) बीज मरे, बत्ती जरे, सलिल सहे अति ताप।
विटप, प्रकाश, सु-मेघ तब बने, हने संताप॥

(ग) अमी, हलाहल, मद[१] भरे, श्वेत, श्याम, रतनार।
जन[२], अघ[३], जग-हित नयन तव, सत, तम, रज आकार[४]।

यह उक्ति गाँधी जी के प्रति है।

(घ) श्वेत, श्याम, रतनार तव दृग में अजी! विराज।
शंभु, विष्णु व विरिञ्चि विभु, विश्व-सुमंगल काज॥

यह उक्ति भी गाँधी जी के प्रति है। गाँधीजी के नेत्रों में त्रिदेव का निवास है।

---

१ प्रेम २ भारतीय जनता ३ पाप; अघासुर-रूप विदेशी शासक
४ अमी से सतोगुण, हलाहल से तमोगुण और मद से रजोगुण समझें।

(२) आर्थ—

(क) कला-बुद्धि-मंगल महा रहैं देश में छाय।
विधु[१]-बुध-मंगल-व्रत सदा शिर धारे तव काय॥

यह झंडे के डंडे के प्रति उक्ति है।

झंडा मानों व्रत धारण किये है। झंडे के तीन रंग व्रत में चंद्रमा आदि तीन नक्षत्रों के वस्त्र-रंग हैं।

(ख) विभा-[२]विभाकर [३]विबुध-बुध तुम में परम पुनीत।
भास रही आकाश में [४]अंधकार-रणजीत॥

यह उक्ति भी झंडे के प्रति है।

(ग) सारथि-[५]सप्ति-[६]सहस्रकर-[७]शोभा-संयुत [८]आस्य।
तुम्हे धारते धार नर तेज - मोद - मृदु हास्य॥

झंडे के प्रति उक्ति।

५५ पर्याय

एक वस्तु का अनेक वस्तुओं में अथवा अनेक वस्तुओं का एक वस्तु में क्रमशः स्थिति-वर्णन पर्याय है।

(१) एक अनेक में—

(क) अफरिका-जन-आरद-नाशमें। पुनि चंपारन-ताप-
विनाश में॥

---

१ चंद्रमा २ सूर्य ३ चद्रमा ४ विदेशी शासन-जन्य अंधकार। ५ अरुण ६ हरा अश्व जिससे सूर्य हरिदश्व कहलाता है। ७ सूर्य ८ मुख।

पुनि सु-भारत-आर्त्ति-प्रणाश में। मति रमी तव
पुण्य विलास में ॥

(ख) विरमगोम[१] का अत्याचार तुम्हीं ने टारा।
भारतीय दास्यता समन्वित श्रम को वारा ॥
कर अफ्रिका-सुकार्य पधारे चंपारन में।
दीन किसानों के दुख-दैन्य निवारे छन में ॥

(२) अनेक एक में—

(क) प्रबल शत्रु समूह संहार के। विपुल संकट,
दुःख विदार के ॥
अति स्वतंत्र, पराक्रम-पूर्ण है। अब य देश प्रसिद्धि-
प्रपूर्ण है ॥

(ख) देख दशा जिसकी सदा सुर मोहे सानंद।
देख दशा उसकी असुर करें नाक निज बंद ॥

यहाँ दशा में समुन्नति पुनः अवनति की क्रमशः स्थिति है।

५६ परिवृत्ति

वस्तुओं का परस्पर विनिमय परिवृत्ति है। इसके दो भेद हैं—(१) सम और (२) विषम। इनमें प्रत्येक के दो प्रकार हैं

(१) सम

उत्तम वस्तु देकर उत्तम वस्तु लेना। यथा,

(क) जन में मन देकर लिया, जन का मन श्रीमान।
जन पै तन देकर लिया, तन पै जन का मान ॥

१ दक्षिण अफ्रिका में एक स्थान।

(ख) दो मुझको तुम रक्त, दूँ मैं तुम्हें स्वतंत्रता।
नेता जी प्रिय भक्त कहा[१] सुभास[२] सुभास ने॥

(ग) तन, मन व धन जितने लगा कर पूजते हम शक्ति को।
उनके शतांश लगा स्व-शक्ति, बढ़ायँ जो निज शक्ति को॥
शुचि शक्ति आध्यात्मिक बढ़ायें, लायँ इसमें भक्ति को।
हम में सदा भगवान की औ भगवती की भक्ति हो॥

निकृष्ट वस्तु देकर निकृष्ट वस्तु लेना। यथा,

(क) दुख देकर अंगरेज ने भारत को घनघोर।
लिया दुःख उसने महा भागा भारत छोड़।

(ख) कालों[३] को दे काल यों ली अपकीर्ति अनंत।
गोरों ने कटु दृष्टि दे, ली चिर घृणा दिगंत॥

(२) विषम—

उत्तम वस्तु देकर निकृष्ट वस्तु लेना। यथा,
खद्दरधारी लख पड़ें आज अनेक, न एक।
देकर धर्म अधर्ममय लेते लाभ अनेक॥

निकृष्ट वस्तु देकर उत्तम वस्तु लेना—

(क) धन नेतागण देश के मन दे लिया[४] सुमंत्र।
धन दे लिया विराग शुचि, तन दे सुठि स्वातंत्र्य॥

---

१ सुन्दर प्रकाश वाला

२. Give me blood, and I will give you Independence
—Subhas Chandra Bose

Blood (रक्त) से यहाँ अभिप्राय आत्म-त्याग से है।

३. मार्च, १९६० के अंतिम सप्ताह में, दक्षिण अफ्रिका में, वहाँ की गोरी सरकार द्वारा किये गये कत्लेआम से तात्पर्य है।

४ महात्मा जी का सत्य-अहिंसात्मक सुन्दर मंत्र।

पुनि सु-भारत-आर्त्ति-प्रकाश में। मति रमी तव
पुण्य विलास में॥

(ख) विरमगोम[१] का अत्याचार तुम्हीं ने टारा।
भारतीय दास्यता समन्वित श्रम को वारा॥
कर अफ्रिका-सुकार्य पधारे चंपारन में।
दीन किसानों के दुख-दैन्य निवारे छन में॥

(२) अनेक एक में—

(क) प्रबल शत्रु समूह संहार के। विपुल संकट,
दुःख विदार के॥
अति स्वतंत्र, पराक्रम-पूर्ण है। अब य देश प्रसिद्धि-
प्रपूर्ण है॥

(ख) देख दशा जिसकी सदा सुर मोहे सानंद।
देख दशा उसकी असुर करें नाक निज बंद॥

यहाँ दशा में समुन्नति पुनः अवनति की क्रमशः स्थिति है।

५६ परिवृत्ति

वस्तुओं का परस्पर विनिमय परिवृत्ति है। इसके दो भेद हैं—(१) सम और (२) विषम। इनमें प्रत्येक के दो प्रकार हैं

(१) सम

उत्तम वस्तु देकर उत्तम वस्तु लेना। यथा,

(क) जन में मन देकर लिया, जन का मन श्रीमान।
जन पै तन देकर लिया, तन पै जन का मान॥

१ दक्षिण अफ्रिका में एक स्थान।

(ख) दो मुझको तुम रक्त, दूँ मैं तुम्हें स्वतंत्रता।
नेता जी प्रिय भक्त कहा[१] सुभास[२] सुभास ने॥

(ग) तन, मन व धन जितने लगा कर पूजते हम शक्ति को।
उनके शतांश लगा स्व-शक्ति, बढ़ायँ जो निज शक्ति को॥
शुचि शक्ति आध्यात्मिक बढ़ायें, लायँ इसमें भक्ति को।
हम में सदा भगवान की औ भगवती की भक्ति हो॥

निकृष्ट वस्तु देकर निकृष्ट वस्तु लेना। यथा,

(क) दुख देकर अंगरेज ने भारत को घनघोर।
लिया दुःख उसने महा भागा भारत छोड़॥

(ख) कालों[3] को दे काल यों ली अपकीर्ति अनंत।
गोरों ने कटु दृष्टि दे, ली चिर घृणा दिगंत॥

(२) विषम—

उत्तम वस्तु देकर निकृष्ट वस्तु लेना। यथा,

खद्दरधारी लख पड़ें आज अनेक, न एक।
देकर धर्म अधर्ममय लेते लाभ अनेक॥

निकृष्ट वस्तु देकर उत्तम वस्तु लेना—

(क) धन नेतागण देश के मन दे लिया[४] सुमंत्र।
धन दे लिया विराग शुचि, तन दे सुठि स्वातंत्र्य॥

---

१ सुन्दर प्रकाश वाला

२. Give me blood, and I will give you Independence
—Subhas Chandra Bose

Blood (रक्त) से यहाँ अभिप्राय आत्म-त्याग से है।

३. मार्च, १९६० के अंतिम सप्ताह में, दक्षिण अफ्रिका में, वहाँ की गोरी सरकार द्वारा किये गये कत्लेआम से तात्पर्य है।

४ महात्मा जी का सत्य-अहिंसात्मक सुन्दर मंत्र।

(ख) शीश तनाये तो अजी! बीत गये बहु काल।
उसे नवा चाहूँ न क्यों सुख तन बीच रसाल? ।

बिहार ने आजतक अपना मस्तक ऊँचा, ऊपर उठाये रखा। बुद्धदेव से लेकर महात्मा गाँधी तक ने अपने ध्येय यहाँ सिद्ध किये। पर इतने दिनों से मस्तक तनाये-तनाये इसकी गर्दन दुख गई। तो अब यह आराम पाने के विचार से अपना मस्तक नवाय तो इसमें भला कौन सी निंदा की बात है? यह वक्रोक्ति-मूला है।

५७ परिसंख्या

एक की अनेक स्थानों में स्थिति संभव रहने पर भी और स्थानों से निषेध कर एक ही स्थान में उसका नियंत्रण परिसंख्या नाम से ख्यात है। यह चार प्रकार की है—

(१) प्रश्न-पूर्वक प्रतीयमान निषेध—

है क्या सेव्य? महात्मा के पद युगल, पुण्य थल।
है क्या ध्येय! महात्मा के वर चरित विगत-छल॥
क्या कर्त्तव्य? सत्य व अहिंसा का पालन नित।
क्या श्रोतव्य? महात्मा के वचनामृत अद्भुत।

(२) प्रश्न-पूर्वक वाच्य निषेध—

मित्र कौन? भारत-शुभ-चिंतक, नहीं हमारा शुभ चिंतक।
शत्रु कौन? भारत-द्रोही जो, नहीं हमारा हित-घातक॥
पूज्य कौन? जिसने स्वदेश हित त्याग किया, न उच्च पद प्राप्त।
को अपूज्य? जो देश पराङ्मुख, नहीं वासनाओं से [१]व्याप्त।

---

१. घिरा हुआ; भरा हुआ

(३) प्रश्न-रहित प्रतीयमान निषेध—

सेवा की रुचि तो स्वदेश-सेवा में निज तन, मन, धन दो।
चिंता रुचि तो सोंचो कैसे भारत उन्नत दिन-दिन हो॥
गाना चाहो तो अतीत गाथाएँ गावो दिव्य-प्रभा।
रोना चाहो तो रोवो भारत दुर्दशा विलोक महा॥

(४) प्रश्न-रहित वाच्य निषेध—

नहीं सताने में पर को वह प्रभु सुख माने।
नहीं बुताने में नर को नरहरि सुख जाने॥
नहीं अहित छाने में ईश्वर दया दिखावे।
पर दुख ढाने में वह ईश्वर दौड़ा आवे॥

५८ विकल्प

तुल्य बलवाले दो वस्तुओं का विरोध विकल्प कहलाता है। यथा,

(क) लूँगा अजी! स्वराज्य को, दूँगा अथवा प्राण।
दृढ़व्रत गाँधी ने किया भीषम प्रण बलवान॥

(ख) तेरे हैं कार्य ऐसे अति दुखद अरे! देख के आज सारे।
होता संताप भारी हिय तल, न टरे रंच रे दस्यु! टारे॥
लेता हूँ [1]मैं प्रतिज्ञा अटल, न टलने को कभी घोर भीष्म।
या तो तूही रहे या [2]यह मनुज रहे, जान रे रूप [3]ग्रीष्म!॥

१-२ गाँधीजी ३. ग्रीष्म-रूप विदेशी शासन; गाँधीजी ने आरम्भ में कहा था—I am out to destroy this Satanic Government अर्थात् मैं इस रावण-राज्य का नाश करने के लिये निकला हूं। ऋषियों की हड्डियों को देख कर भगवान् रामचंद्र का प्रण यहाँ स्मरण हो आता है।

५६ समुच्चय

१. किसी कार्य-साधन के लिये एक साधक होते हुए दूसरे साधक का भी कथन समुच्चय है। इसके तीन भेद हैं—

(१) सद्योग अर्थात् श्रेष्ठ साधकों का योग। यथा,

(क) सब विद्या, सब ज्ञान, गुण सकल पुण्य परिणाम।
भारत-माता में अमित भक्ति उगे अभिराम॥

यहाँ एक ही विद्या उक्त भक्ति के लिये पर्याप्त है। फिर भी अनेक का परिणाम-स्वरूप इसे कहा गया।

(ख) सत्य, अहिंसा, साहस, शौर्य अनन्य।
रखो, न क्यों जय हो तव अतिशय धन्य?॥

(ग) गाँधीजी का धर्म औ जनता का श्रम-साज।
करुणानिधि-करुणा सुभग लाया पूर्ण स्वराज॥

(२) असद्योग अर्थात् निकृष्ट साधकों का योग। यथा,
देश-द्रोह, व्यमनस्य औ वैर, घात विश्वास।
घृणा, कपट व अनैक्य ये लाते निश्चय नाश॥

(३) सदसद्योग। यथा,

(क) जप, तप, त्याग, विराग, व्रत, तीर्थ, प्रेम, उपकार।
ताप और संताप के हैं ये सब आगार॥

(ख) गाँधी का अनुगमन शुभ, इनका वचन-प्रचार।
देश-भक्ति—इनमें निहित भय, दुख, कारागार॥

'सम' अलङ्कार में और 'समुच्चय' के इस प्रथम भेद में यह अन्तर है कि 'सम' में अनेक वस्तुओं का समुचित संबंध मात्र

कहा जाता है और 'समुच्चय' में किसी कार्य की सिद्धि के लिये तुल्य बलवाली अनेक वस्तुओं का एकत्रीकरण होता है। जैसे उपर्युक्त (ग) उदाहरण में गाँधीजी का धर्म, जनता का श्रम और करुणानिधि की करुणा, इन सबों का वर्णन यथेष्ट नहीं है क्योंकि एक ही साधक पर्याप्त है, परन्तु इन तीनों का समुच्चय दर्शाया गया।

२. गुण वा क्रिया वा गुण-क्रिया दोनों का एक ही समय में वर्णन।

गुण-समुच्चय—

गाँधी के रण उतरते आया बल अति देश।
अरि-गण हुए अधीर अति, मित्र प्रमुदित विशेष।

क्रिया-समुच्चय—

हृदय लगावें, नयन में उसे लगायँ सप्रेम।
शिर पर धारें चरण-रज गाँधी की अति नेम॥

'कारक-दीपक' और 'समुच्चय' के इस भेद में यह अन्तर है कि पहले में क्रियाएँ क्रमशः होती हैं और दूसरे में एक साथ।

गुण-क्रिया-समुच्चय—

पक्ष न्याय का अनुपम उस पर सत्य।
पुनः अहिंसा, दें बल परम अचित्य॥
यहाँ 'परम अचित्य' गुण है और 'दें' क्रिया।

६० समाधि

किसी कार्य का किसी अन्य कारण के आकस्मिक योग से अनायास सिद्ध हो जाना समाधि है। यथा,

(क) कांग्रेस चिंता-ग्रस्त थी कैसे साधें कार ?।
इतने में तज अफ्रिका आये गाँधी, यार !॥

(ख) नेता-गण हैरान थे, कर-कर विनय महान[1] ॥
इतने में उनको मिले गाँधी कर्म-प्रधान ॥

६१ प्रत्यनीक

मुख्य शत्रु पर वश न चलने से उसका तिरस्कार करने में असमर्थ होने से उसके किसी संबंधी का तिरस्कार करना प्रत्यनीक है। इसके दो भेद हैं—

(१) साक्षात् संबंधी अर्थात् शत्रु के साथ साक्षात् संबंध रखनेवाले का तिरस्कार और (२) परंपरागत संबंध अर्थात् शत्रु के संबंधी के साथ संबंध रखनेवाले का तिरस्कार।

(१) साक्षात् संबंधी—

(क) गाँधी पर चलता न वश, चलती बुद्धि न एक।
स्वयं चरों को दुःख दें दारुण और अनेक ॥

---

१. सन् १९५९ में एक दिन पटने में भाषण देते हुए प्रधान मंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि पहले हम लोग कांग्रेस में केवल प्रस्ताव पास किया करते थे और जब गाँधी जी आये तब उन्होंने केवल वचन से नहीं वरन् कर्म द्वारा युद्ध करने का परामर्श दिया जिसका प्रधान रूप था असहयोग आन्दोलन।

(ख) राहु न जब हरि का कुछ भी कर सका कपट-कल्मष आगार।
उनके आनन सरिस इन्दु को किया आक्रमण का आधार॥
वश न चला जब गाँधी के ऊपर सरकार करे कुछ वार।
उनकी विभा-विभूषित जन पर अजी! उठाई निज तलवार॥

(२) परम्परागत संबंधी—

(क) काँग्रेस-भक्त-वसन समझ, खादी का अपमान।
किया और पीछे पड़ी अरि उसके जी-जान॥

(ख) काँग्रेस-जन-प्रण जान मद-वर्जन वर्जा खूब।
पिकेटिंग को दंडित किया, तोड़ी उसकी दूब॥

(ग) काँग्रेस-नर का है अरे! नारा यह अति वंद्य।
किया वंदे मातरम् को अतः अवंद्य, अनंद्य॥

६२ काव्यार्थापत्ति

दंडापूपिका न्याय से किसी अन्य अर्थ का आगम काव्यार्थापत्ति है। दंड का अर्थ है डंटा और आपूपिका का पूआ। डंटे में पूए लटका दिये जायँ। माँगने पर यदि कहा जाय कि चूहा डंटे को चट कर गया तो इससे यही भाव निकलेगा कि जब कठिन वस्तु पर उसका आक्रमण हुआ तब कोमल वस्तु उससे कब बची होगी। यही दंडापूपिका न्याय कहलाता है। यह अलंकार इसी भाव पर आश्रित है। यथा,

(क) भारत के जनने अरे! जीता रावण काल।
गणना क्या तेरी बता, व्यर्थ बजाता गाल॥

(ख) कर अनीति अन्याय नित, भीषण अत्याचार।
गया मुगल साम्राज्य ढह, तुम क्या हो सरकार ?॥

६३ काव्यलिङ्ग

जहाँ वाक्यार्थ अथवा पदार्थ किसी वर्णन का कारण होता है वहाँ काव्यलिङ्ग माना जाता है।

यहाँ लिङ्ग शब्द का अर्थ है कारण। तर्कशास्त्र में भी इसका प्रयोग होता है। इस कारण इसमें काव्य शब्द जोड़कर इससे इसकी पृथकता प्रदर्शित की गई है। इसमें अतः इत्यादि कारण सूचक शब्द के प्रयोग का निषेध है।

वाक्यार्थ—

(क) शंकर देते मुक्ति जनों को मरने पर ही।
गाँधी ने दी मुक्ति जनों को जीवन में ही॥
शंकर से बढ़कर के इनने काम किया है।
अहो भाग्य मेरा जो इन्हें प्रणाम किया है!॥

शंकर से बढ़कर काम करने का कारण पूर्व की पंक्तियों में वर्णित है।

(ख) धरें सत्य का शुभ्र रंग सुरसरि सम अनुपम।
धरें राम का श्याम रंग उर कालिंदी सम॥
धरें सरस्वती रंग रक्त देशानुराग में।
करें देश को गाँधी जी पग-पग प्रयाग ये॥

(ग) बोले गाँधी, "नारी को अबला कहना कलंक,
है अहो ! अन्याय यह नारी प्रति नर का।
बल से है अर्थ पशु-बल का तो अवश्य ही,
नर से है नारी कम पशु, जानवर वा॥
बल से है अर्थ यदि नैतिक सु-बल का तो,
नारी नर से है बढ़ी बे-हद, बे-हद, हाँ।
अन्तर्दृष्टि, आत्म-त्याग, सहनशीलता और
साहस में नर से नहीं बढ़ी है नारी क्या ?"[१]

(घ) निकट दूर के स्वयं सु-सेवक भर्त्ती होने को तैयार।
पहले जत्थे में शरीक होने को बढ़ीं स्त्रियाँ सुकुमार॥
पर बोले गाँधी, "अरि के प्रति मुझे विचार-शीलता योग्य।
हम जा रहे जहाँ पर है यंत्रणा, कष्ट, संकट का भोग॥
यदि हम रखें स्त्रियों को आगे तो होगा उसको संकोच।
ढाह सकेगा वह न सकल दुख और यातना निःसंकोच॥
कोमल भाव शूरता का यह व्याप रहा है उर में एक।
पहले जत्थे में चाहूँ न कदापि भेजना उनको नेक !॥ दं-या०

धन्य है यह भाव ! जब भीष्मपितामह समर के लिये आरूढ़ हुए थे तब पाण्डवों ने शिखंडी को अपने आगे रख लिया था जिस कारण भीष्मजी अस्त्र चलाने से सर्वथा असमर्थ हो गये थे। जो बात द्वापर में, भगवान् कृष्ण की उपस्थिति में नहीं हो सकी उसे गाँधीजी ने इस घोर कलियुग में कर दिखलाई। धन्य गाँधीजी !

---

1. Light of India. p. 115.

(ङ) [१]पशु-बलि बल उन्नत नहीं, हो सकता यह देश।
निज बलि-बल उन्नत सदा, सत्य, न संशय लेश॥
सत्य न संशय लेश अजी! इसमें तुम जानो।
निज-बलि-बल ही हो नित उन्नति, निश्चय मानो॥
देवी को पशु की बलि देता निर्दय ही वपु।
उचित न रंच कहीं नर करे कभी भी बलि पशु॥

(च) [२]मानव-मात्र ऋणी अहो! भारत का है मित्र!।
आइजनहावर ने कहा, पावन परम चरित्र॥
पावन परम चरित्र ने कहा, इस भारत नें।
अन्य महादेशों को उत्तम मग चलने में॥
दी है गति, उत्तेजना व प्रेरणा सु-अभिनव।
वह बोलता बड़प्पन से, सुनते सब मानव॥

यहाँ मानव-मात्र के ऋणी होने का कारण नीचे की चार पंक्तियों में वर्णित है।

(छ) [३]बीते दस साल हैं भारत को स्वराज पाये,
साहस औ दृढ़ता में सु-धनी जो है अपार।

---

१. सन् १९५९ में नेपाल में, जब देवी के दर्शन के लिये नेहरूजी गये तब खूंटों में बहुत से भैंसे बलि के निमित्त बँधे देखकर उन्होंने अपने साथ आये हुए नेपाल के उप-प्रधान मंत्री से यह बात कही थी।

२ All humanity is in debt to this land. India had paced, spurred and inspired men on other continents. She speaks with greatness of conviction, and is heard with greatness of respect.

३. Ten years ago, India had just achieved independence; wealthy in courage and determination, but

किंतु सो घिरा रहा समस्याओं से, जिनकी
परिमाण, गभीरता ओ संख्या थीं इस प्रकार॥
आधुनिक इतिहास में कठिन मिलनी जो,
लख जिन्हें दरशक भी आशावादी प्रगाढ़।
नहीं कर सकते थे तब य भविष्य वाणी,
आप पायँगे सफलता यों, इस तौर गाढ़॥

भविष्यद्वाणी न करने का कारण ऊपर की पंक्तियों में वर्णित है।

(ज) हम नीच हैं, हम मूढ़ हैं, हैं क्या नहीं हम हे प्रभो!।
हम जन्म भर ऐसे रहे, करुणा करो हम पर विभो!॥
हो उच्चता से उच्च तुम ओ बुद्धि की भी बुद्धि हो।
ऊँचा करो हमको, करो ऐसा कि सतत सुबुद्धि हो!॥

(२) पदार्थ—

(क) गाँधी का आश्रम सुभग सकल तीर्थ का धाम।
काशी और प्रयाग तज चलो अजी! उस ठाम॥
(ख) राम-दास हैं राम से अधिक, य तुलसी-उक्ति।
मंदिर क्यों जाते? चलो बापू ढिग वपु-मुक्ति॥

---

beset with problems of a scale and depth and number, scarcely parallelled in Modern History. Not even the most optimistic of on-lookers would, then, have predicted the success you have enjoyed.

—President Eisenhower

(while addressing 750 members of both the Houses of Parliament at Delhi, on 10th December, 1959)

(ग) हो अकस्मात उत्पन्न, नवीन, निराला।
अत्यंत गाढ़ औ हृदय छेदनेवाला॥
सर्वदा अचिंता-प्राप्त शोक हित भारी।
है एक अचिंता-मात्र महौषधि न्यारी॥
—प्रबोध चंद्रोदय

६४ अर्थान्तरन्यास

सामान्य का विशेष से अथवा विशेष का सामान्य से समर्थन अर्थान्तरन्यास कहलाता है। इसके चार रूप हैं—

(१) सामान्य का विशेष से साधर्म्य द्वारा समर्थन—

(क) कुल-मर्यादा प्राप्त कर लह न मान गुण-हीन।
राजा, अधिराजा नहीं गाँधी सम, अति छीन॥

यहाँ पूर्वार्द्ध सामान्य का उत्तरार्द्ध विशेष से समर्थन है।

(ख) खद्दर में आभा परम करती तमका नाश।
खदिर-प्रभा हरती तिमिर, करती पुण्य-प्रकाश॥

(ग) खद्दर जो धारण करे, नहीं मनुज सो निंद्य।
रहने पर भी अङ्क के, है मृगाङ्क नित वंद्य॥

(घ) जग में[1] नरने जो किया, नर कर सकता आज।
हिला[2] दिया इस वीर ने हाँ, केसर मृगराज!॥

---

१. What man has done man can do.

२ इंगलैंड के प्रधान मंत्री ने British Lion (बृटिश सिंह) कह कर शान दिखलाई थी। गांधी जी ने इस पर एक लेख लिखा जिसका शीर्षक था Shaking the manes अर्थात् सिंह का केसर हिलाना।

(ङ) बने योग्य अध्ययन से नर, न परीक्षा-जोर।
गाँधी मैट्रिक ही रहे, छाया जगत इँजोर॥

(च) नाद श्रवण कर तजे कुरंग मजी! स्व-प्राण को।
पा आह्लाद अनल पर तजे पतंग जान को॥
आर्तनाद सुन, देख दुःख-दव-ज्वलन स्वजन का।
देश-भक्त निज प्राण तजे, कुछ मोह न तन का॥

(छ) कानन से उत्पन्न अग्नि कानन को जारे।
पावक से उत्पन्न मेघ पावक को मारे॥
भारत से उत्पन्न मनुज भारत को घालें।
यों दुनिया में वे निज मर्यादा को पालें॥

(२) सामान्य का विशेष से वैधर्म्य द्वारा समर्थन—

मर्जी[१] जभी होती त्रिलोकीनाथ की हो सब तभी।
बस कर्म में अधिकार है, फल में नहीं हमको कभी॥
लाखों प्रयत्न किये, सफलता है मिली नर को नहीं।
औ कुछ न यत्न किये, हुआ है सिद्ध मन-वाञ्छित सही॥

(३) विशेष का सामान्य से साधर्म्य द्वारा समर्थन—

(क) गाँधी-बल भारत बचा, हुई न इसकी मौत।
क्या न साधु हैं साधते, महातमा युत-जोत॥

---

१ गाँधी जी का वचन—

He rules our actions and I literally believe that not a blade of grass grows, or moves without His Will.

—Light of India, p. 63

(ख) सत्य - अहिंसा - शक्ति से, लहा देशने राज।
दुर्लभ क्या जग में उसे, जिस में धर्म विराज ?।।

(ग) प्रबल विदेशी राज को जीत भगाया दूर।
दुष्कर क्या इस जगत में उसको जो है शूर ?।।

(घ) दारिद्र्य ओर झुके, झुके न [१]प्रताप पै अरि ढिग कभी।
रिपु ढिग झुके न [२]शिवा, सहा यद्यपि उन्होंने दुख सभी।
संकट सहा, शिर पै न गाँधी ने झुकाया शत्रु को।
झुकता कभी भी, रंच भी न, यथार्थ सच्चा वीर जो।।

(ङ) उदय काल में रक्त रवि, अस्त काल में रक्त।
संपत, विपत महान जन एकरूप हों व्यक्त[३]।।

(च) दुख पर दुख, पर समझते उसको सौरभ मिश्क[४]।
नरक स्वर्ग को, स्वर्ग को नरक करे मस्तिष्क[५]।।

---

१. Who stooped to poverty, but bowed not his head. —Carneighton

२ बीर बड़े-बड़े मीर पठान खरो रजपूतन को गन भारो।
भूषन जाय तहाँ सिवराज लियो हरि ओरंगजेब को गारो।।
दीन्हो कुज्वाब दिलीपति को अरु कीन्हो वजीरन को मुँह कारो।
नायो न माथहि दक्खिन नाथ, न साथ में फौज न हाथ हथ्यारो।।
—शिवराज-भूषण, पद्य-संख्या १८६

३ उदये सविता रक्तः रक्तश्चास्तमने तथा।
सम्पत्तौ च विपत्तौ च महतामेकरूपता।।
—मम्मट

४ कस्तूरी

५. Mind is its own place.
It can make heaven of hell, and hell of heaven.
—Milton

(छ) उठते औ गिरते सदा करता नाच पतंग।
सुख में, दुख में उच्च जन रहें एक ही रंग॥

(ज) विषयों के उपभोग से मन में शांति न आय।
घृत डाले जब अनल में ज्वाल और अधिकाय[1]॥

(४) विशेष का सामान्य से वैधर्म्य द्वारा समर्थन—

सुर तेंतीस करोड़ सहायक जिसके भारी।
इतनी ही देवियाँ सहायक जिस की न्यारी॥
भारत रिपु-हत हुआ, हुआ न सहायक कोई।
निज कर्मों का फल भोगा, भा अपनी खोई॥

६५ विकस्वर

विशेष का सामान्य से समर्थन कर पुनः सामान्य का किसी अन्य विशेष द्वारा समर्थन विकस्वर है। यह समर्थन (१) उपमा तथा (२) अर्थान्तरन्यास दो प्रकार से किया जाता है।

भाव-सादृश्य—
संतुष्ट मुझे तुम देख रही हो वनमें, सुख धन-धरती में नहीं,
किंतु निज मन में॥
—मैथिली शरण गुप्त

१ न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते॥
—मनु

(१) उपमा से—

(क) अति देवोपम गाँधी महान । को मानव कहे न रंच हानि ।
छिपता है अल्प महोच्च मध्य । यथा राम में मनुजत्व मंद ॥

(ख) सुनकर अप्रिय सत्य, बड़े न मानें अन्यथा ।
अप्रिय, पर न असत्य मुंडमाल ज्यों शंभु उर ॥

(२) अर्थान्तरन्यास से—

(क) भारत-भार स्व-शासपर धरा [१]आपने पुण्य ।
सज्जन का लक्षण यही, करें शेष यों धन्य ।

यहाँ 'भारत-भार का धरना' इस विशेष का 'सज्जन का लक्षण यही' इस सामान्य द्वारा समर्थन करके फिर 'करें शेष यों धन्य' इस विशेष द्वारा, अर्थान्तरन्यास के बल पर, समर्थन किया गया है।

(ख) दलित अछूतों को अहो ! साटा अपने अङ्क ।
रीति बड़ों की है यही, गुह[२]को राम स्व-अङ्क ॥

इस प्रकार किसी विशेष का सामान्य से समर्थन संतोषजनक न समझ कर उसको पुनः एक दूसरे विशेष द्वारा समर्थन करना, उसको विकसित करना विकस्वर अलङ्कार का काम है।

६६ प्रौढ़ोक्ति

जो उत्कर्ष का कारण नहीं उसे उसका कारण कहना प्रौढ़ोक्ति है। यथा,

---

१ गांधी जी ने २ निषाद

(क) स्वर्गंगा-धारा सरिस धारा [1]तव उपदेश।
नित मन को निर्मल करे, पावन देश-विदेश॥

यहाँ गंगा की धारा ही पर्याप्त है। स्वर्गंगा कह कर बात व्यर्थ बढ़ाई गई है। इस में कोई उत्कर्ष नहीं।

(ख) हरिश्चंद्र के सत्य सम सत्य [2]तुम्हारा तात!।
परम ज्योति का कुंज है, तेज-पुंज, अवदात॥

सत्य सत्य ही है। हरिश्चंद्र का सत्य कहने से कोई विशेष अर्थ नहीं निकलता, कोई महत्त्व उत्पन्न नहीं होता।

(ग) धर्मराज के धर्म सम राज रहा [3]तव धर्म।
कहीं दीखता है नहीं तुम में तनिक अधर्म॥

(घ) महावीर औ बुद्ध की शुभ्र अहिंसा तुल्य।
अहो! अहिंसा राजती तव[4] जग परम अमूल्य॥

६७ संभावना

यदि ऐसा हो तो ऐसा हो इस प्रकार का भाव जहाँ व्यक्त किया जाता है वहाँ संभावना अलङ्कार होता है। यथा,

(क) [5]मानव-जीवन का है ध्येय ईश को संनिधि,
नकि प्राप्ति सांसारिक संपत्ति की मित्रवर!।
इसी परिभाषा से हो प्रेरित महर्षियों ने
वर्णाश्रम-धर्म को निकाला अति मनोहर॥

१-४ गांधी जी का

५. Light of India, page 105.

पालन करें जो हम सब इस धर्म को तो
भौतिक महत्त्वाकांक्षा कमेगी अजी ! अचिर।
और बल विक्रम हमारा होगा स्वतंत्र जी,
जिससे महान क्षेत्र पा लहेंगे महेश्वर ॥

यह उक्ति गाँधी जी की है।

(ख) वक्ता हों यदि शेष, भारत-गुण कुछ गा सकें।
सुर औ नहीं सुरेश रखते हैं सामर्थ्य यह ॥

(ग) ईश-भक्ति ध्रुव औ प्रह्लाद समान धरे उर।
हरिश्चंद्र-दशरथ सम सत्य-सुव्रत में आतुर।
महावीर औ बुद्ध सरिस हो भाव-अहिंसा।
तो गाँधी से भिड़े, धरे समता की ईप्सा ॥

(घ) क्षिति से अस्थिरता, प्रवृत्ति अति नीच सलिल से।
पावक से पुनि दाह, शून्यता गगन अखिल से ॥
दूषित गंध पवन से दूर करें चतुरानन।
तो वे गाँधी के समान हो सकें सुहावन ॥

(ङ) शशि का काला हृदय, सूर्य का दाग शोकप्रद।
अनल-अनिल की धूम और शोषणता दुःखद ॥
सुरनायक का दर्प करें जो दूर विधाता।
तो वे गाँधी के समान होवें जग-त्राता ॥

(च) [1]एक साथ यदि गगन में रवि सहस्र का भास।
हो तो शायद हो सके उस प्रभु सरिस प्रकाश॥

(छ) [2]एक हृदय भी अगर टूटने से प्यारे ! मैं रोक सकूँ।
तो मेरा जीना इस जगमें व्यर्थ न होगा सत्य कहूँ॥
एक दुखी के दुःख-दर्द को अगर अजी ! मैं मिटा सकूँ।
मूर्च्छित खग को नीड़ ला सकूँ, जीना व्यर्थ न मित्र ! गुनूँ॥

६८ मिथ्याध्यवसिति

किसी असत्य बात को प्रमाणित करने के लिये किसी दूसरी असत्य बातकी कल्पना मिथ्याध्यवसिति है। यथा,

(क) राम सरिस रण-भीरु हैं, परशुराम सम दीन।
कृष्ण समान अबुध परम, गाँधी सब विधि हीन॥

---

१. दिवि सूर्य सहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता।
यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य महात्मनः॥
—श्री मद्भगवद्गीता, अ० ११, श्लोक १२

२. If I can stop one heart from breaking;
I shall not live, in vain;
If I can ease one life the aching,
Or cool one pain,
Or help one fainting robin
Unto his nest again,
I shall not live, in vain.
—Emily Dickinson.

(ख) विष्णु सरिस हर श्याम है, शिव सम अशिव स्वरूप।
हर्ता ब्रह्मा तुल्य [1]ये, गिरा सरिस जड़-रूप॥

(ग) है असत्य से प्रेम हरिश्चद्र सदृश [2]इन्हें।
हिंसा का है नेम महावीर औ बुद्ध सम॥

(घ) हिममें दाहकता, कृशानु में शीतलता ज्यों।
लोकबंधु प्रिय सहस्रांशु में मेचकता ज्यों॥
ज्यों दुर्गंध महा कपूर में पाया जाता।
त्यों गाँधी में बृटिश-रिपुत्व अहर्निश भाता॥

६९ ललित

जहाँ किसी व्यक्ति के सम्मुख वर्णनीय वृत्तान्त को स्पष्ट रूप से न कह कर प्रतिबिंब रूप से कहा जाय वहाँ ललित अलङ्कार माना जाता है। यथा,

(क) [1]अमेरिका से कम नहीं, भारत का यह देश।
पूजें बल का हौसला, याँ भी अहो! नरेश!॥

(ख) कालिय! और न मनुज यह, इसे जान रे क्रूर!।
हैं यह[3] कृष्ण, न और कुछ कहना मुझ को क्रूर!॥

---

१ गाँधीजी २ गाँधी जी को।

२ अमेरिका के स्वतंत्रता-संबंधी महायुद्ध की ओर संकेत है। इसमें इंगलैंड हार गई और अमेरिका उसके चंगुल से निकल गई।

३ गाँधी जी अर्थात् जैसे कृष्ण जी कालियनाग के सर पर नाचे थे और उन्होंने उसे दह से निकाल बाहर किया था वैसे ही गाँधी जी का भी तुम इंगलैंड के प्रति व्यवहार होगा।

७० प्रहर्षण

प्रथम—जिस वस्तु के लिये उत्सुकता हो उसकी अनायास, बिना प्रयत्न के, प्राप्ति प्रहर्षण है। यथा,

बाट जोहते थे सदा कब आवेंगे देश।
गाँधी को लख मुदित सब, आये छोड़ विदेश॥

द्वितीय—ईप्सित अर्थ की अपेक्षा अधिक लाभ की उपलब्धि। यथा,

(क) सहते थे संकट महा, देश-मुक्ति के हेतु।
मुक्ति मिली, मंत्री बने, लहा सुयश अति सेत॥

(ख) बारंबार याद कर यह अद्भुत संवाद वहाँ पै।
केशव औ अर्जुन का राजन्! पुनि-पुनि हर्षित हूँ मैं॥
हरि का अद्भुत रूप याद कर बारंबार सुधा सा।
विस्मय महा हो रहा, हूँ मैं पुनि-पुनि हर्षित, सुख पा॥
यह उक्ति श्रीमद्भगवद्गीता के अंत में, संजय की है।

तृतीय—उपाय की खोज करते फल की प्राप्ति। यथा,

(क) जनता निलहों से दुखी, खोज रही थी त्राण।
गाँधी आ धमके वहाँ, जनके जीवन-प्राण॥

(ख) कोड़ूँ काँग्रेस, तोड़ूँ इसके दिल-दिमाग़ को।
चाह रही थी इँगलैंड, इस में रही घाघ जो॥
मुस्लिम-लीग मिली, मिले उसे प्रियतम जिन्ना।
फिर क्या? मिली मुराद व पूरी हुई तमन्ना॥

जोड़ा जिन्ना से परम [1]प्रणय और अनुराग को।
भारत के दो भाग कर, फोड़ा भारत-भाग को॥

(ग) चिंता में जयचंद था, कैसे पृथ्वी-नाश ?।
घोरी धम से आ गया, पूरा मन-अभिलाष॥

(घ) ग्राम विकल जन-दान से, सोंचे नित्य उपाय।
मिले भीम राक्षस हना, मेटा सकल अपाय[2]॥

७१ विषादन

इच्छा के विपरीत फल-प्राप्ति विषादन है। यथा,

(क) बोल उठे इस पर गाँधी, "माँगी थी रोटी घुटनों टेक।
बदले में उसके है मुझको पत्थल मिला, आग में सेक"॥–दं०व्या०

(ख) [3]हाय ! आज दयनीय क्या दशा ! नेहरू-निखिल-मोद है नशा।
सर्व ओर अरि दीखते महा। देशकी स्थिति अतीव दुःसहा !।

(ग) समझा था ये सरस्वती के मंदिर होंगे मंदिर शुद्ध।
होंगे विद्या और शुद्धता के ये मंदिर परम विशुद्ध॥
देख रहा पर अहह ! अविद्या औ अशुद्धता के भरपूर।
बने हुए ये आज घोर [4]मंदर, कर रहे[5] मर्म में सूर॥

---

१ प्रीति, मैत्री २ दुःख

३. Prime Minister Nehru is the most distressed man Today. He had placed sincere faith in the Chinese pledge of Pancha-sheel, but he was to get a shock and a rebuff.

—Jai Prakash Narayan
30–4–60

४ मंदराचल ५ हृदय; विद्या का तत्व

(घ) [१]विश्वनाथ-नगरी, शुचि काशी-धाम प्रवर में।
पुनः सनातन धर्म महाविद्यालय वर में॥
छात्रगणों से ठगा गया धन शुल्क-रूप में।
किया गया कुछ काम नहीं वाँ तदनुरूप पै॥
फल-स्वरूप श्री प्रिंसपल, हेडमास्टर औ मास्टर।
तीनों ही पकड़े गये, अहह! सुमञ्ज-प्रपञ्च खर!॥

७२ उल्लास

एक के गुण और दोष से अन्य को गुण और दोष की उपलब्धि उल्लास है। यथा,

गुण से गुण—

Varanasi, Feb. 22

१. Three persons, the Principal of the Vishwanath Sanatanadharma Maha Vidyalaya, a Headmaster, and an Asst. master were arrested, here, last evening by the Bhalupur police for alleged cheating and forgery against twenty-eight students.

—Searchlight, 24-2-60

कहाँ यह आचरण और कहाँ गाँधी जी का निम्नाङ्कित भाव! दोनों में आकाश-पाताल का अन्तर है। निस्संदेह जो दैत्य है वह देवता का निर्माण नहीं कर सकता।

I would ask all the school masters of India that now that they are no longer under the observation of the foreign masters, they should recognise their true function even at the risk of their lives to give the right bent to the mind of those whom it is their proud privilege to mould.

—Gandhi.
(Light of India, P. 256)

(क) एक कोटि जन प्रति दिन यदि इस दीन देश में काटें सूत।
केवल मात्र एक घंटे तक स्वावकाश में तो निज बूत॥
प्रतिदिन इस विधि देश-विभव में जोड़ेंगे सु-पचास हजार।
यों अपने बेकार वक्त में उपजावेंगे लाभ अपार॥—दं०या०
यह बक्ति गाँधीजी की है।

(ख) रूस और अमरिका महा आनंदित लख के।
भारत पूर्ण स्वतंत्र हुआ यह बात निरख के॥
मित्र राष्ट्र सब परम सुखी यह सौख्य जान के।
भारत के मंगल को निज मांगल्य मान के॥
दोष से दोष—
देश-देश में मेल, यदि न रहा भर पूर तो।
महायुद्ध को झेल, होगा जग विध्वस्त बस॥
गुण से दोष—

(क भारत के सब लोग मुग्ध-मोहित मोहन से।
सुखी सूर्य से, पाते हैं आनंद किरण से।
किंतु देशद्रोही को हैं ये नहीं सुहाते।
इनकी आभा से वे निज को नित्य बचाते॥

(ख) हिंदू-मुस्लिम-ऐक्य, पर-शासन-हित मरण ही।
ठहर न सकता [1]भेक, भाग चले [2]भोगी निरख॥
दोष से गुण—

---

१ मेढक २ सर्प

(क) चाहा नित्य अनैक्य, जिस में वह नित रह सके।
गृह में अगर न ऐक्य, को न उठाता लाभ है ? ॥

(ख) जेल न डालो गाँधी को यद्यपि दुखदाई।
इससे देश समस्त और भी जागे भाई ! ॥
दें सलाह यों आँग्ल के जो मित्र-हितैषी।
उत्तम पथ पर लाते हैं ही सुहृद-शुभैषी ॥

७३ अनुज्ञा

श्रेष्ठ गुण की अभिलाषा से दोष-युक्त वस्तु की भी ईप्सा अनुज्ञा कहलाती है। यथा—

(क) गये सबों के जेल, मिले स्वराज्य अगर अहो ! ॥
चलो इसे लें झेल, जन्म-भूमि-कल्याण-हित ॥

(ख) पावे पुण्य स्वदेश, यदि स्वतन्त्रता पद परम।
धरो न चिंता लेश, त्यागो निज पद परम भी ॥

(ग) हो भारत कल्याण, यदि विद्यालय के तजे।
साधें यह जी-जान, चलो न सोंचे रंच भी ॥

७४ अवज्ञा

एक के गुण-दोष से अन्य को गुण-दोष प्राप्त न होना अवज्ञा है। इसके दो भेद हैं—

(१) गुण से गुण का न होना :—
जरे बुद्धि वह और जरे वह विपुल ज्ञान भी।
जरे विमल विज्ञान, जरे धन, मान, शान भी ॥

जरे धर्म ओ जरे पराक्रम, सब कुछ अर्जित ।
जो न देश में भक्ति धरे व करे इसे[1] अजित !॥

(२) दोष से दोष का न होना—

भानु प्रताप को शाप दिया, अँबरीष पै कोप किया बिना कारण ।
शाप स्त्र-नारी को ओ नृग को, हरि को मुनि ने हित-साधन-कारण !॥
पाद-प्रहार किया भृगु ने भगवान पै, रंच संकोच नहीं मन ।
कारण पा कितने, न कहीं कुछ क्रोध किया[2] तुमने जग पावन !॥

७५ तिरस्कार

दोष-युक्त होने से गुणवाले पदार्थ का भी निरादर तिरस्कार है । यथा,

(क) गिरजा ओ मसजिद, मंदिर प्रदीप-वर,
प्रयोगशाला ओ रंगशाला दीप्ति अनुत्तम ।
विद्या के सदन, पुस्तकालय-भवन और
यंत्रालय, चपला-निलय-आभा अनुपम ॥
गगन के तारागण, चन्द्रमा ओ नर और
नारायण विरचित विभाकर मनोरम ।
सबसे गही है प्रभा भर-पूर, जन्म भर,
गाँधी की प्रभा न गही तो सभी तिमिर-तम॥

---

१. जो किसी से जीता न जा सके; इसी कारण भगवान् विष्णु के सहस्र नामों में से यह भी एक है ।

२. गान्धीजी ने ।

(ख) तरह-तरह के ख़िताब और ख़िल्लत औ
राज-प्राप्त अनुपम मान और समादर।
गज, बाजि, मोटर, महल सप्त पहल औ
मणि-माणिक विभव विविध विधि सुन्दर॥
मोद औ विनोद, सुख, आनंद अपार और
आयु भी विशाल, तन निरुज औ मनोहर।
हों न ये सफल, यदि हो न अविकल और
अविरल देश-भक्ति, जन भवभीति-हर॥

(ग) भारत का सेवक परम पै अनीति-भांडार।
त्याज्य पुजेरी सरिस सो दुराचार-आगार॥

(घ) गाँधी-टोपी शीश पर, मुख में गाँधी-उक्ति।
पै विकृत व्यवहार यदि, त्याज्य, न भाजन-भक्ति॥

(ङ) विद्यालङ्कृत, दुष्ट पै, मनुज सदा परित्याज्य।
मणि-भूषित, पै गरल-युत, सर्प सुत्याज्य, न ग्राह्य॥

७६ लेश

गुण में दोष वा दोष में गुण मानना लेश कहलाता है।

(१) गुण में दोष—

(क) अतः य भारत राष्ट्र रूप से जीना यदि चाहे जग बीच।
जन का भूख-जन्य यह मंद मरण वारण करना, अति नीच॥
तो उपाय करना अवश्य कुछ जिससे पहुँचे सुख तत्काल।
गोलमेज की सभा न इसके लिये उपाय यहाँ इस काल॥

(ख) अँगरेजी साहित्य को, दें सु-तिलांजलि आह !।
कहके वस्तु विदेश की, वाह-वाह जी वाह !!।

(२) दोष में गुण--

(क) जो सड़ते-गलते नहीं, तपते बंधन क्रूर।
तो कैसे भारत-सुजन, करते बंधन दूर ?।।

(ख) चौराचौरी-चरित सुन, जो रण से रणधीर।
[1]राम सरिस हटते नहीं, होते सफल न वीर ।।

(ग) चंपारण में रण न जो, करते जन-शिरमौर।
तो न कृषक-गण का कभी, कटता दुख घनघोर ।।

७७ रत्नावली

प्रसिद्ध साहचर्य का क्रमानुसार वर्णन रत्नावली है। यथा—

की अति विनय प्रथम पुनः भेजा पत्र सप्रेम।
कुछ भी सुना नहीं तब तोड़ा नमक-कुनेम ।।

७८ मुद्रा

प्रासंगिक वर्णन के पदों द्वारा सूचनीय अर्थ को सूचित करना मुद्रा अलङ्कार है। यथा,

भारत की यह भूमि रही अति ताप से पीड़ित नित्य निरन्तर।
विद्ध विदेश के शासन से मृतप्राय बनी धृत दुष्ट निशाचर ।।

---

१. खरदूषण के साथ युद्ध में भगवान् रामचन्द्र एक डेग पीछे हट गये थे। नेहरू जी हाल में पटने में बोले थे कि इसका महत्त्व अब मुझे समझ में आया।

गाँधी निरस्त्र भिड़े उससे प्रिय, जीता उसे बल-साहस लाकर।
है [1]वसुधा [2]वसुधा यह आज विजय लह, शीश किरीट सजाकर॥

यह किरीट नामक सवैया छंद है। इसके अन्तर्गत भाव किरीट-प्राप्ति के हैं। यों भीतर और बाहर किरीट ही किरीट है। किरीट के प्रासंगिक वर्णन के पदों द्वारा इस छंद का किरीट नाम सूचित किया गया है।

७९ तद्गुण

अपना गुण त्यागकर समीपस्थ उत्कृष्ट गुणवाली अन्य वस्तु का गुण-ग्रहण तद्गुण है। यहाँ गुण शब्द से रंग-रूप का अभिप्राय है।

[3]सत्यमूर्ति-संगति सुभग, पा उज्ज्वलता-धाम।
श्याम हृदय है हो रहा, उज्ज्वल अति अभिराम॥

८० पूर्वरूप

दूसरे का गुण ग्रहण करने के बाद पुनः अपने पूर्व गुण का प्रकाश पूर्वरूप है! इसके दो प्रकार हैं, पहला तो यह और दूसरा वह जहाँ प्रयत्न करने पर भी पूर्वरूप का लोप न हो।

पहला—

(क) शासक-गण के संग से, जनगण मन हो श्याम।
गाँधीजी के निकट में, पुनि वह श्वेत, ललाम॥

(ख) भारत भा-रत था पहले, प्रतिभा व विभा इसकी थी विभाती।
पूर्ण स्वतंत्र रहा यह ओ सुख-आनंद की थी छटा छहराती॥

---

१ रत्न धारण करनेवाली २ पृथिवी ३ गाँधीजी

आरत-गारत श्याम हुआ, लह शासन[अन्य]का प्राण-संघाती।
गाँधी-प्रताप जगी सित ज्योति, स्वतंत्र हुआ फिर[सो छवि छाती॥

दूसरा—

(क)—

वैर व फूट व मैल सभी जो रहा हर गैल-गली, हर कूचा।
चोर-डकैत का भाव रहा जो अजी! जिसने सब भाँति थकूचा॥
सो सब दुर्गुण प्राप्त विदेश के शासन से रहा सोइ समूचा।
होकर पूर्ण स्वतंत्र रहे हम मैल भरे व रहा हिय छूछा॥

(ख) जहाँ-तहाँ सर्वत्र कर रहे पूर्ण प्रयत्न।
हिंदी के पूरा प्रचार हित मानव-रत्न॥
अंगरेज रँगरेज ने रँगा पै जिस रँग में।
रंग सु-पक्का चढ़ा न जाता तनिक अंग से॥

यहाँ पूर्व का अविरल अंगरेजी-प्रेम प्रयत्न करने पर भी नहीं जाता। यह बात श्रीमान् राजगोपालाचारी इत्यादि महानुभावों के भावों से व्यक्त है। भारतीय संविधान के सर्वथा विरुद्ध इन लोगों का विचार है कि हिंदी नहीं, अँगरेजी राष्ट्र-भाषा के पद पर सुशोभित हो!

८१ अतद्गुण

संभव होने पर समीपस्थ वस्तु का गुण न ग्रहण करना अतद्गुण है। यथा,

(क) रहे महात्मा संग भी, चढ़ा न रंग परंच।
हिय ज्यों-का-त्यों ही रहा, बदले आप न रंच॥

(ख) रहते काँग्रेस में सदा, जो उज्ज्वल, अवदात।
पै न रंग उसका खरा, चढ़ता उर पर भ्रात॥

(ग) श्वेत-हृदय गाँधी हरें, शत्रु-श्यामता नित्य।
तोभी अजी ! बना रहे, सित इनका शुचि चित्त॥

(घ) कीर्तन तो हम कर रहे, बढ़ता जाता चाव।
कर्तन पै करते नहीं, तनिक राक्षसी भाव॥

(ङ) चढ़ता न शंभु का बाह्य रंग भी उर पै।
चढ़ता न आंतरिक रंग विष्णु का उर पै॥
पक्का मजीठ का रंग चढ़ा भीतर है।
बस अमा रमा करती सदैव अंदर है॥

(च) हैं क्रिस्तान, न ख्रीष्ट के सुगुण पाये जाते।
मुसलमान पै नहीं मुहम्मद-गुण में राते॥
हिंदू हैं, नित राम-कृष्ण के परम पुजारी।
पै उनका गुण एक न, हैं हम अधम सुरारी॥

(छ) ग्राम[1] एक इस देश में, नाम सु-पाकिस्तान।
भजे न गुण इस देश का, तजे न पहली बान॥

---

१. बिहार से भिन्न एक प्रान्त में स्थापित पाकिस्तान का यह उल्लेख है। अब तो बिहार के गया-धाम ये भी एक पाकिस्तान ग्राम की स्थापना का समाचार मिला है—

Enquiries are being made by the Government as to how a village within Gurua police station in the district of Gaya, came to be known as Pakistan, and letters delivered under such name.

(Searchlight, 16.6.60)

जहाँ किसी कारणवश प्रकृत (अर्थात् अधिक गुणवाली वस्तु) के ही द्वारा अप्रकृत (अर्थात् न्यून गुण वाली वस्तु) के गुण का ग्रहण न हो वहाँ भी यह अलङ्कार होता है। यथा,

(क) रहे विलायत में अहो! बहु दिन लौं श्रीमान।
रंग विलायत का न पै, उर पर चढ़ा सुजान!॥

(ख) धर्म-कर्म सब एक है, रहें एक ही साथ।
'लीग' में नहीं भींगते, मुस्लिम परम सुजान॥

महाकवि भूषण ने 'अतद्गुण' अलङ्कार में गुण का अर्थ केवल वर्ण न लेकर गुण भी लिया है। देखिये शिवराज-भूषण पृष्ठ ८६, पद्य-संख्या २६५। मैंने यहाँ इनका ही अनुकरण किया है।

८२. अनुगुण

दूसरे के समीप होने से अपने स्वाभाविक गुण में उत्कर्ष आना अनुगुण है। यथा,

मोती और जवाहर आदिक पुरुष रत्न में।
सरोजिनी, कस्तूरी, कमला, लक्ष्मी गण में॥
गाँधी के संसर्ग से बढ़े निर्मल, अविरल।
दिन दूनी औ रात चौगुनी प्रभा व परिमल॥

तद्गुण और अनुगुण में भेद यही है कि पहले में गुण शब्द वर्ण के अर्थ में प्रयुक्त है और दूसरे में यह बंधन नहीं है।

८३. मीलित

किसी अनुरूप वस्तु के द्वारा किसी अन्य वस्तु का लुप्त हो जाना मीलित अलङ्कार है। यथा,

(क) खद्दरधारी पुलिस-जन खद्दरधारी मध्य।
पहचाने जायें नहीं, को अवंद्य को वंद्य ?॥

(ख) गाँधी ! तव यश व्याप्त जग, छाया शीश गिरीश[१]।
गिरि गिरीश[२] हैं ढूँढ़ते, गिरिजा ढूँढ़ गिरीश॥

(ग) लुप्त श्वेतवसना[३] हुई, गाँधी के यश शक्र[४]।
शक्र[५] ढूँढ़ते हैं उसे, सुरगण ढूँढ़ें शक्र॥

८४. सामान्य

गुण सादृश्य के कारण प्रस्तुत का अप्रस्तुत के साथ तादात्म्य कथन सामान्य कहलाता है। यथा,

(क) नेता गाँधीमय हुए, भेद न पड़ता देख।
भाव एक आचरण हैं, अन्य न पड़ता पेख॥

(ख) गाँधी का क्या भाव है ? काँग्रेस का क्या भाव ?।
पता न चलता रंच भी किसका कौन स्वभाव ?॥

(ग) गाँधीमय ग़फ़्फ़ार[६] हैं, गाँधीमय राजेन्द्र।
पता न किसका भाव क्या ? तुल्य रूप वीरेन्द्र॥

(घ) गाँधी और जवाहर, आत्मा एक।
कहाँ और क्या अंतर, सूझ न नेक॥

---

१. हिमालय २. भगवान् शंकर ३. सरस्वती ४ मग्न ५ इन्द्र, जिनका वर्ण उज्ज्वल है। ६. अब्दुल गफ्फार खाँ जो सीमाप्रांत के गाँधी कहे जाते थे और जिन्होंने खुदाई खिदमतगारों का एक देश-सेवकदल कायम किया था।

(ङ) कार्य-दक्षता में नहीं हरिजन, अन्य लखायँ।
वही बुद्धि है बल वही, भेद न रंच दिखाय॥

मीलित में एक श्रेष्ठ वस्तु द्वारा दूसरी निकृष्ट वस्तु का तिरोधान होता है। सामान्य में दोनों वस्तुएँ वर्तमान् रहती हैं पर अभेद के कारण कौन-कौन है इसका पता नहीं लगता। तद्गुण में अपना गुण त्याग कर दूसरे का गुण ग्रहण किया जाता है। सामान्य में अपने गुण का परित्याग नहीं होता।

८५. उन्मीलित

अनुरूपता रहने पर भी किसी कारण से भेद की प्रतीति उन्मीलित है। यथा,

(क) आँगल पार्लमेण्ट में नेहरू नहीं लखायँ।
भाषण से जाने गये भारतीय सित-काय॥

(ख) रेजिनल्ड रेनल्ड्स और नेहरू में न भेद कुछ।
मीरा बेन व नयडू में न कहीं विभेद कुछ॥
बोल-चाल से ही देशी व विदेशी जनके।
अन्तर का अंदाज मिला, यों शोभन तन थे॥

८६. विशेषक

सदृश वस्तुओं में जहाँ किसी हेतु द्वारा भेद का पता लगे वहाँ विशेषक अलङ्कार होता है। यथा,

(क) सहृदय औ गुणी औ ज्ञानी मही मण्डल में
कवि और कोविद औ विज्ञ सो ही ज्ञाता है।

सुकृती ओ शुभ-कीर्ति, धर्म-कर्म-परायण,
नीति में निपुण अति सोही कुल-त्राता है॥
धनवान, परम सयान ओ सुजान और
शक्तिमान, मतिमान, मानी सोही दाता है।
भारत-माता के पद-पंकज पुनीत और
पावन में जिस सुजन का मन राता है॥

यहाँ भारत-माता में 'मन-राता' से भेद का पता लगता है।

(ख) खद्दरधारी तो सब ही लखने में आते।
ज्वारी, चोर, लबार, लफंदर, अघ में राते॥
साध्य हेतु साधन शुचि, मन-वच-कर्म-शुद्धता।
से ही प्रकटित गाँधी-सन्मार्गानुरक्तता॥

उन्मीलित और विशेषक ये दोनों अलङ्कार आपस में मिलते-जुलते हैं। काव्य-प्रकाश में इनका उल्लेख नहीं है। परन्तु कुवलयानंद, शिवराज-भूषण एवं काव्य प्रभाकर में इनका पृथक् वर्णन है। काव्य प्रभाकरकार श्री भानु कवि का कहना है कि "जहाँ समता में सत्य निकले उसे विशेषक कहते हैं। 'उन्मीलित' में हेतु की अपेक्षा है और 'विशेषक' में समय की अपेक्षा है।" (पृष्ठ ५८१-२)

८७. उत्तर

चमत्कार-युक्त उत्तर उत्तर अलङ्कार है। यह तीन प्रकार का होता है—

(१) जहाँ उत्तर से ही प्रश्न का पता चल जाय अथवा उत्तर प्रश्न-पूर्वक हो। यथा,

(क) मोहन में नहिं भक्ति, अजी ! कर्म की बात यह।
विषयों में अनुरक्ति, इससे ही दुःखित रहूँ॥

यहाँ उत्तर से पता चलता है कि प्रश्न था, "आप क्यों दुःखित हैं ?"

(ख) बस इस मग हो सामने चले जाइये आप।
गाँधी-ग्राम समीप ही हरण शोक-संताप॥

(ग) [1]"उम्र आपकी ?" "है चालीस" कहा कर्जन ने।
प्रश्न किये जाने पर तिब्बत में सित-तन ने॥
कहा नहीं "सैंतीस" मान-मर्यादोल्लासी।
कहा सु-अखित असत्य सेत-इँगलैंड-निवासी॥
यों बोले आप घमंड से, "हम से ही भारत-अवनि।
है सीखा सत्य," भला न क्यों, हरिश्चंद्र-दशरथ-धरणि!॥

---

१. भारत के बड़े लाट कर्जन ने अपनी पुस्तक "(Persia and the Eastern Question" (फारस और पूर्वीय प्रश्न) में एक स्थान पर उल्लेख किया था कि जब मैं तिब्बत में दलाईलामा से मिलने गया तब अधिकारियों द्वारा उम्र पूछे जाने पर मैंने अपनी असली उम्र सैंतीस न कहकर चालीस कहा, क्योंकि चालीस से कम उम्र वाले की वहाँ प्रतिष्ठा नहीं होती थी। पीछे भारत में आने पर एक वार अपने व्याख्यान में आपने कहा कि भारत ने सत्य हम अँगरेजों से सीखा है। इस पर बड़ी सनसनी फैली। कलकत्ते के "अमृत बाजार पत्रिका" ने अपनी ओर से इस पर कोई टीका-टिप्पणी नहीं की। उसने लाट कर्जन की उक्त पुस्तक से बस यही अंश लेकर छाप दिया। इस मौन आलोचना की तत्कालीन "Review of Reviews" पत्र के संपादक परम विख्यात सर वीलियम स्टेड ने बहुत ही प्रशंसा की थी।

(२) जहाँ अनेक प्रश्नों के अनेक उत्तर दिये जायँ। यथा,

(क) ¹पुण्य ? पर उपकार, क्या है पाप ? पर-पीड़न सखे ! ।
लाभ ? संतों का समागम, सुख, निरुजता बुध भखें ॥
बल ? परस्पर एकता, गुरुता ? स्वदेश - प्रशस्तता ।
तप ? सत्य, समुदारता ? पावन अहिंसा-रक्तता ॥

(ख) राम सत्य अथवा असत्य ? गाँधीजी ! बोलें ।
राम-जन्म के समय न थे हम क्या मुँह खोलें ? ॥
तुलसी ने है लिखा सत्य सब ? यह समझायें ।
तुलसी के भी समय न थे, क्या तुम्हें बुझायें ॥
इतना अवश्य हाँ कह सकें, प्रिय आंगलवासी ! तुम्हें ।
तुलसी-रामायण ने अहो ! किया सत्य में दृढ़ हमें ॥

इंगलैंड से किसी अँगरेज ने गाँधीजी के पास तार द्वारा प्रश्न किये थे जिनके उत्तर गाँधीजी ने इस प्रकार दिये थे ।

(ग) परतंत्रता तथा स्वराज्य में है क्या अंतर ? ।
वही, लसे जो रात और दिनके अभ्यंतर ॥

उन्होंने कहा था कि यह समालोचना ठीक Swift की समालोचना जैसी मर्मभेदी है ।

१. अष्टादश पुराणानां व्यासस्य वचनद्वयम् ।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीड़नम् ॥

परहित सरिस धरम नहिं भाई । पर पीड़ा सम नहिं अधमाई ॥
—तुलसीदास

The noblest motive is the public good.
—Virgil

नारी ओ नर में बोलो, क्या अंतर राजे ?।
मुक्की ओ मुक्के के अभ्यंतर जो भ्राजे ॥
मधुर गिरा कटु वचन में, क्या अंतर मुझसे कहो।
चटनी ओ चट्टान में दीखे जो तुमको अहो ! ॥

(३) जहाँ प्रश्न-वाक्य से ही उत्तर निकले वा अनेक प्रश्नों का एक ही उत्तर हो। यह चित्रोत्तर नाम से भी ख्यात है। यथा,

(क) क्यारी सुमन प्रमोद-प्रद, नेत्र सुखद, मृदु-गंध ?।
क्यारी सुमन प्रमोद-प्रद, नेत्र-सुखद, मृदु-गंध ॥

यहाँ प्रश्न में ही उत्तर मौजूद है। अरी ! इस सुन्दर मन को प्रमोद देनेवाली, नेत्रों को सुख पहुँचानेवाली और मधुर गंध से युक्त क्या है ? उत्तर है, क्यारी सुमन अर्थात् फूलों की क्यारी।

(ख) किसको मोह नहीं ? कहो, कौन दैत्य-हंतार ?।
को जन-मन-रंजन करे ? मोहन गुण-आगार ॥

यहाँ तीन प्रश्नों का उत्तर है मोहन जिसका अर्थ है, कृष्ण वा गाँधी।

(ग) दीन-बंधु को ? और को दयासिंधु यॉं सोह ?।
को त्राता, धाता अजी ! गाँधी गत-विद्रोह ॥

(घ) किसने तन पै शुभ वस्त्र दिया ?
किसने जन दीन का दैन्य निवारा ?।
किसने रुज-रंक हरा रुजगार दे ?
ओ किसने हिय से भय टारा ? ॥

किसने धन जाने दिया न विदेश ?
कहो, किसने बल-पुंज पसारा ?।
किसने यह देश स्वतंत्र किया ?
प्रिय गाँधी ने जो अवनी पर न्यारा !॥

(ङ) क्यों नेहरू लड़ते न किसी से, अपयश झेलें ?"
पाकिस्तान, पोर्तुगल, चीन सबों से खेलें ?॥
क्यों क्रुश्चेव[1] गये आइजनहावर[2] से मिलने ?।
इस प्रकार मैत्री-संस्थापन में अति पिलने ?॥

जिस में प्रशांत इस सिंधु से समुदित हो वर सूर्य शुचि।
जो दे इस जग को ज्योति शुभ औ जीवन सुखमय, सु-रुचि॥

अर्थात् जिस प्रकार प्रशांत महासागर से सूर्य उदित होता है उसी प्रकार शांति के इस समुद्र से सुख का सूर्य समुदित हो। यहाँ कई प्रश्नों का एक ही उत्तर है।

(च) जो काम कर सकता न कोई नित्य करता को उसे ?।
जिस धाम पर पहुँचें सभी पहुँचे न कौन वहाँ सखे ?॥
है मान के अति योग्य तो भी को न पाता मान सो ?।
जग-सवश्रेष्ठ-मनुष्य-मानित कौन ?[3]हरिजन, जान जो॥

उत्तर अलङ्कार का यह भेद 'प्रश्नोत्तर' भी कहलाता है।

८८. सूक्ष्म

आकार या संकेत से जानी गई किसी बारीक बात को किसी युक्ति से प्रकट करना सूक्ष्म अलङ्कार है। यथा,

---

१. रूस के प्रधान मत्री २. अमेरिका के राष्ट्रपति। ३. भंगी से अभिप्राय है।

आकार—

दंगे यह न स्वतंत्रता, लख आकार-प्रकार।
'तजो हिंद' प्रस्ताव यह, पास किया लाचार॥

संकेत –

(क) [१]नेहरूजी ने जान कर शासक का कटु तत्त्व।
गाँधी को कांग्रेसका सौंप दिया नेतृत्व॥

(ख) सचिवालय ऊपर ध्वजा गाड़ेंगे जन आय।
फाटक पर सरकार ने रक्खे सैनिक लाय॥

८६ पिहित

[२] एक आश्रय में रहनेवाला गुण अपनी शक्ति से जहाँ अ-समान अन्य गुण को ढक लेता है वहाँ पिहित अलङ्कार होता है। यथा,

(क) स्वतंत्रता-प्रस्ताव परमावश्यक में सखे!।
उसका संकट-ताव लख न पड़ा जनको तनिक॥

(ख) परम तपस्वी के सदृश दिव्य रूप [३]तव भाय।
भारत-चिंता की नहीं रेखा रंच लखाय॥

६०. व्याजोक्ति

प्रकट हो जाने पर रहस्य को छिपा लेना व्याजोक्ति है। यथा,

---

१. नमक-कानून के नियमानुसार पं० जवाहरलालजी पकड़े गये और उन्हें छः महीने की सजा मिली थी।

२. यह लक्षण रुद्रट के काव्यालङ्कार के अनुसार है। ३ गाँधीजी का।

(क) शांति-स्थापना-हेतु ही, भेजें जन को जेल।
जिसमें जनता सुख लहे, दे निज संकट टेल ॥

दमन का रहस्य छिपाने के लिये यह बहाना किया गया।

(ख) क्या सरकारी नौकर, क्या राजा ओ बाबू।
कुछ करते काँग्रेस सहायता, रह बे-काबू ॥
दिया एक ने एक सहस हाँ, काँग्रेस-चर को।
और कहा वाँ बैठे सरकारी अफसर को।
"हैं बेचारे वहु कष्ट में, कन्याका है व्याह शुभ।
यह कर्ज लिया मुझ से अजी! साधे सब सबका सु-प्रभु!॥"

६१. युक्ति

क्रिया द्वारा रहस्य-गोपन युक्ति है। यथा,

झंझट से हो दूर तुम, चिंता से हो दूर।
इससे ही हम ले रहे तुम से शासन शूर! ॥

६२. गूढ़ोक्ति

और के उद्देश्य से और को कुछ कहना गूढ़ोक्ति है। यथा,

(क) [1]बुध बुध से ओ सुजन सुजन से ही सुख माने।
गुणी गुणी के ही गुण को संतत पहचाने ॥
सच्चा सच्चे को, न्यायी न्यायी को जाने।
धर्मी धर्मी, पापी पापी को उर आने ॥

---

१. अंगरेजी की कहावत—Like naturally draws towards like. फारसी की कहावत—कद्र जौहर शाह दानद या बदानद जौहरी अर्थात् मोती की कद्र या तो बादशाह करता है या जौहरी।

यहाँ किसी अपमान-प्राप्त मनुष्य ने अपमान करनेवाले व्यक्ति को न कहकर अपने मित्र को कहा है।

(ख) धन की चिंता में भला क्यों, यों हैं बेहाल ?
खोल महात्मा नाम पर संस्था, हों खुशहाल ॥

यहाँ उन लोगों के प्रति संकेत है जो गाँधीजी के नाम पर संस्थाएँ खोलते हैं, इस विचार से कि ऐसा करने से जनता का असाधारण आकर्षण होगा और इस प्रकार प्रचुर धनोपार्जन होगा, चाहे गाँधीजी के उद्देश्य और आदर्श से उनका संचालन करोड़ों कोस दूर क्यों न हो।

६३. विवृतोक्ति

चतुरता से छिपाये हुए रहस्य का कवि द्वारा प्रकट कर दिया जाना विवृतोक्ति है। यथा,

(क) भारत को, अति शोक ! ज्ञान राज्य का है नहीं।
अकबर और अशोक, पश्चिम में ही थे कहीं ! ॥

पूर्वार्द्ध में अंगरेजों द्वारा चतुरता पूर्वक छिपाये हुए रहस्य को उत्तरार्द्ध में, व्यंग्यात्मक वाक्य से, प्रकट कर दिखाया गया है।

(ख) भागो सिंह, रहो न याँ, छन भर अब मृगराज !।
विद्युत-दंड स्व-आत्म बल लिये खड़े सिरताज ॥

यहाँ उत्तरार्द्ध में रहस्य प्रकट कर दिया गया है। भगाने के लिये गाँधीजी का आत्म बल बिजली की छड़ी है।

९४. लोकोक्ति

कहावत या मुहाविरे का प्रयोग लोकोक्ति है। यथा,

कहावत—

(क) वैर-फूट का अमृत सम, किया देश ने मान।
गरल पान अब कर रहा, जग है कर्म-प्रधान[1] ॥

(ख) गुण अनंत हैं ऐक्य में, अवगुण तथा अनैक्य।
जो जिस मग जाता अहो! पाता फल त्यों नेक ॥

(ग) घोर वैर ने ही घोरी को यहाँ बुलाया।
घोर शत्रुता ने आँगल को शीश चढ़ाया ॥
क्यों अँगरेज न लूटे हमको लूटेरा वह?।
घर फूटे, लूटे गँवार, संसार विदित यह ॥

मुहाविरा—

चक्रपाणि ने देशका पानी रक्खा यार!।
भारत-मुख-लाली रखी, दे आँगल को हार ॥

९५. छेकोक्ति

अर्थान्तर-गर्भित लोकोक्ति छेकोक्ति है। यथा,

सिर जो भारत पर चढ़े सोही पुण्य-निकेत।
जो प्रसून सुर पर चढ़े सोही सुरभि-उपेत ॥

इसका अभिप्राय यही है कि देश के हित मरना श्रेष्ठ है।

---

१. कर्म-प्रधान विश्व करि राखा। जो जस करै सो तस फल चाखा ॥
—रामायण

९६. अर्थ वक्रोक्ति

अन्य अभिप्राय से कहे हुए वाक्य का किसी अन्य व्यक्ति द्वारा, अर्थ-श्लेष की सहायता से, अन्य अर्थ की भावना अर्थ वक्रोक्ति है। यह दो प्रकार की होती है—श्लेष-गर्भित और काकु-गर्भित। यथा,

श्लेष-गर्भित—

(क) मोहन कहाँ? किसी मंदिर में ही होंगे वह।
दास कहाँ? होंगे जहाँ-तहाँ निज स्वामी सह॥
करम कहाँ? नर-भाल में, कहाँ चंद? गगन में।
गाँधी कहाँ? इसी आश्रम में, किंतु शयन में॥

(ख) साबरमति पर नजर गड़ी थी, गाँधी क्या करने को आज?।
इसी बीच आश्रम में आये रवीन्द्र, कवियों के सिरताज॥
बोले आप, "महात्माजी! अब उम्र हमारी सत्तर साल।
अतः आप से अधिक वृद्ध हूँ, नहीं बजाता हूँ मैं गाल"॥
गाँधीजी बोले मज़ाक़ से, "देखें इसे आप ही जाँच।
साठ साल का नर न नाच सके, सत्तर का कवि सकता नाच"॥
—दं० या०

यहाँ 'सत्तर' पद का जिस अभिप्राय से कवीन्द्र ने प्रयोग किया गाँधीजी ने उसका अर्थ बदल कर उत्तर दिया जिसका यह अभिप्राय निकला कि साठ साल का आदमी सत्तर साल के आदमी से अधिक वृद्ध है।

(ग) मिला है स्वराज्य ही न, मिला पूर्ण स्वराज्य है,
अब तो सुखी होंगे परम निज मन में?।

हाँ जी, अब सब अपने ही मन की करें ओ
ध्यान पर का न कुछ स्वारथ सघन में ॥
चोरी और डकैती, कपट-छल, पूर्ण रूप,
पाप एक भी न, हो रहा न नर-गण में।
अ-कंटक राज्य, कौन कंटक न चुभ रहा,
सुखी को न स्वराज्य को पाके निज मन में ? ॥

यहाँ 'स्वराज्य' में श्लेष है जिससे दो अर्थ निकल रहे हैं।

(घ) [1]गिरिजे ! भिक्षुक-राज कहाँ ? बलि द्वार, नहीं याँ।
अरी ! कहाँ वृषपाल ? चराते गो व्रज में वाँ ॥
तांडव नृत्य कहाँ ? यमुना के तट पर जानें।
यों लक्ष्मी-गिरिजा में हँसी हुई मृदु, मानें ॥

यहाँ लक्ष्मीजी के प्रश्नों के टेढ़े उत्तर पार्वतीजी ने दिये। इस स्थान पर 'भिक्षुक' 'वृषपाल' और 'नृत्य' इन तीनों शब्दों के स्थानों पर शब्द बदल देने पर भी वक्रोक्ति बनी रहती है। अतः यह अर्थ वक्रोक्ति है।

काकु-गर्भित—

(क) कहते हो, हम गोर हैं, करें न काला कार।
सच है, हत्याकाण्ड बहु काले का व्यापार ॥

(ख) भिड़ी अहो ! सरकार, गाँधी सत्य-स्वरूप से।
जीतेगी वह यार ! सत्य अबल है ही सदा ! ॥

---

१. "अलंकार-मञ्जरी" में दिये गये उदाहरण के आधार पर रचित।

(ग) हिंसक-रूप अनूप, हिंसा मेरा प्रबल बल।
क्यों न अहिंसा-रूप, अरि को अरे! हनो भला? ॥

(घ) जबतक गाँधीजी रहे, रहा सभी कुछ ठीक।
नल-बल हटते ही, हुए नेता विचलित-लीक[१] ॥
नेता विचलित-लीक हुए, कुछ इने-गिने तज।
अपने रज में मिले, किया भारत को भी कज ॥
त्यागी वीरों की जब ऐसी दशा भयानक।
अपर-सुधारेंगे, सुन जी बहलावें जबतक ॥

यहाँ "अपर सुधारेंगे" में काकु वक्रोक्ति है।

६७. स्वभावोक्ति

किसी वस्तु का यथावत् वर्णन स्वभावोक्ति है। मनुष्य, पदार्थ और प्रकृति सबों की स्वाभाविक छटाएँ इसके क्षेत्र हैं। यह दो प्रकार की होती है जिनमें पहला तो यह है और दूसरा है प्रतिज्ञा अथवा प्रण-बद्ध उक्ति।

New Delhi; June 14

१. The Congress President, Mr. Sanjiva Reddy, Today, announced the appointment of a panel to enquire into the charges of misuse of authority by responsible Congress members. Congress Ministers of the Central and State Governments and Congress Members of Parliament and State Legislatures will, henceforth, be required to submit to him annual statements of their assets, incomes, and expenditures. The aforesaid decisions were taken by the Congress Working Committee at Poona.

(Searchlight, 15-6-60)

यथावत् वर्णन। यथा,

(क) कहूँ स्वभाव, न अपनो कुछ मैं करूँ बड़ाई।
रखूँ सत्य को सतत, न चिंता मरूँ लड़ाई॥
त्यों ही अहो! अहिंसा मेरा जीवन-धन है।
बसें प्राण इसमें मम यह मेरा जीवन है॥

(ख) मेरा है विश्वास अचल यह अटल नहीं टलने को।
जग का सारा जीवन जीवन एक, य नहीं अनेकों॥
जीवन का है नियम प्रेम, जो जीवन का निर्माता।
हिंसा औ अन्याय, घृणा का प्रेम एक है हाता[१]?॥

यह गाँधीजी द्वारा प्रेम का महत्त्व-वर्णन है।

(ग) [२]बहु काल बीते, बुद्धि-हृदय ने गहा मम—
सत्य ईश का है सर्वश्रेष्ठ नाम और गुण।
पहचानूँ सत्यको मैं ईश-नाम राम से, हाँ,
घोरतम दुःख में किया, करे यह रक्षण॥
कह सकता हूँ, होठों पर न यदपि राजे,
राम नाम चौबीसो घंटे बिराजे मम मन।
त्राता मेरा रहा है सदा ही यह सर्वदा औ
जीवन-आधार यह मेरा आपदा-हरण॥

---

१. हंता, नाश करनेवाला।

२. Though my reason and heart long ago realized the highest attribute and name of God as Truth, I recognise Truth by the name of God Rama.

(घ) ईश में विश्वास और प्रार्थना परम दृढ़
व्रत मम अटल, न टलने को है कभी।
टूक-टूक होऊँ तो भी, ईश देगा बल मुझे,
करूँ अस्वीकार न उसे, कहूँ सो है, अजी ! ॥
पवन ओ पानी विना रह सकता हूँ, पर
उसके विना न रह सकता हूँ क्षण भी।
नयन निकालें, नाक काट डालें, मरूँ न मैं,
विश्वास को घालें, मर जाऊँ मैं तुरंत ही ॥

(ङ) दीन-दुखियों के प्रति अतिशय प्रेम मम
जन्म भर, आरंभ से ही, रहा विराजता।
उनमें ओ अपने में भेद नहीं जाना रंच,
भाव एक सम ही सदा रहा है भ्राजता ॥
मुसलमानों से मम प्रेम उतना ही मित्र !
जितना है हिन्दुओं के प्रति यह गाजता।
उर चीर सकता तो पाते वाँ न भिन्न थल,
पाते एक थल ही युगल[1]-रूप राजता ॥

In the darkest hour of my trial that one Name has saved me, and is still saving me......I may even say that the word is in my heart, if not actually on my lips, all the twenty-four hours. It has been my Saviour, and I am ever stayed on it.

—Gandhi

(Light of India by Desh Pande, p. 38)

रामनाम तुलसी को जीवन आधार रे—विनय पत्रिका।

१. हिंदू-मुसलमान।

(च) चाहूँ[१] जीना नहीं सर्प की भी हत्या कर।
चाहूँ काटे-मारे मुझे, न मैं मारूँ पर॥

(छ) [२]नेता निश्छल राजनीति सुठि का, ज्ञाता बड़ा था सखे!।
योद्धा था विजयी, प्रयोग बल से भारी घृणा थी उसे॥
प्रज्ञा-पूर्ण, दली स-प्रेम उसने योरोप की क्रूरता!
आगे जा किसको प्रतीति, नर सो भू पै रहा घूमता?॥

(ज) [३]की बैलगाड़ी पर कहीं की आपने यात्रा सखे!।
छः सात कोस चले गये ये मार्ग जब आराम से॥
देखा अचानक बैल के कंधे भयानक घाव है।
बोले बहुत उस बैलवाले के अदय दुर्भाव पै॥
उतरे तुरत उस बैलगाड़ी से व्यथित अति जी जले।
आये वहाँ ये लौट कर पैदल जहाँ से थे चले॥
पैदल प्रयाण किया पुनः उस ठाम को, संकट लिया।
अनजान में भी पाप का यों घोर प्रायश्चित किया!!॥
यह गाँधीजी के अलौकिक पशु-प्रेम का वर्णन है।

---

१. I do not want to live at the cost of the life even of a snake. I should let him bite me to death, rather than kill him.

—Gandhi
(A Gandhi Anthology, BK I, p. 47)

२. वर्तमान् युग का सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक ईंस्टीन का गाँधीजी की मृत्यु पर यह कथन है। इन्होंने हिटलर के अत्याचार से पीड़ित हो अपनी जन्म-भूमि जर्मनी छोड़कर अमेरिका में जाकर शरण ली थी।

३. कलकत्ते के "अमृत बाजार पत्रिका" ने इस बात की भूरिशः प्रशंसा की थी।

(झ) [१]एक पैर में ही पहले आकर के चपका।
अपर पैर पर, पीकर खून, पुनः वह लपका ॥
पीकरके ही खून पेट भर खोटा खसका।
पीने दिया, लिया न पैर को तिल भर घसका ॥
रहे रात भर दर्द औ ज्वर से भी बेचैन हा!
दिया खून गाँधी, न पै किया खून उस जीव का !!!

(ञ) जन्म है नीच महा पर कर्म अलौकिक है जनको अति भाते।
साटे रहो अपने उर में नित ही, छन एक कभी न हटाते ॥
औ तुम भी नित धारे रहो, अपने उरमें कटु कील ठुकाते।
कागज और दिवाल! तुम्हीं बस गाँधी के भक्त अनन्य लखाते ॥

यह कागज पर छपे और दीवाल में गड़े गाँधीजी के चित्र का यथावत् वर्णन है। कागज उसे एकदम कलेजे में साटे रहता है और दीवाल अपने कलेजे में काँटी ठुका कर उसे टाँगे रहती है। इस प्रकार निर्जीव होते हुए भी ये गाँधीजी के सजीव और अनन्य भक्त हैं।

(ट) [२]आकांक्षा थी होऊँ संस्कृत वा सुगणित का।
प्राध्यापक, यों लहूँ सौख्य औ शांति अमित, हाँ ॥

---

१. १५. ८. ४८ को राँची जिला स्कूल में व्याख्यान देते हुए बिहार के तत्कालीन लाट महामान्य श्री जयराम दास दौलतरामजी ने कहा था कि गाँधीजी और हम दोनों एक ही जेल में थे और हमारे सामने ही यह घटना घटी थी।

२. I wished to be a Professor of Sanskrit, or Mathematics and, thus, to pass my days, peacefully. But I consider it a luxury so long as my country is enchained.
—Tilak

किंतु देख भारत-माता को कटु बंधन में।
उचित विलास न मम यह, उसके इस क्रंदन में।।

अपने संबंध में लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक का यह कथन है जो उनके स्वभाव का परिचायक है।

(ठ) [1]आध्यात्मिकता का कुछ मुझ में है, पर मैं न
प्रेरित हूँ, जिनसे हों प्रेरित धार्मिक नर।
प्रेरित प्रबल रूप से हुआ मैं गाँधीजी से,
किंतु वह प्रेरणा न धार्मिक आधार पर।।
प्रति धर्म की जो आधा दरजन प्रार्थनाएँ
आपको सुनाई जातीं, उनका नहीं असर।
किया प्रभावित मुझे उनकी मानवता ने
और काम किया जो उन्होंने इस भूमि पर।।

यह प्रधान मंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरूजी के ही वचनों में उनके स्वभाव का चित्रण है।

---

१. I have some thing of spirituality in me, but I am not moved by things that move men of religion. I was powerfully moved by Mahatma Gandhi, but not on the religious plane, on the plane of half a dozen prayers being recited to you of every religion. What impressed me was the man, and the work he did.

—Jawaharlal Nehru

(while laying the foundation—stone of Gandhi Bhavan in Delhi University.)

(Searchlight—19. 12. 59.)

(ड) [1]टूट सकूँ मैं, पै गाँधी संग काम करते जो
बीस-तीस साल से भी अधिक समय से।
शिर और शरीर के रग-रग बीच मेरे
प्रविष्ट हुए सु-उपदेश जिस रूप के॥
अनुसार उनके विरुद्ध और शत्रु सम
मानसिक भाव मुझे चाहिये वरजने।
पर जिस वस्तु को धरा है मैंने दृढ़ता से
उसका कभी भी नहीं परित्याग सपने॥

यह भी नेहरूजी के शब्दों में ही उनके स्वभाव का चित्रण है।

(ढ) अरे मनुष्य! महान तू निजको नित्य बखान।
ध्यान न अखिल जहान की तू ही अनहित-खान!॥
तूही अपनी जाति का है आराति प्रधान!।
तूही अपने वंश का रावण-कंस सुजान!॥
तूही अपने मूल का कठिन, कठोर कुठार!।
तूही अपने कूल की धारा घोर अपार!॥
तूही अपने प्रलय का कारण एक विशाल।
तूही अपने मलय का है अरि इन्द्र कराल॥

---

१. I may break-but the style of lessons, which were pushed into my head, and every fibre of my body for over 20 or 30 years, while working with Gandhiji, was to try to avoid a hostile and inimical approach of mind, but never to surrender any thing to which I hold firm.
—Jawaharlal Nehru (Indian Nation--6. 11. 59.)

तूही पाप - पयोद है, तू पयोधि - पाखंड ।
तूही शत्रु-प्रमोद है, तू अघ-रूप अखंड ॥
तूही शांति-सरोज हित, शुभ्र शशांक समान ।
तूही क्रांति कठोर का है कटु तीर-कमान ॥
तूही बांधव-वनज का नीच निंद्य नीहार ।
तूही निज जन जलज का है गजराज, निहार[१] ॥

—मनुष्य-सतसई

यह मनुष्य-स्वभाव-का चित्रण है ।

(ख)[२] है नहीं हृदय राज्य-कामना । स्वर्ग वा मृदुल मुक्ति भावना ॥
दुःख-तप्त-जन वेदना-व्यथा । नाश में सकल स्वार्थ सर्वथा ॥
[३]सर्व हों अति सुखी दयानिधे ! सर्व हों निरुज हे कृपानिधे ! ॥
सर्व मंगल लखें सदा सभी ! एक भी न दुख को लहे कभी ! ॥

---

१. (a) Men are, in general, so tricky, so envious, and so cruel that when we find one, who is only weak, we are happy. —Voltaire

(b) What man has done of man—Wordsworth

(c) Broadly speaking, the greatest danger has always been man's stupidity.

—Jawaharlal Nehru
(at the Press Conference in London, on 1.-5-60)

२. न त्वहं कामये राज्यं स्वर्गं नापुनर्भवम् ।
कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्त्तिनाशनम् ॥

—भगवान् बुद्ध

३. सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखभाग्भवेत् ॥

[1]सर्व प्राणि-समुदाय के प्रभो ! सर्व संकट-सुकष्ट को विभो ! ॥
नित्य ही हम अहो ! हरे ! सहें । विश्व की गहन वेदना गहें ! ॥

यह महात्माओं के स्वभाव का वर्णन है।

(२) प्रतिज्ञा-बद्ध वर्णन—

(क) लौटूँगा साबरमती नहीं, अजी ! लो जान।
जबतक लूँ न स्वतंत्रता, चाहे जावे जान ॥

(ख) इन बातों से गुनें न, मेरे मनमें उगी अबलता आय।
युद्ध रहेगा जारी, कोई कैसा ही कुछ करे बिजाय ॥—दं० या०

(ग) मेरे लिये न फिरना, साथी एक रहें वा कई हजार।
मरूँ मौत कुत्ते की, चूसें कुत्ते मेरी अस्थि असार ॥
पर मैं होकर विफल न लौटूँगा आश्रम को जानें आप।
प्रण है यही प्रतिज्ञा मेरी, सहूँ न कितना भी संताप ॥ —दं०या०

(घ)पुनः उन्होंने कहा, "न जबतक नमक-नियम तोड़ूँगा तात !॥
जबतक नहीं स्वराज्य लहूँगा, लौटूँगा आश्रम न सुभ्रात ! ॥"

(ङ) पक्का है कर लिया इरादा, है जितनी मुझ में सामर्थ्य।
सभी लगा दूँगा सु-अहिंसात्मक इस रण में कहता सत्य ॥—दं०या०

ये सब गाँधीजी की प्रतिज्ञाएँ हैं।

(च) धरती पर मैं नहीं डरूँगा कभी किसी से।
सदा डरूँगा मैं बस केवल ईश्वर ही से ॥
नहीं किसी प्राणी के प्रति दुर्भाव रखूँगा।
नहीं किसी का किया कभी अन्याय सहूँगा ॥

---

१. महाभारत के एक श्लोक का अनुवाद।

नित असत्य पर सत्य से, विजय लहूँगा सौख्य-निधि ।
और असत्य-विरोध में, कष्ट सहूँगा सर्व विधि ॥

महात्मा गाँधी का आदेश है कि यही प्रति दिन, प्रातःकाल में, हमारी प्रतिज्ञा होना चाहिये[१] ।

(छ) बोले वह, "आरंभ कार्य का हुआ न अब मुड़ना है तात !"
—दं०-या०

यह श्री वल्लभभाई पटेल का प्रण है ।

(ज) हम अहमदाबाद के जन यों करते हैं यों शपथ पुनीत ।
जावेंगे हम उसी मार्ग, वल्लभ भाई हैं गये अभीत ॥
बिना देश को पूर्ण स्वतंत्र किये हम लेंगे जरा न चैन ।
सत्य-शांति से ही यह संभव, यह विश्वास हमें दिन-रैन ॥
—दं० या०

साबरमती नदी के बालू पर गाँधी जी के सम्मुख पौन लाख जनों ने यह शपथ ली थी । यह दंडी-यात्रा का प्रसंग है ।

---

१ Begin your day with prayer...Let our first act, every morning, be to make the following resolve for the day—

I shall not fear anyone on earth.
I shall fear only God.
I shall not bear ill-will towards anyone.
I shall not submit to injustice from anyone.
I shall conquer untruth by Truth.
And in resisting untruth I shall put up with all suffering.

—Light of India, pp. 136-7

(क) देखो चीनी अत्याचार। मधुर नाम, अति कटु व्यवहार ॥
है विषकुंभ पयोमुख चीन। भारत-वसुधा किये अधीन ॥
कहीं साधुता में भी दोष। बनती यह अवगुण का कोश ॥
गुनें इसे जन निर्बल-बाहु। वक्र चंद्र को ग्रसे न राहु ॥
नेहरू के हैं हम अनुगामी। जाने यह वह अन्तर्यामी ॥
सूई-नोक बराबर भी याँ। देंगे वसुन्धरा न कभी, हाँ ॥
लिखा खून से यह प्रस्ताव। रक्खा छात्र-जनों का आब ॥
दौड़ रहा भारत का खून। छात्र नहीं क्यों दें निज खून ?[१] ॥

९८ भाविक

भूत अथवा भावी अथवा दोनों के भावों का प्रत्यक्ष की भाँति वर्णन भाविक अलङ्कार कहलाता है।

(१) भूत—

याँ पर साथ रहे उनके बहु काललों, याँ उनके सँग घूमे।
याँ उनके सँग बातें हुईं रँग-रंग की, याँ उनके सँग झूमे ॥

१ दिल्ली, बेगूसराय, मोतीहारी और आरा के बहुत से छात्रों ने अपने खून से लिखकर यह प्रस्ताव पास किया कि हम नेहरू जी के साथ हैं और अपने प्राण देकर भारत-भूमि को अपहरण करनेवाली चीन से भूमि छीन लेंगे।

Over two hundred students of Arrah signed their pledge in blood on separate pieces of paper, assuring Prime Minister Nehru of their resolve to lay down their lives for defending the honour of the motherland against the Chinese aggression.

—Searchlight, 23-11-59

देखके स्थान सभी उर म्लान, बहे दृग धार व जी अति घूमे।
जान पड़े हियमें तो यही, प्रिय गाँधीजी आ रहे हैं इस भू पै ॥

यह एक अनन्य सहयोगी और प्रेमी का भावोद्रेक है। गाँधीजी के पदार्पण किये किसी स्थान विशेष को देखकर यह भावना उठ रही है कि इस स्थान पर वे आ रहे हैं।

(२) भावी—

(क) शुभ्र अहिंसा सुगुण को नारी जन समुदाय।
कैसे पालेगा लखो उसे आज सुख पाय ॥

(ख) आन्दोलन समाप्त करने के पहले ही निजको, लें मान।
पायेँगी बंदी-गृह में, आहत हो अपमानित वे मान्य ॥
आहत होना औ सहना अपमान मान की होगी बात।
इन कष्टों से शीघ्र देवियाँ जानें, लक्ष्य सिद्ध अवदात ॥

(ग) बहादुरी के साथ और निश्चयता - पूर्वक।
कहता हूँ मै बात, नहीं कुछ भी इसमें शक।
जब लों मुट्ठी भर भी नर निज प्रणके सच्चे।
रणका केवल एक अंत है—जय को पहुँचे ॥

ये तीनों वचन गाँधीजी के हैं।

(घ) याँ पर की थी सु-प्रिय प्रार्थना, भव-भय-भंजन भारी।
दी थी वर वक्तृता, सूक्ति थी विशद, सुधोपम न्यारी ॥
किया यहाँ पर ही था मैंने चरण-स्पर्श सुखकारी।
भीड़ निरख याँ पर उर आवे, आने को अघहारी ॥

(ङ) इस कलिमें सु-पूज्य हरिश्चंद्र। जो दशरथ अकथ सुकीर्ति मंद्र॥
जो युधिष्ठिर, धर्मराज रूप। साक्षात सत्य के ही स्वरूप॥
उन गाँधी की गुरु-गंध-ग्राम। अनुपम, विक्रममय, पुण्य-धाम॥
अस्थि-धारण-सदीप्सा[1] अशेष। उठती होगी मानस नगेश[2]!॥

पाण्डवों के स्वर्गारोहण पर अर्थात् हिमालय में गलने के लिए जाने पर हिमालय को अन्य पाण्डवों के साथ धर्मराज युधिष्ठिर की अस्थि धारण करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। तो यहाँ कहना यह है कि गाँधीजी के संबंध में भी यही हुलास हिमालय के हृदय में उठता होगा।

(३) भूत और भावी—

हाँ, शूर-वीर वसुंधरा पर तो हुए अनगिनत हैं।
बहु अस्त्र और सु-शस्त्र धारी, कीर्ति जिनकी अमित है॥
है युद्ध भी जीता, रहा जो महा घोर, कठिन सही।
जीते महारण हो निरस्त्र, हुआ न होने को मही॥

६६ भाविक छवि

किसी दूरस्थित वस्तु का प्रत्यक्ष की भाँति वर्णन भाविक-छवि है। यथा

याद रहे, स्वराज्य में, आशा है, नर नीच जातिका शुभ्र।
बने राष्ट्रपति, बने देश का भाग्य-विधाता सो अति भद्र॥

यह वचन गाँधीजी का है। —दं० या०

---

१ पवित्र अभिलाषा २ हिमालय।

१०० उदात्त

जहाँ अतिशय समृद्धि का वर्णन होता है अथवा जहाँ किसी महापुरुष का चरित्र वर्णनीय वस्तु का अंग होता है वहाँ उदात्त अलङ्कार माना जाता है।

(१) अतिशय समृद्धि। यथा,

(क) भारतके वर विभवपर जो देता था दृष्टि।
फीकी लगती थी उसे स्रष्टा की सब सृष्टि॥

(ख) राजे औ सेठ सुजन जहाँ एक से एक राजें।
रात्री में भी दिवस इव ही ज्योति-जाज्वल्य भ्राजे॥
लक्ष्मी का हो सदन यह ज्यों सर्व समृद्धि छाजे।
दिल्ली-शोभा अमरपति भी देख के चित्त लाजे॥

(ग) प्रिय दिलीप[1] भी आज, सकुचाते होंगे अहो!।
लख दिलीप[2] के ताज[3], दिव्य दीप्ति चारो दिशा॥

(२) महापुरुष का चरित्र। यथा,

(क) ब्रह्मा तप-बल से ही सिरजते सृष्टि यह,
विष्णु तप-बल से ही पालते जगत को।
शंभु तप-बल से ही करते संहार जग,
तप-बल महिमा है अगम, अमित सो॥

---

१ सूर्यवंश के परम प्रसिद्ध अयोध्याधिराज।

२ दिल्लीपति अर्थात् भारत के राष्ट्रपति।

३ नायकत्व; राष्ट्रपतित्व।

तप - बल वही था विराजता महातमा में,
अमल, अचल, अविरल औ अजित जो।
शासन विदेशी का संहार उनने किया औ
की स्वराज्य - सृष्टि शुभ, जगत विदित जो ॥

(ख) राम-राज्य का अर्थ यदि करना चाहें ज्ञात।
तुलसी-रामायण पढ़ें गुनें तत्त्व अवदात ॥
गुनें तत्त्व अवदात भखा तुलसी ने जैसा।
त्रिविध ताप को अजी! न जनता जाने कैसा? ॥
अबुध, अधर्मी नहीं दीन कोई रुज-ग्राम।
गाँधी का था यही भाव, राजें उर राम ॥

गाँधीजी के "राम-राज्य" का आधार तुलसीकृत रामायण में वर्णित रामराज्य है। महापुरुष का संबंध होने से यह द्वितीय उदात्त हुआ।

(ग) [1]धान-खेत में घूम रहे थे आप एक दिन।
देखी नभ वक-पाँति एक उड़ते शोभन घन ॥

---

१. While he was seven years old, one day he was walking through a paddy-field. Then, in the far away horizon, he saw a flock of snow-white cranes flying. In the cloudy sky it presented a beautiful scene. Though a small boy, he was deeply immersed in the greatness of creation. Suddenly, he fell into meditation. He fell down unconscious.

—Jaybee
(Life of Sri Ramakrishna, Searchlight, 8-11-59.)

सृष्टि-महत्ता-मग्न हुए ध्यानावस्थित अति।
होकर संज्ञा-शून्य गिरे पुनि तत्क्षण ही क्षिति ॥
यह सात वर्ष की उम्र में रामकृष्ण-अविरल-दशा ! ।
हे राम-कृष्ण ! जन की दशा पलटो, नास्तिकता नशा ! ॥

(घ) [1]गाँधीजी के कहने पर वर्धा में जाकर ।
खोला आश्रम एक, ख्याति फैली जिसकी वर ॥
गाँधीजी ने लिखा उन्हें तब, "अपर नहीं नर ।
जानूँ, जो हो तुम सम उत्तम, अहो ! मनुज-वर !" ॥
भावे ने फाड़ा तत्क्षण इस पत्र-प्रवर को ।
जिसमें नहीं इसे हो झाँके दर्प [2]प्रखर सो ॥
उन्हें पसंद नहीं थी निज कृति की प्रसिद्धि लव ।
पिघल रहा था 'आइस क्रीम' इव उनका स्वत्व ॥

---

१. Gandhiji deputed Vinoba for running a similar type of Ashram at Vardha. This was a responsible and serious assignment, which he conducted to the best of his abilities, and within a very short time, this new Ashram became a centre of attraction for all those, who were interested in Gandhian movement. Gandhiji wrote in this connection, "No body is so sublime in my knowledge as yourself." Vinoba immediately tore this letter, so that vanity might not peep through this window of appreciation. He did not like any publication of his work. His self was, now, gradually melting as an ice-cream in a plate.

—S. R. Ayde
(Searchlight, 8-11-59)

२. तीव्र; खच्चर; कुत्ता

१०१ अत्युक्ति

शूरता तथा उदारता आदि का नितांत असत्य वर्णन अत्युक्ति है। यथा,

(क) गाँधी की समुदारता छण-छण बढ़ती देख।
ब्रह्माजी पछता रहे, अंतरिक्ष लघु पेख॥

दूसरी गोलमेज सभा के समय कोरे कागज पर दस्तखत करके उसे जिन्ना साहिब के हवाला करने की मुस्तैदी आदि अपूर्व उदारता से अभिप्राय है।

(ख) दिन दूनी, निशि चौगुनी, गाँधी-सुयश-प्रसार।
बैठा है इस कमल पर मधुकर गगन अपार॥

१०२ निरुक्ति

यौगिक शक्ति द्वारा किसी नाम का व्युत्पत्ति-युक्त अर्थ करना निरुक्ति है। यथा,

(क) मोहे हो संसार को इससे मोहन नाम।
दास जगत के इसलिये दास नाम अभिराम॥

(ख) करमचंद कहते तुम्हें, हो शीतलता-धाम॥
करम तुम्हारे चंद सम, शोभन, सुखद, ललाम॥

(ग) गाँधी कहता है तुम्हें अजी! सकल संसार।
[1]गंधवाह के सरिस ही तव सुगंध-व्यापार॥
तव सुगंध-व्यापार जगत में अद्भुत सोहे।
सुमनों से भी बढ़कर यह जन-मन को मोहे॥

---

१. पवन

[१]वायु-विमुख बहती न सुमन की गंध कभी भी।
तव धर्मज सौरभ बहता सब ही दिशि गाँधी ! ॥

(घ) सचमुच दिल दरियाव थे तुम गाँधीजी ! अहो !।
बहता तव दिल आब था सुर-दरिया का सदा ॥

(ङ) नेहरू को नेहरू कहें समझ-बूझ अति स्नेह।
बसता इनकी रूह में अखिल जगत का नेह ॥

(च) विभव-विटप की तू सदा सुखद, विशद वर खाद।
'खादी' इससे ही तुझे कहते, लहते स्वाद ॥

(छ) सिंधु पार देती भगा भारत-विपद खदेर।
'खद्दर' इससे ही तुझे कहते सुजन घनेर ॥

(ज) करता है तू [२]खदिर सम परम मनोहर रूप।
'खद्दर' इससे ही तुझे कहते दिव्य-स्वरूप ! ॥

(झ) पतरापन को दूर कर मोटा परम बनाय।
'मोटिया' इससे ही तुझे कहते नर हर्षाय ॥

१०३ प्रतिषेध

प्रसिद्ध निषेध का पुनः निषेध प्रतिषेध है। यथा,

(क) जानो मुझे न निपट मनुज, मैं मनुज कैसा दूँ बता।
तुम दनुज-कुमुद-निमित्त हूँ मैं भानु, देता हूँ जता ॥

---

१. वाति गंधः सुमनसां प्रतिवातं कथञ्च न।
धर्मजस्तु मनुष्याणां वाति गंधः समन्ततः ॥
—वाल्मीकीय रामायण

२. चंद्रमा

मैं भगत सिंह न राजगुरु, फाँसी जिन्हें लटका दिये।
तव चंड कटु भुजदंड हित मैं कालदंड गुनो हिये॥

गाँधीजी का आक्रमण साधारण मनुष्य के आक्रमण के सदृश नहीं है। फिर इसका यहाँ निषेध किया गया है। इसमें भगत सिंह आदि को तो तूने सहज ही फाँसी पर लटका दिया पर गाँधीजी तेरे लिये काल-रूप हैं। यह अर्थान्तर-गर्भित है और यही इस अलङ्कार के अलङ्कार माने जाने का कारण है।

(ख) मेरा प्रभाव न यह अजी! न असत्य कहता हूँ जरा।
है सत्य का ही बल-प्रताप य जो रहा तुमको जरा॥
यह है न बल मेरा, कृपा कर बात यह तुम मान लो।
यह है अहिंसा का महा विक्रम-पराक्रम जान लो॥

(ग) फूँक-फूँक कर पग धरो, यह न देश है और।
है यह भारत राम का, अर्जुन का हे [1]गौर!॥

१०४ विधि

सिद्ध वस्तु का विधान विधि नाम से प्रसिद्ध है। यथा,

(क) राम-कृष्ण-संतान तब राम-कृष्ण-संतान।
रावण-कंस कदन करें इस रण के मैदान॥

यहाँ राम-कृष्ण-संतान में राम-कृष्ण-संतान का विधान किया गया।

(ख) भारत यह भारत तभी, जब निज शक्ति अमोघ।
दानव-दल को दलन कर, दले महा अघ-ओघ॥

---

१. अंग्रेज

(ग) गाँधीजी गाँधी तभी दुखकी आँधी घोर।
टार, निरज नभ को करें, दें आनंद अथोर ॥
(घ) नेता नेता तब अजी! हो अनीति से शून्य।
निज को, जन को ले चले, नीति-मार्ग अनुगम्य ॥
(ङ) सत्य अरे! आरूढ़ हो इंगलैंड के शीश।
भारत-सत्य! कँपा दिया जिसने आसन-ईश ॥

१०५ हेतु

हेतु दो प्रकार का होता है—(१) कारण और कार्य का एक साथ वर्णन और (२) कारण और कार्य में अभेद का वर्णन।

(१) कारण और कार्य का एक साथ वर्णन—

(क) गाँधीजी का उदय यह, अरुणोदय संचार।
स्फुट भारत-अंभोज यह, लह आनंद अपार ॥
(ख) गाँधी-शुभ्र-प्रकाश यह, सबको दे आनंद।
थे उलूक जितने यहाँ, हुए सभी अति मंद ॥
(ग) धर्म-स्थापना के लिये, करने दूर अधर्म।
गाँधी का अवतार यह, देने को नय-धर्म ॥
(घ) दुर्जन-गण का निर्दलन करने सज्जन-त्राण।
भारत में यह अवतरे स्वयं विष्णु भगवान ॥

(२) कारण और कार्य में अभेद का वर्णन—

(क) गाँधी करते प्रार्थना, कहते हैं कर जोड़।
स्वतंत्रता है प्रभु-कृपा, सुख पदपंकज-क्रोड़ ॥

(ख) दुख है प्रभु की अकृपा, दावानल सम घोर।
रहते इसके विफल हैं कोटि यत्न सब ओर॥

(ग) भिषज और भेषज परम औ रुज-रोग-निदान।
करुणा-निधि गाँधी तुम्हीं, सुख औ स्वास्थ्य निधान॥

(घ) मसजिद की मसजिद अमल, तू ही भारत अंब!।
मंदिर का मंदिर विमल तूही री जगदंब!॥

१०६ अनुकूल

प्रतिकूल आचरण से अनुकूल अर्थ की सिद्धि अनुकूल अलङ्कार है। यथा,

उसने हिंसा से लिया पूरा-पूरा काम।
किंतु अहिंसा से हुआ उसका काम तमाम॥
उसका काम तमाम हुआ, हिंसा-वारण कर।
पूर्ण अहिंसा का व्रत शोभन, शुभ्र ग्रहण कर॥
हिंसा कैसी है जघन्य यह माना उसने।
और अहिंसा का प्रभाव क्या, जाना उसने॥

१०७ अनुमान

साधन देखकर कार्य का ज्ञान करना अनुमान अलङ्कार है। यथा,

(क) देख रहा जो हूँ छटा, लटा जा रहा राज्य।
घटा जा रहा शत्रु है, गुनूँ मिलेगा राज्य॥

(ख) देख रहा जो देश की गति-मति-विकृति आज।
इससे पड़ता देख है, रहने को न स्वराज॥

हेतु तीन प्रकार का होता है—निष्पादक, समर्थक और ज्ञापक। काव्यलिंग में हेतु निष्पादक अर्थात् कही हुई बात को सिद्ध करने वाला होता है और अर्थान्तरन्यास में समर्थक। इस प्रकार कार्य-कारण संबंध में काव्यलिंग होता है और सामान्य-विशेष-संबंध में अर्थान्तरन्यास। अनुमान में हेतु ज्ञापक अर्थात् ज्ञान दिलाने वाला होता है।

१०८ गाँधी अलङ्कार[१]

जिस वर्णन में देश की स्वाधीनता की गंध हो वह गाँधी अलङ्कार है। इसके तीन भेद हैं—

१. स्वाधीनता-साधन-विषयक अर्थात् जिसमें स्वाधीनता-विषयक किसी साधन का वर्णन हो।

२. स्वाधीनता-विषयक अर्थात् जिसमें स्वाधीनता-विषयक-उदात्त भावों का वर्णन हो। और

३. स्वाधीनता-संरक्षण-विषयक अर्थात् जिसमें स्वाधीनता-संरक्षण-विषयक भाव हों।

१. स्वाधीनता-साधन-विषयक। इसके तीन भेद हैं—(१) सत्य-प्रधान (२) अहिंसा-प्रधान और (३) एकता-प्रधान।

(१) सत्य-प्रधान। यथा,

---

१. विस्तृत वर्णन के लिये 'निवेदन' देखिये।

(क) [1] सूर्य सत्य-बल तप रहा, सुधा चंद्र बर्साय।
अमृत निःसृत सत्य-बल, लोक सत्य पर छाय ॥

(ख) [2] जिससे जग के सृष्टि और स्थिति और प्रलय हों ॥
जिसके विषय महाकवि कोविद बुद्धि विलय हो ॥
रवि-कर जलका, जलमें स्थल, स्थल में जलका ज्यों।
जिसकी सत्ता से जग मिथ्या सत्य लसे यों ॥
अपने प्रकाश से सर्वथा माया-मुक्त रहे सदा।
उस परम सत्य-वपु ईश का करते ध्यान हृदय मुदा ॥

(ग) [3] नहीं सत्य-निष्ठा लहे, मनुज पुण्य अति अल्प।
प्रभु-दर्शन का सुभग फल, हो सुसत्य-संकल्प ॥

(घ) ईश सत्य अखंड की हलकी झलक मुझे
मिली है औ मेरे मन में विश्वास यह हाँ।
दिन-दिन बढ़ता है जा रहा कि केवल सो
सत्य है औ अपर सकल है असत्य याँ ॥

---

१. सत्येनार्कः प्रतपति सत्येनाप्यायते शशी।
सत्येनामृतमुद्भूतं सत्ये लोकः प्रतिष्ठितः ॥
—वाल्मीकीय रामायण

२. जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थेष्व भिज्ञः स्वराट्
तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत्सूरयः।
तेजो वारिमृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसर्गोऽमृषा
धाम्ना स्वेन सदा विरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि ॥
—श्रीमद्भागवत, आदि श्लोक

३. कं वृणों नु वरं भूमन् वरं त्वद्वरदर्शनात्।
यद्दर्शनात् पूर्णकामः सत्यकामः पुमान् भवेत् ॥
—श्रीमद्भावगत, स्कंध १२, अ० १०, श्लोक ३३

सत्य की जो क्षणिक झलक मुझको मिली है,
वह उस सत्य की अवर्णनीय ज्योति का।
करा सकती है अनुमान सु-कठिनता से,
दृश्यमान सूर्य से जो प्रखर लाखों गुना॥
प्राप्त की है मैंने जो यथार्थतः मित्रवर,
वह उस प्रबल प्रकाश की अत्यन्त ही।
हलकी झलक है, मैं अनुभव करता हूँ
ताप और धूप प्रभु की समुपस्थिति की[1]॥

धन्य महात्मा गाँधी जिन्होंने श्रीमद्भगवद्गीता (अध्याय ११, श्लोक १२) के इस कथन का यत्किञ्चित् साक्षात् अनुभव प्राप्त किया—

दिवि सूर्य सहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता।
यदि भाः सदृशी सा स्यात् भासस्तस्य महात्मनः॥

(ङ) प्रभु के नाम अनंत हैं, पर यदि ढूँढ़ूँ एक।
तो वह केवल सत्य है, ईश सत्य अतएव॥

---

१. I have had faint glimpses of the Absolute Truth God, and daily the conviction is growing upon me that He alone is real and all else unreal. The fleeting glimpses that I have been able to have of Truth can hardly convey an idea of the indescribable lustre of Truth, a million times more intense than that of the Sun, we daily see with our eyes. In fact, what I have caught is only the faintest glimpse of that mighty effulgence. I feel the warmth, and sunshine of His presence. —Gandhi

(Light of India, page 57)

(च) [१]सर्वेश्वर भगवान, सत्य-रूप में मित्रवर ! ।
धन अनमोल महान, रहा सतत मेरे लिये ॥

(छ) सत्य-मार्ग को सेव कर, रह असत्य से दूर ।
साधूँ शुचि स्वाधीनता, बिना सत्य सो धूर ॥

(ज) खोकर सत्य न चाहता, लेना सुखद स्वराज्य ।
सत्य रहे तो आ सके देव-लोक का राज्य ॥

(झ) सत्याग्रह—यह अस्त्र नहीं है दुर्बल नर का ।
है यह अस्त्र महा, महाबली, वीर प्रवर का ॥
है यह दुख की बात सु-नैतिक बल प्रशस्त जो ।
शारीरिक बल तुच्छ साथ जा भिड़े, व्यस्त हो ॥
करूँ हानि कुछ, किसी तौर वैरी का अपने ।
भाव न यह मेरे उर जगे कभी भी सपने ॥
वरन धरा के छोर-छोर तक हाँ, मैं जाऊँ ।
जिसमें उनका हित कर हिय को सुख पहुँचाऊँ ॥
वैरी प्रति दुर्भाव नहीं मेरे उर व्यापे ।
उनका दुर्गुण ही मेरे उर को अति तापे ॥
वैरी के प्रति अक्षत प्रेम सदा ही मेरा ।
उनके दुर्गुण के प्रति ही मम वैर घनेरा ॥

(ञ) [1]रामायण पढ़ कर न राम को पा सकते हैं।
गीता को पढ़ नहीं कृष्ण को ला सकते हैं॥
पढ़ने से न कुरान खुदा वह मिल सकता है।
पाठ-बाइबुल से न ख्रीष्ट-दिल हिल सकता है॥
उनके पाने का मार्ग बस, शुद्ध, समुत्तम आचरण।
है टिका धर्म पर आचरण, [2]सत्योपरि धर्माचरण॥

(ट) [3]सत्य को नहीं प्राप्त कर सके प्रिय मानव सो।
जिसमें नहीं प्रचुर मात्रा में विनम्रता हो॥

---

१. We cannot realize Rama by reading the Ramayan, or Krishna by reading the Gita, or Christ by reading the Bible ; the only means of realizing them is by developing a pure and noble character. Character is based on virtuous action, and virtuous action is grounded on Truth.

--Gandhi

(Light of India, page 141)

२ वृषश्चतुष्पाद भगवान् धर्मः सत्ये प्रतिष्ठितः

— वाल्मीकीय रामायण

नहिं असत्य सम पातक-पुंजा। गिरि सम होहिं कि कोटिक गुंजा॥
सत्य-मूल सब सुकृत सुहायें। वेद पुराण-विदित, मनु गाये॥

—तुलसीकृत रामायण

३. Truth is not to be found by anybody, who has not got an abundant sense of humility. If you would swim on the bosom of the ocean of Truth, you must reduce yourself to a zero.

--Gandhi

(Light of India, p. 140)

यदि तुम चाहो सत्य-सिंधु के ऊपर तैरें।
निज को शून्य बना देना होगा इस जग में॥
(घ) से (ट) तक महात्मा गाँधी के वचन हैं।

(ठ) [1]जप-माला औ छाप-तिलक से काम न सरता।
बाहर का आडम्बर कुछ भी काम न करता॥
मन असत्य - आगार में नहीं ईश विराजे।
सतत सत्य में अहो! सत्यनारायण आजे॥

रोड़ा ह्वै रहु बाट का, तजि पखंड, अभिमान।
ऐसा जो नर ह्वै रहै, ताहि मिलै भगवान॥
रोड़ा भया तो क्या भया, पंथी को दुख देह।
हरिजन ऐसा चाहिये, जइसा जिमीं की खेह॥ —कबीर दास

फारस का विश्व-विख्यात नौशेरवाँ बादशाह अपने को धूल से भी तुच्छ समझता था। कबीरदास जी के मत से नौशेरवाँ सच्चा हरिजन था।

प्रभु ईसा की श्रेष्ठ नीति कहती है कि जो लोग विनम्र हैं वे विजयी होते हैं। —रवीन्द्रनाथ टैगोर

1 जपमाला, छापा, तिलक सरै न एको काम।
मन काँचे, नाचे वृथा, साँचे राँचे राम॥ —बिहारी

Although there is merit in erecting a temple, turning rosary, offering prayers, and going to temple, several times a day, I, personally, believe more in clean life, and righteous action, calculated to the welfare of humanity, and I observe that service of humanity is better than simply turning rosary.

—B. P. Sinha
Chief Justice of India
(in his speech at Arrah, on 9-4-60)

(२) अहिंसा-प्रधान। यथा,

(क) विना अहिंसा के नहीं, संभव पावें सत्य हम।
सत्य हमारा ईश ओ साधन सु-अहिंसा परम॥

(ख) अहो। अहिंसा से कभी बदल सकें न स्वराज्य[१]।
इस विधि प्राप्त स्वराज्य सो सच्चा नहीं स्वराज्य॥

(ग) अजी! समानार्थक गुनूँ सत्य, अहिंसा चारु।
पेखूँ, पहुँचूँ सत्य तक एक अहिंसा द्वार॥

(घ) य अहिंसा नरका अहो! बल है सब से श्रेष्ठ।
मनुज-बुद्धि-सृत श्रेष्ठतम से भी अस्त्र सु-श्रेष्ठ॥

(ङ) विना अहिंसा के सखे! सत्य न देखा जाय।
इससे य अहिंसा परम धर्म जगत कहलाय॥

Service to suffering humanity is real worship of God, and, in this attempt, man himself rises up to be a 'devata'. —S. Radhakrishnan

सो अनन्य जाके असि मति न टरै हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर रूप राशि भगवंत॥

—रामायण

Foreigners like Megasthenes and Huien Tsang have borne testimony to the virtues of high character and integrity of the Indian people. But it is a matter of regret that conditions arejust the reverse Today in the country. At present, character is conspicuous by its absence...An ounce of practice is better than tons of theory. —S. C. Mishra
Judge, Patna High Court

१. We dare not exchange non-violence even for Swaraj. For Swaraj, thus got, will be no true Swaraj.
—Gandhi
(A Gandhi Anthology, Bk I, p. 53)

(च) हिंसा भाव न रंच भी रिपु प्रति किसी प्रकार।
परम अहिंसा से लहूँ स्वतंत्रता सुख-सार॥

(छ) जिसकी है एक ओर सत्य और अन्य ओर
अहिंसा बड़े-बड़े सु-अक्षरों में अंकित।
पर से आक्रांत जातियों का समुद्धार उस
सिक्के पर पूर्ण विश्वास पै अवलंबित॥
संशय न कोई इस में करे कभी भी कहीं,
बात यह तनिक नहीं असत्य - गर्भित।
साठ साल की हमारी अनुभूति ने हमें न
अन्य रीति सिखलाई, जो हो नित अर्जित॥

(ज) [1]हिंसा का है अर्थ नहिं दैहिक ही मतिमान!।
हैं मानसिक कुवृत्तियाँ भी इन में, लें जान॥
जानें धोखा, झूठ, फरेब, दगा आदिक जो।
अनुचित, दूषित साधन, सब हिंसा भीतर सो॥

---

१. Himsa does not merely mean indulgence in physical violence; resort to trickery, falsehood, intrigue, chicanery, and deceitfulness—in short, all unfair and foul means come under the category of himsa, and acceptance of ahimsa, necessarily, implies renunciation of all these things. A votary of ahimsa has, therefore, to be incorruptible, fair, and square in his dealings, truthful, straightforward, and utterly selfless. He must have, also, true humility.

—Gandhi

(A Gandhi Anthology, Bk I, p. 52)

इस कारण होता जो मानव व्रती-अहिंसा।
होता सो अभ्रष्ट व स्वार्थ-विगत, गत-हिंसा॥
ये सभी गाँधी जी के वचन हैं।

(क) [१]सर्व शक्तियाँ मेल अब चाहें त्याग कुटेव।
आइज़न हावर से मिले इसी हेतु क्रुश्चेव॥
इसी हेतु क्रुश्चेव मिले आइजन हावर से।
मल से मल न धुले सो जलसे ही पल भर में॥
हिंसा से हिंसा न, अहिंसा से हो खर्व।
गाँधी-सत्य-अहिंसा-शिक्षा-फल यह सर्व॥

(ख) आध्यात्मिक जगत में प्रबल रही है शक्ति
अहिंसा की, बात यह विदित है क्षिति में।
गाँधीजी ने राजनीति में किया प्रयोग इसे,
फल इसका स्वराज्य-प्राप्ति, समुन्नति में॥
नव साल से प्रयोग हो रहा है इसका जी,
सामाजिक-आर्थिक दशा की सुप्रगति में।

---

१. I hail the big Powers' efforts for peace, as a triumph for the message of "Satya and Ahimsa", which Mahatma Gandhi gave to the world. Violence cannot be removed by violence any more than dirt by dirt. As dirt was washed away by water, only non-violence could remove violence.

—Dr. Rajendra Prasad
(in his speech at Rajkot, on 29-9-59)

आज डाकुओं के बीच इसका हुआ प्रयोग,
अनुभव मिला जो न मिला वसुमति में[१] ॥

(ट) पिघलाये गये हृदय व वातावरण य
ईश की समचता से सकल है व्याप्त यहाँ।
डकैती को पेशा निज था बना लिया जिन्होंने,
पश्चात्ताप-सहित हैं आये नर वे यहाँ॥
त्याग दी है चाल उन्होंने पुरानी निज अब,
लखूँ, ईश-करामात उनके हृदय, हाँ।
ईश को ही धन्यवाद दूँ, विश्वास जिनमें ला,
प्रेम, दया और सत्य मार्ग में मैं जा रहा[२] ॥

मध्य प्रदेश में भिंड नगर के कई स्थानों पर, पैदल पहुँच कर आचार्य विनोबा भावे ने अपने को समर्पण करने के लिये आये हुए बीसों डाकुओं से वार्त्तालाप किया और इस प्रकार अपना भाव प्रकाशित किया। यह अपूर्व दृश्य फिल्म में भी दर्शाया जायगा[३]।

(ठ) हिंसा से थी अति घृणा वाल्मीकि को मीत[४] !।
व्यक्त हुई यह बात सुठि, "मा निषाद" के गीत ॥

१—२. Searchlight, 24.5.60

३. Acharya Vinoba Bhave will appear in the last scene of the film, which will include surrender of dacoits before him.

(Searchlight, 16-6-60)

४. मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः ।
यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ॥

"मा निषाद्" के गीत से हुआ स्फुट सद्भाव।
हुआ अहिंसा का अति अनुपम प्रादुर्भाव॥
आदि काव्य का आदि भाव था भरित-अहिंसा।
धन्य! आदि कवि सरिस अहिंसा-प्रिय! रिपु-हिंसा!॥

(ड) [1]मंद-मंद भूपर चलो, वरन चलो न सयान!।
कारण, हैं तव चरण-तल अजी! हजारों जान॥

बाप को जेल में ठूसने वाले और भाइयों को जान से मार डालने वाले बादशाह औरंगजेब का, अपनी मृत्यु-शय्या पर से, अपने पुत्र को इस प्रकार का पत्र लिखना यही सिद्ध करता है कि अंत समय में औरंगजेब जैसे व्यक्ति को भी अहिंसा का रहस्य सूझ पड़ा—

कोई चले हाथी-घोड़ा पालकी मँगाय के।
साधु चले भुइयें-भुइयें चूँटिया बचाय के॥

(३) एकता-प्रधान। यथा,

(क) कोई एक ग्रहण करे, राज्य-शक्ति भरपूर।
पर न परस्पर कलह हो, हों अनैक्य से चूर॥

द्वितीय गोलमेज सभा के समय महात्मा गाँधी की उक्ति।

(ख) सूक्ष्मातिसूक्ष्म निर्बल महान। जल के कण अंबर से सुजान!॥
गिरते धरती पर एक साथ। करते क्या-क्या किसको न ज्ञात?॥

गाँधीजी की उक्ति।

---

१. आहिस्ता खराम बल्के म खराम के ज़ेरे क़दमत हज़ार जान अस्त।

—रुक्क़ात आलम गीरी

(ग) [१]चढ़ती जवानी में, क़बल इसके कि हम
जानें राजनीति के विषय में तनिक भी।
हृदय की जातीय-सुएकता का स्वप्न हम
देखा करते थे, सुख लहते थे नित ही ॥
जीवन की संध्या में, बालक सम उछलेंगे
लखने को जीवन में स्वप्न सो हुआ सही।
जी रहे हैं और जीने की भी चाह है हमें, हाँ,
इससे न निम्नतर लक्ष्य के लिये, अजी ! ॥

ये वचन गाँधीजी के हैं।

(घ) ईश एक, न अनेक, कौन नहीं यह जानता।
धरो एक की टेक, चाहो ईश्वरता अगर ॥

(ङ) एक की संख्या सु-वंदनीय। दो की संख्या नित निंदनीय ॥
वह सु-ऐक्य का सूचक अमूल्य। यह अनैक्य का बोधक अतुल्य ॥
ऐक्य से प्रयाण प्रथम अधन्य। यह दो का अङ्क परम नगण्य ॥
है एक उस एक का स्वरूप। दो में माया का मंद रूप ॥

---

१. Before I ever knew anything of politics in my early youth, I dreamt of communal unity of the heart.
I shall jump, in the evening of my life, like a child, to feel that the dream has been realized in this life.
I live, and want to live for no lesser goal.

Gandhi
(Indian Nation, 23-10-59)

(च) सकल देव व त्रिदेव के दिव्य तेज की पुंज।
ऐक्य-संगठन-मूर्त्ति तू नित्यानंद-निकुंज॥
नित्यानंद-निकुंज देवि! निगमागम-वंदित।
दुर्गा! दुर्ग-विनाशिनि! शक्ति-स्वरूप! सर्वजित!॥
असुर-विमर्दिनि! सिंह-वाहिनी! अंब! अबल-बल!
गहें ऐक्य, उर-असुर दहें हम लहें सुख सकल!॥

२—स्वाधीनता-विषयक। यथा,

(क) [1]रश्मि-रस्सियों से पक्षी-कलनाद-युक्त जलनिधि से पूज्य।
कलस सरिस सविता को दिग्वधुगण न खींच यह रहे सु-पूज्य॥
सत्य-अहिंसा-गुण-गरिमा-बल औ आश्रम - कलरव - संयुक्त।
आँगल से यह स्वतंत्रता को खींच रहे गाँधी बल-युक्त॥
— दं० या०

(ख) प्रातः काल जगे जन, [2]जीवन खींच रहे कूपों से शुभ्र।
अपने-अपने [3]गुण-बल, ला-लाकर निज हृदय उमंग [4]अदभ्र।
खींच रहे हैं गाँधी भी [5]जीवन को अपने [6]गुण-बल आज।
अनुचर इव आँगल के [7]गह्वर हृदय-कूप से जन के काज॥
— दं० या०

(ग) ग्रह-मुक्त दिवाकर और निशाकर शुभ्र प्रभा-प्रतिभा-युत जैसे।
खग बंधन-हीन, विनोद-विलीन, यथेच्छ विहार करे नभ जैसे॥

---

१. किरण २ जल ३ रस्सी ४ अतिशय ५ स्वराज्य-रूप जल ६ सद्गुण रूप रस्सी ७ अथाह; अत्यंत गहरा; विकट।

रुज-हीन, सुस्वस्थ मनुष्य-शरीर स्वतंत्र सदा विहरे जग जैसे।
प्रिय ! पूर्ण स्वतंत्र, सुरोपम-शक्ति-समन्वित मानव है यह तैसे ॥

(घ) निगमागम नित यह कहें, बंधन मुक्ति दुराय।
दृग दे तुम देखो यहाँ, बंधन मुक्ति बुलाय ! ॥

(ङ) [1]पराधीन जन स्वप्न में भी न लहे सुख मीत ! ।
[2]परमेश्वर के तुल्य है नर स्वाधीन, अभीत ॥

३. स्वाधीनता-संरक्षण-विषयक। यथा,

[3]सत्य से परम विपरीत व्यवहार किया,
खोया राज्य अपना औ खोई जान अपनी।
भारत का राज्य गया औ सहस साल तक,
सालती रही त्रिशूल सम शूल सो घनी ॥
कालकूट सम फूट-ज्वाला व्यापी भारत में,
आत्मबल-ईशप्रेम-शून्यता हा ! आ तनी।
शत्रु ये महाप्रबल, बचो इनसे सतत,
चाहो जो सतत रहें स्वाधीनता के धनी ॥

१, पराधीन सपने सुख नाहीं। —रामायण

२. मन्ये ते परमेश्वरा शिरसि ये बद्धो न सेवाञ्जलिः।

३. जयचंद से अभिप्राय है।

विदेशी आक्रमण का मार्ग प्रशस्त हो गया इस अनैक्य की सुविधा लेकर। निकट के शत्रु घहराते हुए आ पहुँचे, समुद्र पार करके विदेशी शत्रु अपनी वाणिज्य-नौका लेकर। आ गये पुर्तगीज, आ गये डच लोग, आ गये फ्रांसीसी और आ पहुँचे अँग्रेज। (गांधी-मीमांसा, पृष्ठ १५)

—रवीन्द्रनाथ टैगोर

मिश्रित अलङ्कार

१. संसृष्टि—

तिल-तण्डुल न्याय से अनेक अलङ्कारों का एक साथ सुशोभित होना संसृष्टि अलङ्कार है। इसके तीन भेद हैं—(१) शब्दालङ्कार-गत (२) अर्थालङ्कार-गत और (३) उभयालङ्कार-गत।

(१) शब्दालङ्कार-गत अर्थात् शब्दालङ्कारों की एकत्र स्थिति। यथा,

(क) [१]अपने ही कर्त्तव्य में पाओ प्रभु को मित्र!।
बसता वह कर्त्तव्य में, है वह मंदिर चित्र॥

यहाँ क, प, व और म में वृत्त्यनुप्रास और 'वह' में यमक अलङ्कार हैं। ये भूषण में जटित मणियों अथवा तिल-तुण्डल अथवा फरही-फुटहे की तरह प्रत्यक्ष परिलक्षित होते हैं।

(ख) [२]सुकृति, कुकृति का एकदम रखता ठीक हिसाब।
नहीं अकौन्टैन्ट ईश से बढ़कर जगत जनाब!॥

यहाँ कृत,न्ट में छेकानुप्रास और अनेक वृत्त्यनुप्रास हैं।

---

१. Find God in work.

—Gandhi

२. God keeps an accurate record of all things, good and bad. There is no better accountant on earth.

—Gandhi

(Mohan-mala, January, 22)

(ग) [१] अजी ! शुद्ध-जीवन-इच्छुक मुझसे ले जान।
मूल खोदने में तनका बहुधा मतिमान ! ॥
भाव अशुद्ध प्रबल, पराक्रमी है उतना ही।
जितना कर्म अशुद्ध निरंतर अंतर - दाही ॥

यहाँ ज, म, प में वृत्त्यनुप्रास, शुद्ध में लाटानुप्रास और त र में छेकानुप्रास हैं।

(घ) सर - सर हंस न, न महाजन वंश-वंश,
[२]गज-गज मुक्ता न, न गिरि-गिरि सु-रतन।
तरु-तरु सुफल न, ताल-ताल कमल न
कानन-कानन वर औषधि अमृत - कण ॥
भवन - भवन नहीं नारी - रत्न पतिव्रता,
फणी-फणी मणि न, न स्वाति-जल घन-घन।
वन - वन मलय न, तन-तन सुमति न,
रण-रण शूर नहीं देश - रति जन - जन ॥

यहाँ अनेक वृत्त्यनुप्रास तथा वीप्सा अलंकार विद्यमान् हैं।

१, Let every aspirant after a pure life take from me that an impure thought is, often, as powerful in undermining the body as an impure act.

—Gandhi

(Mohan-mala by R. K. Prabhu, June 7)

२. शैले-शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे।
साधवो नहि सर्वत्र चंदनं न वने वने ॥

—चाणक्य-नीति

(ङ) [1]दुनिया को तुम दो बना प्रभु व पुण्य का राज।
पावोगे सब-कुछ तदा, सब-कुछ इसमें राज॥

यहाँ कई वृत्त्यनुप्रास, 'सबकुछ' में तात्पर्य-भेद से लाटानुप्रास और 'राज' में यमक हैं।

(च) [2]सिंहासन पर राज अजी तीव्र आवेश जब।
तर्क त्याग निज राज, सत्त्वर जाता भाग है॥

यहाँ वृत्त्यनुप्रास और यमक हैं।

(छ) [3]भारत! तू बनने चला गुरु दुनिया-संसार।
जितने गुरु-घंटाल याँ, पहले उन्हें सुधार॥

यहाँ कई वृत्त्यनुप्रास और 'गुरु' में लाटानुप्रास हैं।

(२) अर्थालङ्कार-गत अर्थात् अर्थालङ्कारों की एकत्र स्थिति। यथा,

---

१ Make this world the Kingdom of God and His Righteousness, and everything will be added unto you. —The Bible

२ When passion is on the throne, reason is out of doors

—M. Henry

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते।
तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि॥

—श्रीमद्भगवद्गीता, अ० २, श्लोक ६७

३ India is fitted for the religious supremacy of the world.

—Gandhi

(Light of India, P. 43)

(क) [१]नींव हिले गिरता यथा आलीशान मकान।
त्यों नैतिकता के हिले, गिरता धर्म महान॥

यहाँ तथा से उदाहरण और 'गिरता' की आवृत्ति से पदार्थावृत्ति दीपक अलङ्कार हैं।

(ख) [२]नैतिकता है बीज जल है धर्म विशाल बल।
नैतिकता नित छीज. धर्म सुभग सिंचन बिना॥

यहाँ अभेद रूपक और विनोक्ति अलङ्कार हैं। ये दोनों गाँधीजी के वचन हैं।

(ग) [३]गीता न केवल है कुरान, न बाइबुल मेरे लिये।
मेरे लिये माता, प्रबल यह धारणा मेरे हिये॥
वह जन्मदात्री माँ कभी को छोड़ कर मुझको गई।
इसने गहा शुभ स्थान उसका, तृप्ति देती नित नई॥
मेरा अटल विश्वास, जो अनुसरण करता है इसे।
मस्तिष्क से वह वृद्ध हो सकता कभी न कभी खसे॥
हाँ, काल पा मुर्झायगा उस मनुज का तन, शक नहीं।
मस्तिष्क पर उसका रहेगा नित युवा, ताजा, सही॥

यहाँ पूर्व की दो पंक्तियों में मालारूप अभेद रूपक, छठीं पंक्ति में देहली दीपक, एवं गीता उपमेय के उत्कर्ष तथा माता उपमान के अपकर्ष वर्णन से प्रथम व्यतिरेक अलङ्कार हैं।

१—२ Light of India, pp. 81-82

३ Light of India, pp. 231-2

गांधीजी की लिखी हुई "Geeta the Mother" एक पुस्तक भी है।

(घ) [1]हिंदुओं के चार वर्णों में विभाग का यद्पि
हूँ मैं पक्षपाती सदा, कहूं खोल के हृदय।
अस्पृश्यता गुनूँ घोर पाप मानवता प्रति,
नहीं आत्म-निग्रह, सुदंभ यह अतिशय ॥
हिंदू-धर्म में है यह अभिशाप-रूप और
धर्म-तत्त्व का है यह भक्षक निरतिशय।
जब लों न हम निज से करेंगे दूर इसे,
हिंदू-धर्म को ही है विनाश का महान भय ॥

यहाँ अस्पृश्यता में पाप के आरोप से अभेद रूपक, आरोप-पूर्वक निषेध से अपह्नुति, पुनः अस्पृश्यता में अभिशाप और भक्षक के आरोप होने से मालारूप अभेद रूपक और कार्यानुकूल फल प्राप्त न होकर अनिष्ट घटित होने से तृतीय विषम अलंकार हैं।

(ङ) शशि सदृश शीतल स्वभाव रखते हो स्वामी!।
हो तुम सूर्य प्रताप-तेज में अनुपम नामी!॥
अग्नि-रूप जन-दैन्य-दुःख दाहन में अतुलित!।
मनुज नहीं तुम हो त्रिदेव में कोई अविजित!॥

इसमें सदृश से आर्थी पूर्णोपमा, 'तुम' में सूर्य और अग्नि के आरोप होने से मालारूप अभेद रूपक और निषेध के अनन्तर आरोप से अपनहुति अलङ्कार हैं।

---

१. चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्म विभागशः।
तस्य कर्त्तारमपि मां विद्ध्यकर्तारमव्ययम् ॥
—श्रीमद्भगवद्गीता, अ० ४, श्लोक १३

(च) पुलिस यह पुरारी रूप है मित्र! मानो।
शिव-वपु यह पूरा शांति-आकार जानो॥
वर विटप महा है, लाल टोपी प्रसून।
अनल-छवि रखे सो, दुःख दाहे सु-पूर्ण॥

यहाँ 'पुलिस' में पुरारि, शिव-वपु, शांति-आकार और वट-विटप के आरोप होने से मालारूप अभेद रूपक और लाल टोपी में प्रसून के आरोप होने से अभेद रूपक और दुःख-दाहन का कारण-वर्णन से पदार्थगत काव्यलिंग अलङ्कार हैं।

(छ) अग्नि-परीक्षा वोट है, इसमें उतरे पार।
तो सच्चा औ सुजन सो, नहीं चुहाड़, लबार॥

इसमें अभेद रूपक और संभावना अलङ्कार हैं।

(३) उभयालङ्कार-गत अर्थात् उभयालङ्कारों की एकत्र स्थिति। यथा,

(क) [1]आंदोलन उनके लिये, इसे धारें निज मन।
किया जिन्होंने है समाप्त अपना अध्ययन॥

---

१ Agitation is only for those, who have completed their studies. While studying, the only occupation of students must be to increase their knowlededge.

A student's duty is to study the various problems that require solution. His time for action comes after he finishes his studies.

—Gandhi

(A Gandhi Anthology BK II p. 74)

पढ़ते समय स्व-ज्ञान-वृद्धि ही केवल कर्म।
विद्यार्थी-गण का न और कुछ उनका धर्म॥
विद्यार्थी-कर्त्तव्य है करें समस्या का मनन।
समय कार्य का तब, करें जब समाप्त निज अध्ययन॥

इसमें कई वृत्त्यनुप्रास, पदार्थावृत्ति दीपक और प्रथम सम अलङ्कार हैं। ये वचन गाँधी जी के हैं।

(ख) सत्य-प्रेम जो झुलस रहा ओ स्वतंत्रता-रति प्रेरक पुण्य।
बच सकता कोई इस जादू से न निकट आता जो धन्य॥
पामर में भी जग जाती है जीवन की प्रिय ज्योति अतुल्य।
मिट्टी में भी आ जाता है महिमा और महत्त्व अमूल्य॥
—दं० या०

यहाँ अनेक वृत्त्यनुप्रासों के अतिरिक्त म ह में छेकानुप्रास और समस्त पद्य में वाक्यार्थ-गत काव्यलिंग अलंकार हैं।

ये वचन महात्मा गाँधी के प्रति पंडित जवाहरलाल नेहरू के हैं।

(ग) माथ एक चार माथ ब्रह्मा के समान और
पाँच माथ शिव, छव माथ कार्त्तिकेय सम।
दृग दो दिगंबर के दृग तीन के समान,
भुज दो चतुर्भुज के सदृश सु-अनुपम॥
किंकर हैं कम तो न हानि इससे है कुछ,
सदृश सहस्रकर कर इनके परम।
ज्ञान और बुद्धि में हैं बुध, गुरु, शुक्र सम,
ये गाँधी सब विधि सब सुर के हैं संगम॥

यहाँ वृत्त्यनुप्रासों के अतिरिक्त भुज, कर और सबमें तात्पर्य भेद से लाटानुप्रास, माथ और दृग में पदार्थावृत्ति दीपक, समान, सम और सदृश से आर्थी पूर्णोपमा और गाँधी में सुर-संगम का आरोप होने से अभेद रूपक अलङ्कार हैं।

(घ) आँगल क्रोधानल रहा परशुराम सम घोर।
राम-गाँधि-आचरण-जल बुता सकल रण-रोर॥
बुता सकल रण-रोर [1]सिंह भागा रण तज के।
हिंसकता सब क्षीण, गहे उसने गुण अज के॥
चल न सका उसका अमोघ, अतुलित बल जाँगल।
मंजु आचरण से गाँधी के मर्दित आँगल॥

यहाँ कई वृत्त्यनुप्रासों के अतिरिक्त राम और रण में लाटानुप्रास, स क में छेकानुप्रास, राम-गाँधी और आचरण-जल में अभेद रूपक, सम से आर्थी पूर्णोपमा और कारण के अनुकूल कार्य होने से द्वितीय सम अलङ्कार हैं।

(ङ) [2]वानर की ही तीन मूर्त्तियाँ गाँधी-गुरु थीं।
आँख, कान, मुँह बंद रहीं, वे क्रमशः कहतीं—
लखो बुरा मत, सुनो बुरा मत अहो! कभी भी।
बोलो बुरा कभी मत, दीक्षाएँ थीं उनकी।
गाँधी ने इनको सदा पाला दृढ़ता से परम।
इनने ही प्रायः उन्हें किया महात्मा पूज्यतम॥

---

१. बृटिश सिंह

२. Light of India, pp. 243-4

यहाँ कई वृत्त्यनुप्रासों के अतिरिक्त गाँधी में लाटानुप्रास, मूर्त्तियों में गुरु, पुनः निषेध के वाक्यों में दीक्षाओं के आरोप होने से अभेद रूपक और द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ पंक्तियों में यथासंख्य अलङ्कार हैं।

(च) साले-साल सरस्वती की पूजा हो यार!!
तोभी साले सर्वदा सबके उर अँधियार॥
सबके उर अँधियार, ज्योति यद्यपि अति भ्राजे।
साल-साल दीपावलि-विद्युज्ज्योति विराजे॥
नरकासुर का प्रेत बुद्धि पर छाया डाले।
गाँधी-सुमति-सत्यभामा ही उसको साले।

यहाँ कई वृत्त्यनुप्रासों के अतिरिक्त साले-साल और साल-साल में वीप्सा, साले में यमक, दीपावली में विद्युज्ज्योति, नरकासुर में प्रेत और सुमति में सत्यभामा के आरोप होने से अभेद रूपक अलङ्कारों मी संसृष्टि है।

(छ) हर! थे तुम से करते जन नित्य निवेदन, गाँधी को रक्खो बचा।
हर प्राण अहो! तुमने उनके अति दारुण दुःसह दुःख रचा।
हरि! हाय! नहीं तुमने भी सुना, करि-मोक्षका शोर महान मचा।
हरि सदृश ही हर प्राण प्रभो! दृग पावस बारहो मास रचा!।

यहाँ कई वृत्त्यनुप्रासों के अतिरिक्त हर और हरि में यमक, सदृश से आर्थी पूर्णोपमा, तृतीय विषम एवं निर्णीयमाना संबंधातिशयोक्ति अलङ्कारों की संसृष्टि है।

(ज) हैं सत्य से हम तो हटे, हटते बराबर जा रहे।
पर नाम गांधी का बराबर यार! हम चिल्ला रहे॥

बस ठीक जैसे सत्य से नाता न रखते रंच भी।
ओ नाम नारायण रटें नित, धूम से पूजें अजी ! ॥

यहां ह ट मे छेकानुप्रास, र न में वृत्त्यनुप्रास, सत्य, बराबर और नाम में पदार्थावृत्ति दीपक और 'जैसे' से उदाहरण अलङ्कार हैं।

(म) ¹जग में जो कुछ है अजी ! सभी ईश से व्याप्त।
भोगो दे वह ईश जो, गहो न परका वित्त ॥

यहां वृत्त्यनुप्रासों के अतिरिक्त ईश में लाटानुप्रास और पूर्वार्द्ध में उत्तरार्द्ध का कारण होने से काव्यलिंग अलङ्कार हैं।

---

१. ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा: मा गृध: कस्यचिद्धनम्।

—ईशावास्योपनिषत्, प्रथम श्लोक

महात्मा गांधी इस वाक्य पर मंत्र-मुग्ध से थे। उन्होंने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है और यहां तक लिखा है कि श्रीमद्भगवद्गीता इस वाक्य की टिप्पणी-मात्र है और यदि हिंदुओं के सभी धर्म-ग्रंथ दुर्दैव-वश नष्ट हो जायँ तो केवल इस एक मंत्र के बल पर हिंदू-धर्म कायम रहेगा।

The Gita is a commentary on it.

—A Gandhi Anthology Bk II, P. 51

I have come to the final conclusion that if all the Upanishads and all other scriptures happened all of a sudden to be reduced to ashes, and if only the first verse in the Ishopanishad were left intact in the memory of the Hindus, Hinduism would live for ever.

—Light of India, P--86

(ञ) [1]'विष इव जो आरंभ और अमृत इव अंत।
सात्त्विक सुख सो, प्राप्त बुद्धि औ ज्ञान ज्वलंत॥
अमृत इव आरंभ, अंत में विष इव नाशे।
विषयेन्द्रिय से प्राप्त वही राजस सुख भासे॥
आदि-अन्त में मोहता आतमा को जो सर्वथा।
निद्रालस्य प्रमादभव सो सुख तामस, दे व्यथा॥

यहाँ वृत्त्यनुप्रासों के अतिरिक्त 'इव' से श्रौती पूर्णोपमा और 'सो' 'वही' और 'सो' में सात्त्विक सुख, राजस सुख और तामस सुख के आरोप होने से अभेद रूपक अलङ्कार है।

(ट) [2]अर्जुन सब के हृदय बीच वह ईश्वर छाया।
चाक चढ़ा इव माया से जन जाय घुमाया॥
उसकी ही बस शरण सर्व भावों से जाओ।
शांति व शाश्वत पद उसकी करुणा से पाओ॥

यहाँ वृत्त्यनुप्रासों के अतिरिक्त 'इव' से श्रौती पूर्णोपमा और पूर्वार्द्ध में उत्तरार्द्ध का कारण निर्देश से काव्यलिंग अलंकार है।

(ठ) [3]हो अनन्य चिंतन करे मम उपासना नित्य।
उस मुझ में नित निरत का क्षेम-भार मम चित्त॥

---

१ श्रीमद्भगवद्गीता, अ० १८, श्लोक ३७—३९
२ ,, ,, ,, ६१—२
उमा दारु जोषित की नाईं। सबहिं नचावत राम गुसाईं॥
—रामायण
३ अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्॥
—श्रीमद्भगवद्गीता, अ० ९ श्लोक २२

यहाँ वृत्त्यनुप्रासों के व्यतिरिक्त 'करे' में देहली दीपक, 'मम' में पदार्थावृत्ति दीपक और समस्त में द्वितीय सम अलङ्कार हैं।

(ड)—

दृग-हीन लखे, श्रुति-हीन सुने, पद-हीन चले, वह विश्व-विधायक।
कर-हीन करे सब काम सदा वच-हीन भखे जगका अधिनायक॥
मुख-हीन सभी रस पान करे, हिय-हीन द्रवे सुख-आनंद-दायक।
इस रूप, स्वरूप-विहीन महा, प्रिय रूप रखे, कहते गुण-गायक॥

इसमें वृत्त्यनुप्रासों के व्यतिरिक्त 'रूप' में लाटानुप्रास, 'हीन' में पदार्थावृत्ति दीपक, 'सदा' में देहली दीपक, अनेक क्रियाओं का एक कारक होने से कई स्थानों पर कारक दीपक, कारण के अभाव में कार्य के होने से प्रथम विभावना और चौथे चरण में विरोधाभास अलंकारों की संसृष्टि है।

(ढ) नव-यौवना अंगना, अलि-झंकार-युक्त द्रुम सारे।
विकसित नव मल्लिका, सुरभि-संयुत मंदानिल न्यारे॥
वर विवेक से मिटने पर तम-तोम, विमल अति होके।
मन यह उन्हें मृषा, मृगतृष्णार्णव इव अब अवलोके॥

—प्रबोधचंद्रोदय

यहाँ अनेक वृत्त्यनुप्रास, त म में छेकानुप्रास, नव में लाटानुप्रास और 'इव' से श्रौती पूर्णोपमा अलङ्कारों का मिश्रण है।

(ण) [1]करता उन्नति पाप से, करता रिपु का नाश।
किंतु मूल में मनुज वह करता आत्म-विनाश॥

---

१ By unrighteousness man prospers, gains what appears desirable, conquers enemies, but perishes at the root. —An Upanishadic saying.

यहाँ वृत्त्यनुप्रास, 'पाप से' में देहली दीपक, 'करता' में पदार्थावृत्ति दीपक और अनेक क्रियाओं का एक कारक होने से कारक-दीपक अलङ्कार हैं। यह उक्ति रवि बाबू को अति प्रिय थी,

(त) [1]आगे-पीछे का न विचार। जो मनुष्य का लक्षण यार!॥
[2]नहीं शुभाशुभ पर है दृष्टि। विनशे नर वह क्रम यह सृष्टि॥

यहाँ श भ, ष् ट् में छेकानुप्रास, व में वृत्त्यनुप्रास और सम्पूर्ण पद्य में द्वितीय सम अलङ्कार हैं।

(थ) प्रिय! विद्या धर्मेण शोभते, न कि अधर्म से।
सा विद्या या विमुक्तये, न कि बंधन जो दे॥
शिक्षक-शिष्य चलें विरुद्ध इनके बहुतेरे।
है उनके हा! शुभ्र शीश पर शामत घेरे॥

यहाँ वृत्त्यनुप्रासों के अतिरिक्त, धर्म में लाटानुप्रास, भाषा-समक, विद्या में पदार्थावृत्ति दीपक, लोकोक्ति और कार्यानुकूल फल प्राप्त न होकर अनिष्ट घटित होने से तृतीय विषम अलङ्कार हैं।

(द) [3]जग के हर नर, नारी औ बच्चे के अर्थ।
शांति और स्वातंत्र्य, प्रतिष्ठा, सुभग भविष्य॥

---

१ A man is he who looks before and after.
—Shakespeare

२ Where there is no vision, the people perish.
Old Testament

३ I shall do all I can, as one human working with other humans, to push forward towards peace, towards dignity, and a worthy future for every man and woman and child in the world. —Eisenhower
President, of America

को आगे ले जाने में ज्यों अन्य नरों सह।
करता है नर एक काम, दुःखों को भी सह॥
जितना बल-विक्रम मुझे, सभी लगा दूँगा, सुनें।
जीवन का यह लक्ष्य मम, इसे आप सज्जन गुनें॥

यहाँ अनेक वृत्त्यनुप्रासों के व्यतिरिक्त सह में यमक, ज्यों से उदाहरण और 'सभी लगा दूँगा' में जीवन के लक्ष्य का आरोप होने से अभेद रूपक अलङ्कार हैं।

(घ) 'सभी हितैषी देश के, करते चिंता व्यर्थ।
देश-आचरण किस तरह, सुधरे, दुरे अनर्थ॥
सुधरे, दुरे अनर्थ व्यर्थ इस अर्थ सु-चिंतित।
वेद-पुराणों से जो हुआ नहीं याँ सुकृत॥
संत-महात्माओं से फैला ज्ञान जो नहीं।
फिल्म कर रहा सो हर दूषित वृत्तियाँ सभी॥

यहाँ वृत्त्यनुप्रासों के अतिरिक्त 'देश' में पदार्था वृत्ति दीपक, 'सुधरे', 'दुरे अनर्थ' में अर्थावृत्ति और काकु वक्रोक्ति अलङ्कार हैं।

(in his speech in the Indian Parliament, on 10th December, 1959)

१ I condemm strongly the unhealthy influence of modern films, particularly on young minds. I deprecate the habit of young people going to bed after seeing films, and getting up late in the morning. This kind of soft life will sap their vitality. —Vinoba Bhave

6. 5. 60

(न) [1]निश्चिततम औ शीघ्रतम निन्दा-वारण मार्ग।
है निज दोष-निराकरण औ अनुकरण सुमार्ग॥

यहाँ कई वृत्त्यनुप्रास, त म और क र ण में छेकानुप्रास और मालारूप अभेद रूपक अलङ्कार हैं।

(प) कभी बड़ों के निकट में जायँ नहीं ये [2]राव।
छोटों को बस पकड़ कर दें मूँछों पर ताव॥

यहाँ वृत्त्यनुप्रास और प्रत्यनीक अलङ्कारों की संसृष्टि है।

(फ) मोहन गये तुरंत ही घेरा अघ ने आय।
[3]मोहन गये समुद्र ने ढकी द्वारका जाय॥

यहाँ वृत्त्यनुप्रासों के अतिरिक्त 'मोहन' में यमक, 'गये' में पदार्थावृत्ति दीपक और समस्त में दृष्टान्त अलङ्कार हैं।

(ब) शिक्षक ही सर्वत्र मनुज को मनुज बनाते।
शिक्षा से ही सभी सभ्य हों, सब सुख पाते॥
मान और मर्यादा, पद ऊँचे से ऊँचा।
लहे, गहे नर निज कर में संसार समूचा॥

---

१ The readiest and the surest way to get rid of censure is to correct ourselves.

—Demosthenes

२. बहादुर; भ्रष्टता-निवारण-विभाग (Anti-Corruption Department) के अफसरों से अभिप्राय है।

३. द्वारकां हरिणा त्यक्तां समुद्रोऽप्लावयत् क्षणात्।
वर्जयित्वा महाराज श्रीमद्भगवदालयम्॥

—श्रीमद्भागवत, स्कंध ११, अ० ३१, श्लोक २३

पै शिक्षक को लात ही दिखलाते शासक प्रवर।
वज्रपात ही नित करें पितृ-शीश पे शिष्टवर[१] ॥

यहाँ अनेक वृत्त्यनुप्रासों के अतिरिक्त 'मनुज' में यमक, स भ, ल त और प त में छेकानुप्रास, 'ऊँचा' में तात्पर्य-भेद से लाटानुप्रास और समस्त में कार्यानुकूल फल की प्राप्ति न होकर अनिष्ट घटित होने से तृतीय विषम अलङ्कार हैं।

हाई स्कूलों में पोस्टमैन से भी ग्रेजुएट शिक्षक की हीनतर दशा देखकर यह कहा गया है। बहुत जगह बहुत-बहुत खर्च किये जा रहे हैं—कहीं-कहीं पर निरर्थक भी—पर शिक्षकों का दुःख-दैन्य दूर करने में बराबर बीसों बहाने!

(भ) [२]शीर्षासन कर भूमि-दुःख सुन रहे सकल सो।
गगन ओर लोचन कर सुमिरें ईश विकल हो ॥
जिसका सिर ही गड़ा भूमि में इस विधि, विधि से।
समझ सके उसके प्रश्नों को वह सब विधि से ॥
देता उलटी बुद्धि यह, नहीं बुद्धि-संगत वचन।
पूज्य पतञ्जलि-बुद्धि पर वज्रपात है यह कथन ॥

---

१. इस संबध मे ये उक्तियाँ सार्थक प्रतीत होंगी—

I have found it impossible to soothe suffering patients with a song from Kabir. The hungry millions ask for one poem—invigorating food.

—Gandhi

(Light of India , p. 150)

भूखे भजन न होंहि भुआलू। —तुलसीदास

२ A man standing on his legs is likely only to see the sky, and not the earth. We are men of the earth,

यहाँ कई वृत्त्यनुप्रासों के व्यतिरिक्त स न, क ल और प न में छेकानुप्रास, 'भूमि' और 'बुद्धि' में तात्पर्य भेद के कारण लाटानुप्रास, 'विधि' में यमक, पहले की दो पंक्तियों में प्रथम सम, बाद की दो पंक्तियों में काव्यलिंग, और पाँचवीं पंक्ति में देहली दीपक अलङ्कार हैं।

(म) भूषण हीन व दूषण-पीन, विहीन सभी रस, रूपक महान।
क्षीण सभी गुण, भग्न व भीपण, जान पड़े यह शुष्क वितान ॥
पै प्रभु का, प्रभु के जन का, प्रिय भारत का उसमें गुण-गान।
तो कविता सुरकी वनिता सम षोड़श शुभ्र शृंगार की खान ॥

यहाँ अनेक वृत्त्यनुप्रासों के व्यतिरिक्त प् क में छेकानुप्रास, 'यह' में वितान का आरोप होने से अभेद रूपक, और सम से आर्थी पूर्णोपमा अलङ्कारों की संसृष्टि है।

---

and want earthly solutions of our problems. But Pandit Nehru is unable to do so, because he does "Shirshasana", and therefore, always takes a topsyturvy view of things.

—K. M. Munshi
(at the Patna Swatantra Convention,
Indian Nation, 21. 3. 60)

इस संबंध में जरा यह भी पढ़ लें—

धरती की भी अपनी कथा और व्यथा है, उसे सुनने और समझने वाले चाहिये।.........धरती के विशेषज्ञ कान लगाकर उसकी बात सुनते हैं, आत्म-विश्वास के साथ उसकी कमी को पूरा करते हैं और मनचीता अन्न उत्पन्न करते हैं।

(पटना विश्वविद्यालय इन्टरमिडियट हिंदी कम्पोजिशन प्रश्न-पत्र, १९६०—वार्षिक)

२. संकर

नीर-क्षीर न्याय से परस्पर मिले हुए अलङ्कारों की स्थिति संकर नाम से प्रसिद्ध है। इसके तीन भेद है—(१) अंगांगिभाव (२) संदेह और (३) एकवाचकानुप्रवेश।

(१) अंगांगिभाव अर्थात् जिसमें बीज और वृक्ष न्याय के अनुसार अनेक अलङ्कार एक दूसरे के अंग हों। यथा,

(क) तरु-काया तर राज यह छाया नहीं अचूक।
गाँधी-रवि-हत घोर ये पर-शासन-तम-टूक॥

यहाँ पर-शासन में तम का आरोप गाँधी में रवि के आरोप का कारण है। अतः यह परंपरित रूपक है। पुनः यह रूपक छाया में पर-शासन के टुकड़ों की अपह्नुति का एकमात्र अंग है। इस प्रकार रूपक अंग है और अपह्नुति अंगी।

(ख) पाकर परम स्वराज्य यह सुख-आनंद-निधान।
धर्म-धाम भारत-हृदय विकसित पद्म समान॥

यहाँ भारत-हृदय में रूपक हृदय और पद्म की अंगी उपमा का अंग है।

(२) संदेह अर्थात् अनेक अलङ्कारों के वर्तमान रहनेपर जहाँ यह निर्णय न हो सके कि यह कौन अलङ्कार है। यथा,

(क) [1]'यदि मैं इतना लंबा होता, जाता पहुँच गगन के छोर।
औ निज अञ्जलि में रख लेता अजी! महासागर अति घोर॥

---

[1] If I were tall as reach the skies,
And grasp the Ocean in my span,
I, yet, be measured by my mind;
The mind is the criterion of the man.
—An English poet

तोभी मैं मस्तिष्क से सदा मापा जाता इस जग बीच।
है मस्तिष्क मनुष्य का निकष, इससे ही हो ऊँच व नीच॥

यहाँ मनुष्य के प्रस्तुत वर्णन में भौतिक उन्नति के शिखर पर आरूढ़ परंतु दंभ-रत और आचार-भ्रष्ट अप्रस्तुत की ओर संकेत होने से यह समासोक्ति है अथवा चतुर्थ चरण में ऊपर के तीन चरणों का कारण-निर्देश से काव्यलिंग है, इस भाँति संदेह होनेसे यह संदेह अलङ्कार है।

(ख) जन हैं अति अंध कहाँ न कहो, दुख देंव न प्राणको लें जग बीच ?
शुभ भाव कहाँ बढ़के प्रभु ख्रीष्ट से, सूली चढ़ाया उन्हें नर नीच॥
उनके उरमें इस पै भी नहीं कटु भाव उगा, उर प्रेमसे सींच।
'वह बोले,' इन्हें भगवान ! क्षमाकर, जानेंनये निजकर्म कु-कीच"

पहली पंक्ति में वर्णन का दूसरी में दृष्टान्त होने से यह दृष्टान्त अलङ्कार है अथवा शुभ भाव के विपरीत सूलीपर चढ़ाये जाने के कारण तृतीय विषम अलङ्कार है अथवा उपमेय कर्म में उपमान कु-कीच का अभेद रूप से आरोप होने से रूपक अलङ्कार है अथवा 'सूली' और 'प्रेम' दो विरूप पदार्थों के मेल से प्रथम विषम है अथवा प्रस्तुत ख्रीष्ट की हत्या से अप्रस्तुत गाँधी की हत्या का ज्ञान होने से समासोक्ति है। इस प्रकार कई अलंकारों का संदेह होने से यह संदेह अलङ्कार है।

---

१ Forgive them Lord ! for they know not what they are doing. —Christ

(ग) [1]निज देश गौरव पर गड़ाये दृष्टि तुम प्रति दिन रहो।
जबतक न उसके प्रेम से परिपूर्ण उर तव हो अहो!॥
उसके सुगौरव-दृश्य से पूरे प्रभावित हो जभी।
सोचो य कृति उनकी, न जो कर्त्तव्य से विचले कभी॥

कारण के अनुकूल कार्य होने से 'सम' है या स्वाभाविक वर्णन होने से 'स्वभावोक्ति' है या भूत और भावी का प्रत्यक्ष की भाँति वर्णन होने से 'भाविक' है या कर्त्तव्य से न विचलनेवाले राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, गाँधी प्रमुख महापुरुषों का संबंध रहने से 'उदात्त' है या अप्रस्तुत कारण के वर्णन से प्रस्तुत कार्य की प्रतीति होने से 'अप्रस्तुत प्रशंसा' है। इस प्रकार अनेक अलङ्कारों का संदेह होने से यह संदेह अलङ्कार है।

(घ) राम! कृपा इतनी करें, यदि न अधिक हे नाथ!।
तुलसी औ गाँधी सरिस प्रकटें कवि, नर-नाथ॥
प्रकटें कवि, नर-नाथ अनन्य, अगण्य जगत में॥
पगे जगत प्रभु-भक्ति व सत्य-अहिंसा व्रत में॥
औ जिसमें हो प्रति नर का उद्धार ललाम।
लखन, भरत सम भायप व्यापे जग-अभिराम!।

---

१ I would have you day by day fix your eyes upon the greatness of your country, until you become filled with the love of her, and when you are impressed by the spectacle of her glory, reflect that it has been acquired by men, who knew their duty, and had the courage to do it,

—Pericles

तीसरी पंक्ति में चौथी पंक्ति का कारण निविष्ट होने से काव्यलिंग है या 'सत्य-अहिंसा' में व्रत का आरोप होने से अभेद रूपक है या 'सरिस' और 'सम' से आर्थी पूर्णोपमा है। इस प्रकार अनेक अलंकारों का संदेह होने से यह संदेह अलंकार है।

(३) एकवाचकानुप्रवेश अर्थात् नृसिंहाकार न्याय के अनुसार एक पद में दो वा दो से अधिक अलङ्कारों की स्थिति। यथा,

तव सु-अंघ्रि-अंभोज में भारत-भृंग अनूप।
निरत निरंतर ही रहे गाँधी! गिरिधर-रूप!॥

इसके पूर्वार्द्ध में अंघ्रि-अंभोज एक पद में वृत्त्यनुप्रास और रूपक दो अलङ्कार हैं। इसी प्रकार, भारत-भृंग में भी। उत्तरार्द्ध में गाँधी-गिरिधर में वृत्त्यनुप्रास और रूपक दो अलङ्कार हैं। इस भाँति एक पद में एक से अधिक अलङ्कार होने से यह एकवाचकानुप्रवेश अलङ्कार है।

अंत मंगल

गंधवाह कहलाय गाँधी कारण ही पवन।
पहले ही ललचाय धरा नाम यह, धन्य वे!॥
गाँधीमय सर्वत्र गंधवाह हो जगत में।
प्राणवायु हो अत्र राजे यह संतत प्रभो!॥

गाँधी-भूषण

अलङ्कारों में

महात्मा गाँधी के चरित्र का चित्रण

संस्कृत साहित्य का इतिहास, स्वदेश-सतसई, मनुष्य-सतसई, कांग्रेस-शतक, बाहुबलि-शतक, देश-दुर्दशा नाटक, हिंदी प्रबोध-चंद्रोदय, ज्ञान-गंगा (हिंदी जातकमाला) दुर्गा-सप्तशती (हिंदी पद्यानुवाद) डाहका फल (हिंदी 'ओथेलो'), हिंदू-सभ्यता, हिमालय (महाकाव्य), दंडी-यात्रा (खंडकाव्य) प्रभृति के लेखक और बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद् द्वारा वयोवृद्ध साहित्यिक सम्मान-पुरस्कार (१९५७) से सम्मानित

महेशचंद्र प्रसाद, एम० ए०

(संस्कृत तथा हिंदी), विद्याभूषण

द्वारा

प्रणीत और प्रकाशित

प्रथम संस्करण] शक १८८२ [मूल्य ३)